ग्रंथमाला नंबर ६ ठ्ठो. B.

श्रीमद्विजयानंदसूरि (आत्मारामजी महाराज)

विरचीत

श्री

जैनधर्म विषयिक प्रश्नोत्तर.

छपावी प्रसिद्ध करनार.

श्री जैन आत्मानंद सभा.

भावनगर.

आवृत्ति त्रीजी.

वीर संवत २४३५ आत्म सं. १४ वि. सं. १९६५

भावनगर—धी "विद्या विजय" प्रिन्टींग प्रेसमा

शाह पुरुषोत्तमदास गीगाभाइए छाप्युं.

कींमत आठ आना.

अर्पण पत्रिका.

स्वर्गवासी

शेठ नथमलजी गंभीरमलजी.

आपे नानी उमरमांथी [illegible]

व्यवहारिक कार्योमां प्रवेश करी स्वकसा-
इथी सारी रीते लक्ष्मी उपार्जन करी तेनो
धार्मिक कार्योमां लाखो रुपैया खरची
अनेक प्रकारे सदुपयोग करेल छे, आप
स्वभावे शांत दीर्घदर्शी हतां तेमज आपनुं
हृदय दया, परोपकार, अने स्वपरनुं भलुं

करवानी नावनाथी वासित हतुं, ते साथे आप गरीब मनुष्योना आधारभूत हता. एवा आपना परलोकवासी आत्माने नावमय शांति आपनारो आ लघु ग्रंथ आपना स्मरणीय हृदयमां आरोपित करी, तेनी प्रेरणा करनार आपना सुपुत्रोना कर्त-व्यने अनिनंदन आपी अमे अति आनंदित थइए छीये.

ली०

श्री जैन आत्मानंद सभा.

भावनगर.

प्रस्तावना.

परोपकारी महात्माओना लेखोनी महत्वता अपूर्व होय छे. तेना भोक्ता थवानो आधार तेना ग्राहकना अधिकार उपर रहे छे, एवा अपूर्व लेखोनुं रहस्य आदर पूर्वक अभ्यासथीज प्रगट थाय छे, अने तेनुं आदर पूर्वक श्रवण पठन अने मनन करवाथीज अने ते फळदायी नीवडे छे.

पवित्र जैन दर्शन जणावे छे के आ जगतमां अनादि कालथीज मिथात्व छे. जे मानवाने आपणने प्रत्यक्षादि कारणो मोजुद छे. आवा मिथ्यात्वना कारणरूप अज्ञानरुपी अंधकारनो नाश करवा परम उपकारी पूज्यपाद गुरू श्री विजयानंदसूरी (आत्मारामजी महाराजे) ए आ जैनधर्म विषयिक प्रश्नोत्तर नामनो ग्रंथ रच्यो छे. आ अने आ सिवायना बीजा आ महात्माए बनावेला ग्रंथो प्रथमथीज प्रशंसनीय थता आवेला छे.

आर्हत धर्मनी जे भावना तेमना मगजमां जन्म पामेली ते लेख रुपे बहार आवतांज आखी दुनीयाना पंडीतो-ज्ञानीओ धर्म गुरुओ-लेखको अने सामान्य लोको उपर जे असर करे छे तेज तेनी उपयोगीता दर्शाववाने बस छे.

जैनधर्म अनादि कालथीज छे, अने ते बौद्धधर्मथी तदन

अलग अने पेहेलाथीज छे, ते तेमज जैनमतना पुस्तकोनी उत्पत्ति-कर्मनुं स्वरुप-जीनप्रतिमानी पूजा करवानो तीर्थंकरोए करेलो उपदेश विगेरे बीजी केटलीक उपयोगी बाबतोनो आ ग्रंथमां समावेश करेलो छे.

वर्तमान कालमां व्यवहारिक केलवणी लीधेला युवको जेने जैनधर्मनुं तत्व शुं छे तेनाथी अजाण छे, तेओने तेमज अन्य धर्मीओने आ ग्रंथ आद्यंत वांचवाथी जैनधर्मनुं छुटुं छुटुं स्वरुप केटलेक अंशे मालम पडे तेम छे.

कोइपण निष्पक्षपाती तत्व जीज्ञासु पुरूष आ ग्रंथनुं स्वरुप आद्यंत अवलोकशेतो एक जैनना महान् विद्वाने भारतवर्षनी जैन प्रजा उपर आवा उत्तम ग्रंथो रची गहन उपकार कीधो छे.ते तेम जणाशे साथे आ विद्वान शिरोमणी महाशय पुरुष सांप्रत काले विद्यमान नथी तेने माटे अतुल खेद प्राप्त थशे.

छेवटे अमारे आनंद सहित जणाववुं पडे छे के मरहुम पूज्यपादना हृदयमां अनगार धर्मनी साथे परोपकारपणानी पवित्र छाया जे पडी हती ते छाया तेमना परिवार मंडलना हृदयमां उतरी छे. पोताना गुरुनुं यथाशक्ति अनुकरण करवाने ते शिष्य वर्ग त्रिकरण शुद्धिथी प्रवर्त्ते छे तेनी साथे विद्या, ऐक्यता स्वार्पण अने परोपकार बुद्धि तेमना शिष्य वर्गमां प्र-

त्यक्ष मूर्त्तिमान जोवामां आवे छे अने तेओ परम सात्विक होइ सर्वने तेवांज देखे छे, अने तेवाज करवा इच्छे छे अने तेओनुं जीवन गुरु भक्तिमय छे. आवा केटलाएक गुणोने लइने आवा महान् ग्रथोने प्रसिद्धिमां लावी जैन समुहमां मूकी जैनधर्मनुं अजवाळु पाडवा आ ग्रंथनी बीजी आवृत्ती करवानो समय आव्यो छे. जो के आ ग्रंथनी प्रथम आवृत्ति आजथी वीश वर्ष उपरसंवत् १९४९नी सालमां मरहुम गुरुराजनी संमत्तीथी राजे श्री गीरधरलाल हीराभाइ पालणपुर दरबारी न्यायाधीशे बाहार पाडी हती, परंतु तेनी एक नकल हालमां नहीं मळवाथी ते पूज्यपाद गुरुराजना परिवार मंडळनी आज्ञानुसार तेनी आ बीजी आवृत्ति अमोए बाहार पाडेली छे.

आवा उपयोगी महान् ग्रंथ अमारी सभा तरफथी बहार पडे तेमां अमोने मोटुं मान छे जेथी ते बाबतमां अमोने आज्ञा आपनार ए महान् गुरुराजना परिवार मंडळनो अमो उपकार मानवो आ स्थळे भूली जता नथी.

छेवटे आ ग्रंथनी प्रथम आवृत्ति प्रकट करावनार राजेश्री गीरधरलाल हीराभाइए अमारी सभा तरफथी बीजी आवृत्ति

प्रकट करवानी आपेल मान भरेली परवानगी माटे तेओनो पण उपकार मानीए छीए.

आ ग्रंथ छपावतां दरम्यान कच्छ मोटी खाखरना रेहेनार शेठ रणसीभाइ तेमज रवजीभाइ तथा नेणसीभाइ देवराजे तेनी सारी संख्यामां कोपीओ लेवानी इच्छा जणाववा थी आवा ज्ञान खाताना कार्यना उत्तेजनार्थे आ तेओए करेली मदद माटे अमो तेओने धन्यवाद आपीए छीए अने तेमां रवजीभाइ देवराजे खरीदेल बुको तमाम पोते पोता तरफ थी वगर कीमते आपवाना होवाथी तेमना आवा स्तुती भरेला कार्यने माटे अमोने वधारे आनंद थाय छे.

ग्रंथनी शुद्धता अने निर्दोषता करवानी सावधानी राख्या छतां कदी कोइ स्थले दृष्टी दोषथी के प्रमादथी भूल थयेली मालम पडे तो सुज्ञ पुरुषो सुधारी वांचशो अने अमोने लखी जणावशो तो तेओनो उपकार मानीशुं.

त्रीजी आवृत्तिनी प्रस्तावना

आ ग्रंथनी आ त्रीजी आवृत्ति छे. आ ग्रंथ नानो होवा छतां तेनी उपयोगीता अने महत्वता एटली वधी जणायेली छे के टुंक समयमां तेनी त्रीजी आवृत्ति करवाने सभा भाग्यशाळी थइ छे. आ टुंकी मुदतमां ग्रंथनी एक हजार नकल खपी जवाथी अने उपरा उपर तेनी मागणीओ आववाथी, सुधारा वधारा साथे सुंदर पाका वाइन्डींगथी आ त्रीजी आवृत्ति करवानो समय प्राप्त थयो छे. आ ग्रंथ एक महान विद्वान समर्थ नररत्न आचार्यमहाराज अने हिंदुस्ताननी जैन कोमना महान उपकारी श्रीमद्विजयानंदसूरि आत्मारामजी महाराज खुदनी कृतिनो होवाथी, ते दिवसानुदिवस वधारे प्रशंसनीय थतो आवतो होवाथी दरेक जैन बंधुओए अवश्य आवा ग्रंथना ग्राहक थइ ज्ञान खाताना कार्यने उत्तेजन आपवुं ए पोतानुं कर्त्तव्य छे.

वीर संवत २४३५
आत्म संवत १४
वी. संवत १९६५
ना बीजा श्रावणशुद
१ आत्मानंदभुवन.

श्री जैन आत्मानंद सभा
भावनगर.

जैन प्रश्नोत्तर.

अनुक्रमणिका.

॥ श्री अर्हं नमः ॥

श्री जैन धर्म विषयिक प्रश्नोत्तर

प्रश्न—जिन और जिनशासन इन दोनो शब्दोंका अर्थ क्याहै.

उत्तर—जो राग द्वेष क्रोध मान माया लोभ काम अज्ञान रति अरति शोक हास्य जुगुप्सा अर्थात् घ्रिणा मिथ्यात्व इत्यादि भाव शत्रुयोंको जीते तिसको जिन कहते है यह जिन शब्दका अर्थ है. ऐसे पूर्वोक्त जिनकी जो शिक्षा अर्थात् उत्सर्गापवादरूप मार्गद्वारा हितकी प्राप्ति अहितका परिहार अंगीकार और त्याग करना तिसका नाम जिनशासन कहतेहै. तात्पर्य यह हैकि जिनके कहे प्रमाण चलना यह जि-

नशासन शब्दका अर्थहै. अभिधान चिंतामणि और अनुयोगद्वार वृत्यादिमेंहै.

प्र. २—जिनशासनका सार क्याहै.

उ—जिनशासन और द्वादशांग यह एकही के दो नामहै इस वास्ते द्वादशांगका सार आचारंगहै और आचारंगका सार तिसके अर्थका यथार्थ जानना तिस जाननेका सार तिस अर्थका यथार्थ परकों उपदेश करना तिस उपदेशका सार यहकि चारित्र अंगीकार करना अर्थात् प्राणिवध १ मृषावाद २ अदत्तादान ३ मैथुन ४ परिग्रह ५ रात्रिभोजन ६ इनका त्याग करना इसकों चारित्र कहतेहै अथवा चरणसित्तरी के ७० सित्तर भेद और करण सित्तरिके ७० सित्तर भेद ये एकसौ चालीस १४० भेद मूलगुण उत्तरगुणरूप अंगीकार करे तिसकों चारित्र कहते है तिस चारित्रका सार

निर्व्वाणहै अर्थात् सर्व कर्मजन्य उपाधिरूप अग्निसें रहित शीतलीभूत होना तिसका नाम निर्व्वाण कहतेहै तिस निर्व्वाणका सार अव्याबाध अर्थात् शारीरिक और मानसिक पीडा रहित सदा निज सुख स्वरूपमे रहना यह पूर्वोक्त सर्व जिनशासनका सारहै यह कथन श्री आचारंगकी निर्युक्तिमेहै.

प्र. १—तीर्थंकर कौन होते है और किस जगे होतेहै और किस कालमें होतेहै.

उ.—जे जीव तीर्थंकर होनेके भवसें तीसरे भवमें पहिलें वीस स्थानक अर्थात् वीस धर्मके कृत्य करे तिन कृत्योंसे बडा भारी तीर्थंकरनामकर्मरूप पुन्य निकाचित उपार्जन करे तब तहांसे काल करके प्रायें स्वर्ग देवलोकमें उत्पन्न होतेहै तहांसें काल कर मनुष्य क्षेत्रमें बहुत भारी

रिद्धि परिवारवाले उत्तम शुद्ध राज्यकुलमें उत्पन्न होतेहै, जेकर पूर्व जन्ममें निकाचित्त पुन्यसें भोग्य कर्म उपार्जन करा होवे तबतो तिस भोग्य कर्मानुसार राज्य भोगविलास मनोहर भोगतेहैं, नही भोग्यकर्म उपार्जन करा होवे तब राज्यभोग नही करतेहै. इन तीर्थंकर होनेवाले जीवांको माताके गर्भमेंही तीन ज्ञान अर्थात् मति श्रुति अवधि अवश्यमेवही होते है; दीक्षाका समय तीर्थंकरके जीव अपने ज्ञानसेंही जान लेतेहै जेकर माता पिता विद्यमान होवें तबतो तिनकी आज्ञा लेके जेकर माता पिता विद्यमान नही होवें तब अपने भाइ आदि कुटुंबकी आज्ञा लेके दीक्षा लेनेके एक वर्ष पहिले लोकांतिक देवते आकर कहते है हे भगवान्! धर्म तीर्थ प्रवर्त्तावो. तद पीछे एक वर्ष पर्यंत तीनसौ कोटि अठ्यास्सी करोड

ऐसीलाख इतनी सोने मोहरें दान देके बडे म-
होत्सवसें दीक्षा स्वयमेव लेतेहै किसिकों गुरु
नही करतेहै क्योंकि वेतो आपही त्रैलोक्यके गुरु
होनेवालेहै और ज्ञानवंतहै तद पीछे सर्व पापके
त्यागी होके महा अद्भुत तप करके घातीकर्म चार
क्षय करके केवली होतेहै. तद पीछे संसार तारक
उपदेश देकर धर्मतीर्थके करनेवाले ऐसे पुरुष
तीर्थंकर होतेहै. उपर कहे हुए वीस धर्मकृत्योंका
स्वरूप संक्षेपसे नीचे लिखतेहै. अरिहंत १ सिद्ध
२ प्रवचन संघ ३ गुरु आचार्य ४ स्थविर ५ ब-
हुश्रुत ६ तपस्वी ७ इन सातों पदोंका वात्सल्य
अनुराग करनेसें इन सातोंके यथावस्थित गुण
उत्कीर्तन अनुरूप उपचार करनेसें तीर्थंकर नाम-
कर्म जीव बांधताहै इन पूर्वोक्त सातों अर्हंतादि
पदोंका अपने ज्ञानमें वारं वार निरंतर स्वरूप

चिंतन करे तो तीर्थंकर नामकर्म बांधे ७ दर्शन सम्यक्त्व ए विनय ज्ञानादि विषये १० इन दोनोकों निरतिचार पालेतो तीर्थंकर नामकर्म बांधे. जो जो संयमके अवश्य करने योग्य व्यापारहै तिसकों आवश्यक कहतेहै तिसमें अतिचार न लगावे तो तीर्थंकर नामकर्म बांधे ११ मूलगुण पांच महाव्रतमें और उत्तरगुण पिंड विशुद्ध्यादिक ये दोनो निरतिचार पाले तो तीर्थंकर नामकर्म बांधे १२ क्षण लव मूहुर्त्तादि कालमें संवेग भावना शुभ ध्यान करनेसें तीर्थंकर नामकर्म बांधताहै १३ उपवासादि तप करनेसें यति साधु जनकों उचित दान देनेसें तीर्थंकर नामकर्म बांधताहैं १४ दश प्रकारकी वैयावृत्य करनेसें तो० १५ गुरुआदिकांकों तिनके कार्य करणेसे गुरुआदिकोंके चित्त स्वास्थरूप समाधि उपजावनेसे

ती० १६ अपूर्व अर्थात् नवा नवा ज्ञान पढनेसें ती० १७ श्रुत जक्ति प्रवचन विषये प्रजावना करनेसें ती० १८ शास्त्रका बहुमान करनेसें ती० १९ यथाशक्ति अर्हडुपदिष्ट मार्गकी देशनादि करके शासनकी प्रजावना करे तो तीर्थंकर नामकर्म बांधेहै २० कोई जीव इन वीसों कृत्योंमे चाहो कोइ एक कृत्यसें तीर्थंकर नामकर्म बांधे है. कोइ दो कृत्योंसे कोइ तीनसे एवं यावत् कोइएक जीव वीस कृत्योंसें बांधेहै यह उपरका कथन ज्ञाता धर्मकथा १ कल्पसूत्र २ आवश्यकादि शास्त्रोंमेहै. और तीर्थंकर पांच महाविदेह पांच जरत पांच ऐरवत इन पंदरां क्षेत्रोंमें उत्पन्न होते है और इस जरतखंरूमें आर्य देश साढे पच्चीसमें उत्पन्न होतेहै वे देश २५॥ साढे पचवीस ऐसेहै.

उत्तर तर्फ हिमालय पर्वत और दक्षिण तर्फ

विंध्याचल पर्वत और पूर्व पश्चिम समुद्रांत तक इसको आर्यावर्त्त कहते है इसके बीचही साढे-पचवीस देशहै तिनमे तीर्थंकर उत्पन्न होतेहै यह कथन अभिधान चिंतामणि तथा पन्नवणाआदि शास्त्रोमेंहै. अवसर्पिणि कालके ६ आरे अर्थात् ६ हिस्से है तिनमे तीसरे चौथे विभागमे तीर्थंकर उत्पन्न होतेहै और उत्सर्पिणि कालके ६ विभागोमेंसें तीसरे चोथे विभागमे उत्पन्न होतेहै. यह कथन जंबुद्वीप प्रज्ञप्ति आदि शास्त्रोमेंहै.

प्र. ४—तीर्थंकर क्या करतेहै और तीर्थंकरोके गुणोका वरनन करो.

उ.—तीर्थंकर भगवंत बदलेके उपकारकी इछा रहित राजा रंक ब्राह्मण और चंडाल प्रमुख सर्व जातिके योग्य पुरुषांको एकांत हितकारक संसार समुद्रकी तारक धर्मदेशना करतेहै और

तीर्थंकर भगवंतके गुणतो इंद्रादिभी सर्व वरनन नही करसकेहै तो फेर मेरे अल्प बुद्धीवालेकी तो क्या शक्तिहै तोभी संक्षेपसें भव्यजीवांके जानने वास्ते थोमासा वरनन करतेहै. अनंत केवल ज्ञान १ अनंत केवल दर्शन २ अनंत चारित्र ३ अनंत तप ४ अनंत वीर्य ५ अनंत पांच लब्धि ६ क्षमा ७ निर्लोभता ८ सरलता ९ निरभिमानता १० लाघवता ११ सत्य १२ संयम १३ निरिछकता १४ ब्रह्मचर्य १५ दया १६ परोपकारता १७ राग द्वेष रहित १८ शत्रु मित्रभाव रहित १९ कनक पथर इन दोनो ऊपर सम भाव २० स्त्री और तृण ऊपर समभाव २१ मांसाहार रहित २२ मदिरा पान रहित २३ अभक्ष्य भक्षण रहित २४ अगम्य गमन रहित २५ करुणा समुद्र २६ सूर २७ वीर २८ धीर २९ अक्षोभ्य ३० परनिंदा रहित ३१

अपनी स्तुति न करे ३१ जो कोइ तिनके साथ विरोध करे तिसकोंभी तारनेकी इछावाले ३२ इत्यादि अनंत गुण तीर्थंकर भगवंतोमेहै सो कोइभी शक्तिमान नहीहै जो सर्व गुण कह सके और लिख सके.

प्र. ५—जैन मतमें जे क्षेत्र महाविदेहादि कहै तहां इहांका कोइ मनुष्य जा सक्ताहै कि नही.

उ.—नही जा सकताहै क्योंकी रस्तेमें वर्फ पाणी जम गयाहै और वडे वडे ऊंचे पर्वत रस्तेमेहै वडी वडी नदीयों और उजाड जंगल रस्तेमेहै अन्य बहुत विघ्नहै इस वास्ते नही जासक्ताहै.

प्र. ६—भरत क्षेत्र कोनसाहै और कितना लांबा चौडाहै.

उ.—जिसमें हम रहेतेहै यही भरतखंडहै इसकी चौडाइ दक्षिणसे उत्तर तक ५२६ कि-

चित् अधिक उत्सेधांगुलके हिसाबसें कोस होतेहै और वैताढ्य पर्वतके पास लंबाइ कुछक अधिक ९०००० नेवु हजार उत्सेधांगुलके हिसाबसें कोस होतेहै चीन रूसादि देश सर्व जैन मतवाले भरत खंडके बीचही मानतेहै यह कथन अनुयोगद्वा-रकी चूर्णि तथा अंगुल सत्तरी ग्रंथानुसारहै कित नेक आचार्य भरतखंडका प्रमाण अन्यतरेंके योजनोंसें मानतेहै परं अनुयोगद्वारकी चूर्णिकर्त्ता श्री जिनदासगणि क्षमाश्रमणजी तिनके मतकों सिद्धांतका मत नही कहतेहै.

प्र. ७—भरत क्षेत्रमें आजके कालसें पहिला कितने तीर्थंकर हूएहै.

उ.—इस अवसर्पिणि कालमें आज पहिलां चौवीस तीर्थंकर हूएहै जेकर समुच्चय अतीत का-लका प्रश्न पूछतेहो तब तो अनंत तीर्थंकर इस

भरतखंडमें होगएहै.

प्र. ८–इस अवसर्पिणि कालमें इस भरतखंडमें चौवीस तीर्थंकर हूएहै तिनके नाम कहो.

उ.–प्रथम श्री ऋषभदेव १ श्री अजितनाथ २ श्री संभवनाथ ३ श्री अभिनंदननाथ ४ श्री सुमतिस्वामी ५ श्री पद्मप्रभ ६ श्री सुपार्श्वनाथ ७ श्री चंद्रप्रभ ८ श्री सुविधिनाथ पुष्पदंत ९ श्री शीतलनाथ १० श्री श्रेयांसनाथ ११ श्री वासुपूज्य १२ श्री विमलनाथ १३ श्री अनंतनाथ १४ श्री धर्मनाथ १५ श्री शांतिनाथ १६ श्री कुंथुनाथ १७ श्री अरनाथ १८ श्री मल्लिनाथ १९ श्री मुनिसुव्रतस्वामी २० श्री नमिनाथ २१ श्री अरिष्टनेमि २२ श्री पार्श्वनाथ २३ श्री वर्द्धमानस्वामी महावीरजी २४ ये नामहै.

प्र. ९–इन चौवीस तीर्थंकरोंके माता पिताके नाम क्या क्याथे.

उ.—नाभि कुलकर पिता श्रीमरुदेवीमाता १ जितशत्रु पिता विजय माता २ जितारि पिता सेना माता ३ संवर पिता सिद्धार्थ माता ४ मेघ पिता मंगला माता ५ धर पिता सुसीमा माता ६ प्रतिष्ठ पिता पृथ्वी माता ७ महसेन पिता लक्ष्मणा माता ८ सुग्रीव पिता रामा माता ९ दृढरथ पिता नंदामाता १० विश्नु पिता विष्णुश्री माता ११ वसुपूज्य पिता जया माता १२ कृतवर्म्मा पिता श्यामा माता १३ सिंहसेन पिता सुयशा माता १४ भानु पिता सुव्रता माता १५ विश्वसेन पिता अचिरा माता १६ सूर पिता श्री माता १७ सुदर्शन पिता देवी माता १८ कुंभ पिता प्रभावती माता १९ सुमित्र पिता पद्मावती माता २० विजयसेन पिता वप्रा माता २१ समुद्रविजय पिता शिवा माता २२ अश्वसेन पिता

वामा माता २३ सिद्धार्थ पिता त्रिशला माता २४ ये चौवीस तीर्थंकरोके क्रमसें माता पिताके नाम जान लेने चौवीसही तीर्थंकरोके पिता राजेथे. वीसमा २० और बावीसमा ये दोनो हरिवंश कुलमे उत्पन्न हुएथे और गौतम गोत्री थे शेष २२बावीस तीर्थंकर ईक्ष्वाकुवंशमें उत्पन्न हुएथे और काश्यप गोत्री थे.

प्र. १०—श्री ऋषभदेवजीसें पहिला इस भरतखंडमे जैन धर्म था के नही.

उ.—श्री ऋषभदेवजीसे पहिला इस अवसर्पिणि कालमें इस भरतखंडमें जैनधर्मादि मतकाभी धर्म नहीथा इस कथनमे जैन शास्त्रही प्रमाणहै.

प्र ११—जेसा धर्म श्रीऋषभदेवस्वामीने चलायाथा तैसाही आज पर्यंत चलाआताहै

वा कुछ फेरफार तिसमें हुआहै.

उ.–श्रीऋषनदेवजीने जैसा धर्म चलायाथा तैसाही श्रीमहावीर नगवंते धर्म चलाया इसमें किंचित्मात्रनी फरक नहीहै सोइ धर्म आजकाल जैन मतमें चलताहै.

प्र.१२–श्री महावीरस्वामी किस जगें जन्मेथे और तिनके जन्म हुआंको आज पर्यंत १९४५ संवत तक कितने वर्ष हुएहै.

उ.–श्री महावीरस्वामी क्षत्रियकुंमग्राम नगरमें उत्पन्न हुएथे और आज संवत् १९४५तक २४८७ वर्षके लगनग हुएहै विक्रमसे ५४२ वर्ष पहिले चैत्र शुदि १३ मंगलवारकी रात्रि और उत्तराफाल्गुनि नक्षत्रके प्रथम पादमें जन्म हुआथा.

प्र.१३–क्षत्रियकुंमग्राम नगर किस जगेंथा.

उ.–पूर्व देशमें सूबेबिहार अर्थात् बहार ति-

सके पास कुंमलपुरके निजदीक अर्थात् पासहीथा.

प्र. १४—महावीर भगवंत देवानंदा ब्राह्मणीकी कूखमें किस वास्ते उत्पन्न हूये.

उ.—श्रीमहावीर भगवंतके जीवने मरीचीके भवमें अपने उंच्च गोत्र कुलका मद अर्थात् अभिमान कराथा तिस्सें नीच गोत्र बांध्याथा सो नीच गोत्रकर्म बहुत भवोंमें भोगना पमा तिसमेंसें थोमासा नीच गोत्र भोगना रह गयाथा तिसके प्रभावसें देवानंदाकी कूखमें उत्पन्न हुए और नीच गोत्र भोगा.

प्र. १५—तो फेर जेकर हम लोक अपनी जात और कुलका मद करे तो अछा फल होवेगा के नही; मद करना अछाहै के नही.

उ.—जेकर कोइभी जीव जातिका १ कुलको २ बलका ३ रूपका ४ तपका ५ ज्ञानका

६ लाभका ७ अपनी ठकुराइका ८ ये आठ प्रकारका मद करेगा सो जीव घणे भवां तक ये पूर्वोक्त आठही वस्तु अछी नही पावेगा अर्थात् आगेही वस्तु नीच तुछ मिलेगा इस वास्ते बुद्धिमान पुरुषकों पूर्वोक्त आठही वस्तुका मद करना अछा नहीहै.

प्र.१६—जितने मनुष्य जैनधर्म पालते होवे तिन सर्व मनुष्योंको अपने भाइ समान मानना चाहियेके नही. जेकर भाइ समान मानेतो तिनके साथ खाने पीनेकी कुछ अटकलहै के नही.

उ. जितने मनुष्य जैन धर्म पालते होवे तिन सर्वके साथ अपने भाइ करतांभी अधिक पियार करना चाहिये. यह कथन श्राद्ध दिनकृत्य ग्रंथमें है और तिनोंकी जातीयां जेकर लोक व्यवहार अस्पृश्य न होवें तदा तिनके साथ खाने

पीनेकी जैन शास्त्रानुसार कुछ अमचल मालुम नही होतीहै क्योंकि जब श्रीमहावीरजीसें ७० वर्ष पीछे और श्रीपार्श्वनाथजीके पीछे छठे पाट श्रीरत्नप्रभसूरिजीनें जब मारवाडके श्रीमाल नगरसें जिस नगरीका नाम अब भिन्नमाल कहतेहै तिस नगरसें किसी कारणसें भीमसेन राजेका पुत्र श्रीपुंज तिसका पुत्र उत्पलकुमर तिसका मंत्री ऊहड ए दोनो जणे १८ हजार कुटंब सहित निकलके योधपुर जिस जगेहै तिससें वीस कोसके लग भग उत्तरदिशिमे लाखों आदमीयोकी वस्ती रूप उपकेशपट्टन नामक नगर वसाया, तिस नगरमें सवालक्ष आदमीयांको रत्नप्रभसूरिने श्रावकधर्ममे स्थाप्या तिस समय तिनके अगरह गोत्र स्थापन करे तिनके नाम तातहड गोत्र १ वापणा गोत्र २ कर्णाट गोत्र ३ वलहरा

गोत्र ४ सोराक्ष गोत्र ५ कुलहट गोत्र ६ विरहट गोत्र ७ श्री श्रीमाल गोत्र ८ श्रेष्टि गोत्र ९ सुचिंती गोत्र १० आइचणाग गोत्र ११ भूरि गोत्र भटेवरा १२ भाद्र गोत्र १३ चीचट गोत्र १४ कुंभट गोत्र १५ डिंडु गोत्र १६ कनोज गोत्र १७ लघुश्रेष्टि १८ येह अठारही जैनी होनेसे परस्पर पुत्र पुत्रीका विवाह करने लगे और परस्पर खाने पीने लगे इनमेसें कितने गोत्रांवाले रजपूतथे और कितने ब्राह्मण और बनियेभी थे इस वास्ते जेकर जैन शास्त्रसें यह काम विरुद्ध होता तो आचार्य महाराज श्रीरत्नप्रभसूरिजी इन सर्वको एकठे न करते. इसी रीतीसें पीछे पोरवाड उसवालादि वंश थापन करे गये है, अन्य कोइ अडचलतो नहीहै परंतु इस कालके वैश्य लोक अपने समान किसी दूसरी जातिवालेको नही समझतेहै यह अडचलहै

प्र. २७—जैन धर्म नही पालता होय तिसके साथ तो खाने पीने आदिकका व्यवहार न करे परंतु जो जैन धर्म पालता होवे तिसकेसाथ उक्त व्यवहार होसके के नही.

उ.—यह व्यवहार करना न करना तो वणिये लोकोंके आधीनहै. और हमारा अभिप्राय तो हम ऊपरके प्रश्नोत्तरमें लिख आएहै.

प्र. १८—जैन धर्म पालने वालोंमें अलग अलग जाति देखनेमें आतीहै ये जैन शास्त्रानु-सार हैं के अन्यथाहै और ए जातियों किस वखतमे हूइहैं.

उ.—जैन धर्म पालने वाली जातियों शा-स्त्रानुसारे नही बनीहै, परंतु किसी गाम,नगर पुरुष धंधेके अनुसारे प्रचलित हूइ मालम पडती है. श्रीमाल उसवालकातो संवत् उपर लिख आ-

येहै और पोरवाड वंश श्रीहरिभद्रसूरिजीने मे-
वाड देशमें स्थापन करा और तिनका विक्रम
संवत् स्वर्गवास होनेका ५७५ का ग्रंथोमे लिखाहै
और जैपुरके पास खंडेला गामहै तहां वीरात्
६४३ मे वर्षे जिनसेनआचार्यने ७२ गाम रज-
पूतोकें और दो गाम सोनारोके एवं सर्व गाम
७४ जैनी करे तिनके चौरासी गोत्र स्थापन करे
सो सर्व खंडेलवाल बनिये जिनकों जैपुरादिक
देशोंमें सरावगी कहतेहै. और संवत् विक्रम २२७
मे हंसारसें दश कोशके फासलेपर अग्रोहा ना-
मक नगरका उजड टेकरा बडा भारीहै तिस
अग्रोहे नगरमें विक्रम संवत् २२७ के लगभग
राजा अग्रके पुत्रांको और नगरवासी कितनेही
हजार लोकांकों लोहाचार्यने जैनी करा, नगर उ-
जड हूआ. पीछे राजभ्रष्ट होनेसें और व्यापार व-

राज करनेसें अग्रवाल वनिये कहलाये. इसी तरे इस कालकी जैनधर्म पालनेवाली सर्व जातियां श्री महावीरसे ७० वर्ष पीछेसें लेके विक्रम संवत् १५७५साल तक जैन जातियें आचार्योंने वनाइहै तिनसें पहिलां चारोंही वर्ण जैन धर्म पालतेथे इस समयेकी जातियों नहीथी इस प्रश्नोत्तरमें जो लेख मैंने लिखाहै;सो वहुत ग्रंथोमें मैंने ऐसा लेख वांचाहै परंतु मैंने अपनी मनकल्पनासे नही लिखाहै.

प्र. १९ पूर्वोक्त जातियोंमेंसें एक जातिवाले दूसरी जातिवालोंसें अपनी जातिकों उत्तम मानतेहै और जातिगर्व करतेहै तिनकों क्या फल होवेगा.

उ.—जो अपनी जातिकों उत्तम मानतेहै यह केवल अज्ञानसें रूढी चली हूइ मालुम होती है क्योंके परस्पर विवाह पुत्र पुत्रीका करनां और

एक न्यातमें एकठे जीमणा और फेर अपने आपकों ऊंचा माननां यह अज्ञानता नहीतो दूसरी क्याहै. और जातिका गर्व करनेवाले जन्मांतरमें नीच जाति पावेंगे यह फल होवेगा.

प्र.१०—सर्व जैन धर्म पालनवालीयों वैश्य जातियां एकठी मिल जायें और जात न्यात नाम निकल जावे तो इस काममें जैनशास्त्रकी कुछ मनाइहै वा नहीं.

उ.—जैन शास्त्रमेंतो जिस कामके करनेसें धर्ममें दूषण लगें सो बातकी मनाइहै. शेषतो लोकोनें अपनी अपनी रूढीयों मान रखीहै ऊपरले प्रश्नोमें जब ऊसवाल बनाएथे तब अनेक जातियोकी एक जाति बनाइथी इस वास्ते अबभी कोइ सामर्थ पुरुष सर्व जातियोंको एकठी करे तो क्या विरोधहै.

प्र. ११—देवानंदा ब्राह्मणीकी कूखसे त्रिशला क्षत्रियाणीकी कूखमें श्रीमहावीरस्वामीको किसने और किसतरेंसें हरण किना.

उ—प्रथम देवलोकके इंद्रकी आज्ञासें तिसके सेवक हरिनगमेषी देवतानें संहरण कीना तिसका कारण यहहैकि कदाचित् नीच गोत्रके प्रभावसें तीर्थंकर होने वाला जीव नीच कुलमें उत्पन्न होवे परंतु तिस कुलमें जन्म नही होताहै इस वास्तै अनादि लोक स्थितिके नियमोसें इंद्र सेवक देवतासें यह काम करवाताहै.

प्र. १२—अपनी शक्तिसें महावीरस्वामी त्रिशलाकी कूखमें क्यों न गये.

उ.—जन्म, मरण, गर्भमें उत्पन्न होना यह सर्व कर्मके अधीनहै. निकाचित् अवश्य भोगे विना जेन दूर होवे ऐसे कर्मके उदयमे किसीकीभी

शक्ति नही चल सक्तिहै. और जो लोक इश्वराव-तार देहधारीकों सर्वशक्तिमान् मानतेहै सो निकेवल अपने माने ईश्वरकी महत्वता जनाने वास्ते. जेकर पक्षपात छोडके विचारीये तो जो चाहेसो कर सके ऐसा कोइभी ब्रह्मा, शिव, हरि, क्रायस वगेरे मानुष्योमे नही हूआहै. इनोंके कर्तव्योकी इनका पुस्तकें वांचीये तब यथार्थ सर्व शक्ति विकल मालुम होजावेंगे. इस कारणसें सर्व जीव अपने करे कर्माधीनहै इस हेतुसे श्रीमहावीर-स्वामी अपनी शक्तिसें त्रिशला माताकी कूखमें नही जासकेहै.

प्र.२३—महावीरस्वामीके कितने नामथे.

उ.—वीर १ चरमतीर्थंकृत २ महावीर ३ वर्द्धमान ४ देवार्य ५ ज्ञातनंदन ६ येह नामहै१ वीर बहुत सूत्रोमें नामहै१ चरमतीर्थकृत कल्पादि

प्र. २१—देवानंदा ब्राह्मणीकी कूखसें त्रिशला क्षत्रियाणीकी कूखमें श्रीमहावीरस्वामीको किसने और किसतरेंसें हरण किना.

उ—प्रथम देवलोकके इंद्रकी आज्ञासें तिसके सेवक हरिनगमेषी देवतानें संहरण कीना तिसका कारण यहहैकि कदाचित् नीच गोत्रके प्रभावसें तीर्थंकर होने वाला जीव नीच कुलमें उत्पन्न होवे परंतु तिस कुलमें जन्म नही होताहै इस वास्तै अनादि लोक स्थितिके नियमोंसें इंद्र सेवक देवतासें यह काम करवाताहै.

प्र. २२—अपनी शक्तिसें महावीरस्वामी त्रिशलाकी कूखमें क्यों न गये.

उ.—जन्म, मरण, गर्भमें उत्पन्न होनां यह सर्व कर्मके अधीनहै. निकाचित् अवश्य भोगे विना जेन दूर होवे ऐसे कर्मके उदयमे किसीकीभी

शक्ति नही चल सक्तिहै. और जो लोक इश्वराव-
तार देहधारीकों सर्वशक्तिमान् मानतेहै सो निके-
वल अपने माने ईश्वरकी महत्वता जनाने वास्ते.
जेकर पक्षपात छोडके विचारीये तो जो चाहेसो
कर सके ऐसा कोइभी ब्रह्मा, शिव, हरि, क्रायस
वगेरे मानुष्योमे नही हूआहै. इनोंके कर्तव्योकी
इनका पुस्तकें वांचीये तब यथार्थ सर्व शक्ति वि-
कल मालुम होजावेंगे. इस कारणसें सर्व जीव
अपने करे कर्माधीनहै इस हेतुसे श्रीमहावीर-
स्वामी अपनी शक्तिसें त्रिशला माताकी कूखमें
नही जासकेहै.

प्र.२३—महावीरस्वामीके कितने नामथे.

उ.—वीर १ चरमतीर्थंकृत २ महावीर ३
वर्द्धमान ४ देवार्य ५ ज्ञातनंदन ६ येह नामहै१
वीर बहुत सूत्रोंमें नामहै१ चरमतीर्थंकृत कल्पादि

सूत्रं १ महावीर २ वर्द्धमान यहता प्रासद्ध ब-
हुत शास्त्रोमें देवार्य, आवश्यकमें ज्ञातनंदन, ज्ञा-
तपुत्र, आचारंग दशाश्रुतस्कंधेद गहों एकठे हेमा-
चार्यकृत् अभिधानचिंतामणि नाममालामेंहै.

प्र. १४—श्रीमहावीरस्वामीका बडा भाइ
और तिनकी बहिनका क्या क्या नाम था.

उ.—श्रीमहावीरस्वामीके बडे भाइका नाम
नंदिवर्द्धन और बहिनका नाम सुदर्शना था.

प्र. १५—श्रीमहावीरके उपर तिनके माता
पिताका अत्यंत राग था के नही.

उ.—श्रीमहावीरके उपर तिनके माता पि-
ताका अत्यंत राग था क्योंकि कल्पसूत्रमें लिखा
है कि श्रीमहावीरजीने गर्भमे ऐसा विचार क-
राके हलने चलनेसें मेरी माता दुख पावेहै. इस
वास्ते अपने शरीरकों गर्भमेही हलाना चलाना

बंध करा. तब त्रिशला माताने गर्भके न चलनेसें मनमें ऐसें मानाके मेरा गर्भ चलता हलता नहीहै इस वास्ते गल गया है, तबतो त्रिशला माताने खान, पान, स्नान, राग, रंग, सब छोमके बहुत आर्त्त ध्यान करना शुरु करा, तब सर्व राज्यभवन शोकव्यास हुआ. राजा सिद्धार्थभी शोकवंत हुआ. तब श्रीमहावीरजीने अवधिज्ञानसें यह बनाव देखा तब विचार कराके गर्भमे रहे मेरे ऊपर माता पिताका इतना बमा भारी स्नेहहै तो जब में इनकी रूबरु दीक्षा लेऊंगा तो मेरे माता पिता अवश्य मेरे वियोगसें मर जाएगे, तब श्रीमहावीरजीने गर्भमेही यह निश्चय कराकि माता पिताके जीवते हुए मैं दीक्षा नही लेवुंगा.

प्र. २६—इन श्रीमहावीरजीका वर्द्धमान नाम किस वास्ते रखा गया.

उ.—जब श्रीमहावीरजी गर्भमें आये त-वसें सिद्धार्थराजाकी सप्तांग राज्य लक्ष्मी वृद्धि-मान् हुइ, तब माता पिताने विचाराके यह हमारे सर्व वस्तुकी वृद्धि गर्भके प्रभावसें हुइहै. इस वास्ते इस पुत्रका नाम हम वर्द्धमान रखेंगे; भ-गवंतके जन्म पीछे सर्व न्यात वंशीयोकी रूबरु पुत्रका नाम वर्द्धमान रक्खा.

प्र.२७—इनका महावीर नाम किसनें दीना.

उ.—परीषह और उपसर्गमें इनकों भारी मरणांत कष्ट तक हुए तोभी किंचित् मात्र अ-पना वीर्य और प्रतिज्ञासें नही चलायमान हुए है, इस वास्ते इंद्र, शक्र और भक्त देवतायोंने श्रीमहावीर नाम दीना. यह नाम बहुत प्रसिद्धहै.

प्र. २८—श्रीमहावीरकी स्त्रीका नाम क्या था और वह स्त्री किसकी बेटीथी.

उ.—श्रीमहावीरकी स्त्रीका नाम यशोदा था, और सिद्धार्थ राजाका सामंत समरवीरकी पुत्री थी, जिसका कौडिन्य गोत्र था.

प्र. २९—श्रीमहावीरजीने यशोदा स्त्रीके साथ अन्य राज्य कुमारोंकी तरे महिलोंमें भोग विलास कराथा.

उ.-श्री महावीरजीके भोग विलासकी सामग्री महिल बागादि सर्वथी. परंतु महावीरजी तो जन्मसेंही संसारिक भोग विलासोंसे वैराग्यवान् निस्पृह रहते थे; और यशोदा परणी सोभी माता पिताके आग्रहसें और किंचित् पूर्व जन्मोपार्जित भोग्य कर्म निकाचित भोगने वास्ते. अन्यथा तो तिनकी भोग्य भोगनेमे रति नही थी.

प्र. ३०—श्रीमहावीरजीके कोइ संतान हुआ था तिसका नाम क्याथा.

उ.—जब श्रीमहावीरजी गर्भमें आये त-
बसें सिद्धार्थराजाकी सप्तांग राज्य लक्ष्मी वृद्धि-
मान् हुइ, तब माता पिताने विचाराके यह हमारे
सर्व वस्तुकी वृद्धि गर्भके प्रभावसें हुइहै. इस
वास्ते इस पुत्रका नाम हम वर्द्धमान रखेंगे; भ-
गवंतके जन्म पीछे सर्व न्यात वंशीयोकी रूबरु
पुत्रका नाम वर्द्धमान रक्खा.

प्र.२७—इनका महावीर नाम किसनें दीना.

उ.—परीषह और उपसर्गसें इनकों भारी
मरणांत कष्ट तक हुए तोभी किंचित् मात्र अ-
पना वीर्य और प्रतिज्ञासें नही चलायमान हुए
है, इस वास्ते इंद्र, शक्र और भक्त देवतायोंने
श्रीमहावीर नाम दीना. यह नाम बहुत प्रसिद्धहै.

प्र. २८—श्रीमहावीरकी स्त्रीका नाम क्या
था और वह स्त्री किसकी बेटीथी.

तरे त्यागी रहे.

प्र.३२--महावीरजीका बेटीका किसके साथ विवाह करा था.

उ.—क्षत्रियकुंडका रहनेवाला कौशिक गोत्रिय जमालि नामा क्षत्रिय कुमारके साथ विवाह करा था.

प्र. ३३—श्रीमहावीरजीकों त्यागी होनेका क्या प्रयोजन था.

उ सर्व तीर्थंकरोका यही अनादि नियम हैकि त्यागी होके केवलज्ञान उत्पन्न करके स्व-परोपकारके वास्ते धर्मोपदेश करनां. तीर्थंकर अपने अवधिज्ञानसे देख लेतेहैकि अब हमारे संसारिक भोग्य कर्म नही रहाहै और अमुक दिन हमारे संसार गृहवास त्यागनेकाहै तिस दिनही त्यागी हो जातेहै. श्रीमहावीरस्वामीकी बाब-

उ.—एक पुत्री हुइथी तिसका नाम प्रिय-दर्शना था.

प्र. ३१—श्रीमहावीरस्वामी अपने पिताके घरमें मूलसें त्यागी वा भोगी रहेथे.

उ.-श्रीमहावीरजी २८ अठावीस वर्ष तक तो भोगी रहे पीछे माता पिता दोनो श्री पार्श्व-नाथजी २३ में तीर्थंकरके श्रावक श्राविका थे. वेह महावीरजीकी २८ मे वर्षकी जिंदगीमें स्वर्गवासी हुए पीछे श्री महावीरजीने अपने वडे भाइ राजा नंदिवर्द्धनकों दीक्षा लेनें वास्ते पूछा, तब नंदिवर्द्धनने कहाकी अवहीतो मेरे मातापिता मरेहै और तत्कालही तुम दीक्षा लेनी चाहतेहो यह मेरेकों बडा भारी वियोगका दुख होवेगा, इस वास्ते दो वर्ष तक तुम घरमे मेरे कहनेसे रहो, तब महावीरजी दो वरस तक साधुकी

तरे त्यागी रहै.

प्र.३२--महावीरजीका बेटीका किसके साथ विवाह करा था.

उ.—क्षत्रियकुंडका रहनेवाला कौशिक गोत्रिय जमालि नामा क्षत्रिय कुमारके साथ विवाह करा था.

प्र. ३३—श्रीमहावीरजीकों त्यागी होनेका क्या प्रयोजन था.

उ सर्व तीर्थंकरोका यही अनादि नियम हैकि त्यागी होके केवलज्ञान उत्पन्न करके स्व-परोपकारके वास्ते धर्मोपदेश करनां. तीर्थंकर अपने अवधिज्ञानसे देख लेतेहैकि अब हमारे संसारिक भोग्य कर्म नही रहाहै और अमुक दिन हमारे संसार गृहवास त्यागनेकाहै तिस दिनही त्यागी हो जातेहै. श्रीमहावीरस्वामीकी बाब-

तभी इसी तरें जान लेनां.

प्र. ३४—परोपकार करनां यह हरेक मनुष्यकों करनां उचितहै.

उ.—परोपकार करनां यह सर्व मनुष्योंकों करनां उचितहै, धर्मी पुरुषकोंतो अवश्यही करनां उचितहै.

प्र. ३५—श्रीमहावीरजीने किस वस्तुका त्याग करा था.

उ.—सर्व सावद्य योगका अर्थात् जीवहिंसा १ मृषावाद २ अदत्तादान ३ मैथुन स्त्री आदिकका प्रसंग ४ सर्व परिग्रह ५ इत्यादि सर्व पके कृत्य करने करावने अनुमतिका त्याग करा था.

प्र.३६—श्रीमहावीरजीने अनगारपणा कब लीनाथा और किस नगेमें लीनाथा और कितने वर्षकी उमरमें लीनाथा.

उ—विक्रमसें पहिलें ५१२ वर्षे मगसिर वदी दशमीके दिन पिछले पहरमे उत्तराफाल्गुनी नक्षत्रमें विजय मुहूर्त्तमें चंद्रप्रजा शिवकामें बैठके चार प्रकारके देवते और नंदिवर्द्धन राजा प्रमुख हजारों मनुष्योंसें परिवरे हुए नाना प्रकारके वाजित्र बजते हुए बमे जारी महोत्सवसें ज्ञात-वनषंम नाम बागमे अशोकवृक्षके हेठ जन्मसें तीस वर्ष व्यतीत हुए दीक्षा लीनीथी. मस्तकके केश अपने हाथसें लुंचन करे और अंदरके क्रोध, मान, माया, लोजका लुंचन करा.

प्र. ३७—श्री महावीरजीकों दीक्षा लेनेसें तुरत ही किस वस्तुकी प्राप्ति हुइथी.

उ.—चौथा मनःपर्यवज्ञान उत्पन्न हुआथा.

प्र. ३८—मनःपर्यवज्ञान जगवंतको गृहस्थावस्थामें क्युं न हुआ.

तभी इसी तरें जान लेनां.

प्र. ३४—परोपकार करनां यह हरेक मनुष्यकों करनां उचितहै.

उ.—परोपकार करनां यह सर्व मनुष्योंकों करनां उचितहै, धर्मी पुरुषकोंतो अवश्यही करनां उचितहै.

प्र. ३५—श्रीमहावीरजीने किस वस्तुका त्याग करा था.

उ.—सर्व सावद्य योगका अर्थात् जीवहिंसा १ मृषावाद २ अदत्तादान ३ मैथुन स्त्री आदिकका प्रसंग ४ सर्व परिग्रह ५ इत्यादि सर्व पके कृत्य करने करावने अनुमतिका त्याग कराथा.

प्र.३६—श्रीमहावीरजीने अनगारपणा कब लीनाथा और किस नगेमें लीनाथा और कितने वर्षकी उमरमें लीनाथा.

उ—विक्रमसें पहिलें ५१२ वर्षे मगसिर वदी दशमीके दिन पिछले पहरमें उत्तराफाल्गुनी नक्षत्रमें विजय मुहूर्त्तमें चंद्रप्रभा शिवकामें बैठके चार प्रकारके देवते और नंदिवर्द्धन राजा प्रमुख हजारों मनुष्योंसें परिवरे हुए नाना प्रकारके वाजित्र बजते हुए बडे भारी महोत्सवसें ज्ञातवनषंड नाम बागमें अशोकवृक्षके हेठ जन्मसें तीस वर्ष व्यतीत हुए दीक्षा लीनीथी. मस्तकके केश अपने हाथसें लुंचन करे और अंदरके क्रोध, मान, माया, लोभका लुंचन करा.

प्र. ३७—श्री महावीरजीकों दीक्षा लेनेसें तुरंत ही किस वस्तुकी प्राप्ति हुइथी.

उ.—चौथा मनःपर्यवज्ञान उत्पन्न हुआथा.

प्र. ३८—मनःपर्यवज्ञान भगवंतको गृहस्थावस्थामें क्युं न हुआ.

उ.—मनःपर्यवज्ञान निर्ग्रंथ संयमीकोंही होताहै अन्यत्र नही.

प्र. ३९—ज्ञान कितने प्रकारकेहै.

उ.—पांच प्रकारके ज्ञानहै.

प्र.४०—तिन पांचो ज्ञानके नाम क्या क्याहै.

उ.—मतिज्ञान १ श्रुतिज्ञान २ अवधिज्ञान ३ मनःपर्यवज्ञान ४ केवलज्ञान ५

प्र. ४१—इन पांचो ज्ञानोंका थोमासा स्वरूप कहो.

उ.—मतिज्ञान विनाही सुनेके जो ज्ञान होवे तथा चार प्रकारकी जो बुद्धिहै सो मतिज्ञानहै. इसके ३३६ तीनसौ छत्तीस भेदहै. जो कहसे सुननेमे आवे सो श्रुतिज्ञान है; तिसके १४ चौदह भेदहै. अवधिज्ञान सर्व रूपी वस्तुकों जाने देखे; तिसके ६ भेद है. मनःपर्यवज्ञान अ-

ढाइ द्वीपके अंदर सर्वके मन चिंतित अर्थको जाने देखे. तिसके दोय २ भेदहै. केवलज्ञान भूत, भविष्यत्, वर्त्तमानकालकी वस्तु सूक्ष्म बादर रूपी अरूपी व्यवध्यान रहित व्यवधान सहित दूर नेडे अंदर बाहिर सर्व वस्तुकों जाने, देखेहै; इस ज्ञानके भेद नहीहै. इन पांचो ज्ञानोका विशेष स्वरूप देखना होवे तो नंदिसूत्र मलयगिरि वृत्ति सहित वांचना वा सुन लेना.

प्र. ४१—श्रीमहावीरस्वामी अनगार हो कर जब चलने लगेथे तब तिनके भाइ राजा नंदिवर्द्धनने जो विलाप कराथा सो थोमासा श्लोकोमें कह दिखलावो.

उ.—त्वया विना वीर कथं व्रजामो। गृहेऽधुना शून्यवनोपमाने ॥ गोष्ठीसुखं केन सहाचरामो। भोक्ष्यामहे केन सहाथ बंधो ॥१॥

अस्यार्थः ॥ हे वीर तेरे एकलेको छोडके हम सूने वन समान अपने घरमें तेरे विना क्युंकर जावेंगे, अर्थात् तेरे विना हमारे राजमहिलमें हमारा मन जानेको नही करताहै, तथा हे बंधव तेरे विना एकांत बेठके अपने सुख दुःखकी वार्ता करन रूप गोष्ठी किसके साथ मैं करूंगा तथा हे बंधव तेरे विना म किसके साथ बैठके भोजन जीमुगा; क्योंके तेरे विना अन्य कोइ मेरा त्रिशलाका जाया भाइ नही है १ सर्वेषु कार्येषु च वीर वीरे ॥ त्यामंत्रणादर्शनतस्तवार्य। प्रेमप्रकर्षादभजाम हर्षं निराश्रयाश्चाथ कमाश्रयामः॥२॥ अर्थ॥ हे आर्य उत्तम सब कार्यके विषे वीरवीर ऐसे हम तेरेकों बुलातेथे और हे आर्य तेरे देखनेसे हम बहुत प्रेमसें हर्षकों प्राप्त होतेथे; अब हम निराश्रय होगयेहै, सो किसकों आश्रित

होवे, अर्थात् तेरे विना हम किसकों हे वीर हे वीर कहेंगे और देखके हर्षित होवेगे ॥१॥ अति: प्रियं बांधव दर्शनं ते ॥ सुधांजनं भाविक दास्मः दृष्णोः॥ नीरागचित्तोपि कदाचिदस्मान् ॥स्मरिष्यसि प्रौढगुणाभिराम ॥२॥ अस्यार्थः ॥ हे बांधव तेरा दर्शन मेरेकों अधिक प्रियहै, सो तुमारे दर्शन रूप अमृतांजन हमारी आंखोमें फेर कब पडेगा. हे महा गुणवान् वीर तूं निराग चित्तवाला है तोभी कदेक हम भिय बंधवांकों स्मरण करेंगा १ इत्यादि विलाप करेथे.

प्र. ४३—श्रीमहावीरस्वामी दीक्षा लेके जब प्रथम विहार करनें लगेथे तिस अवसरमें शक्रइंद्रनें श्रीमहावीरजीकों क्या विनती करीथी.

उ.—शक्रइंद्रने कहाकि हे भगवन् तुमारे पूर्व जन्मोंके बहुत असाता वेदनीयादि कठिन क-

र्मोंके बंधनहै तिनके प्रन्नावसें आपकों उद्मस्थाव-स्थामें वहुत न्नारी उपसर्ग होवेंगे जेकर आपकी अनुमति होवे तो मैं तुमारे साथही साथ रहुं और तुमारे सर्व उपसर्ग टालुं अर्थात् दूर करुं.

प्र. ४४—तव श्रीमहावीरजीने इंद्रको क्या उत्तर दीनाथा.

उ.—तव श्रीमहावीरजीने इंद्रकों ऐसें कहा के हे इंद्र यह वात कदापि अतीत कालमें नही हुइहै अवन्नी नहीहै और अनागत कालमे न्नी नही होवेगी के किसीन्नी देवेंद्र असुरेंद्रादिके साहाय्यसें तीर्थंकर कर्म क्षय करके केवलज्ञान उत्पन्न करतेहै; किंतु सर्व तीर्थंकर अपने २ प्राक्रमसें केवलज्ञान उत्पन्न करतेहै इस वास्ते हमन्नी दूसरेकी साहाय्य विना अपनेही प्राक्रमसें केवलज्ञान उत्पन्न करेंगे.

प्र. ४५—क्या श्रीमहावीरजीकी सेवामें इंद्रादि देवते रहते थे.

उ.—छद्मस्थावस्थामें तो एक सिद्धार्थनामा देवता इंद्रकी आज्ञासें मरणांत कष्ट दुर करने वास्ते सदा साथ रहता था, और इंद्रादि देवते किसि किसि अवसरमें वंदना करने सुखसाता पूछनें वास्ते और उपसर्ग निवारण वास्ते आते थे और केवलज्ञान उत्पन्न हूआ पीछे तो सदाही देवते सेवामें हाजर रहतेथे.

प्र. ४६—श्रीमहावीरजीने दीक्षा लीया पीछे क्या नियम धारण कराथा.

उ.—यावत् छद्मस्थ रहुं तावत् कोइ परीषह उपसर्ग मुझको होवे ते सर्व दीनता रहित अन्य जनकी सहायसें रहित सहन करुं. जिस स्थानमें रहनेसें तिस मकान वालेको अप्रीति उ-

त्पन्न होवे तो तहां नही रहेनां १; सदाही कायोत्सर्ग अर्थात् सदा खमा होके दोनो बाहां शरीरके अनलगती हुइ हेठकों लांबी करके पगोंमे चार अंगुल अंतर रखके थोमासा मस्तक नीचा नमावी एक किसी जीव रहित वस्तु उपर दृष्टि लगाके खमा रहुं ॥ २; गृहस्थका विनय नही करूंगा ३; मौन धारके रहुंगा ४; हाथमेही लेके भोजन करुंगा, पात्रमे नही ५. ये अभिग्रह नियम धारण करेथे.

प्र.४७—श्रीमहावीरस्वामीजीने छद्मस्थ कालमे कैसे कैसे परीग्रह परीषह उपसर्ग सहन करे थे तिनका संक्षेपसें ब्यान करो.

उ. प्रथम उपसर्ग गोवालीयेने करा १ शूलपाणिके मंदिरमें रहे तहां शूलपाणी यक्षने उपसर्ग करे ते ऐसे अट्टहासी करके मराया १

हाथीका रूप करके उपसर्ग करा २ सर्पके रूपसें ३ पिशाचके रूपसें ४ उपसर्ग करा. पीछे मस्तकमें १ कानमें २ नाकमें ३ नेत्रोंमें ४ दांतोमें ५ पुंठमें ६ नखमें ७ अन्य सुकुमार अंगोमें ऐसी पीमा कीनी के जेकर सामान्य पुरुष एक अंगमेंनी ऐसी पीमा होवे तो तत्काल मरण पावे, परं नगवंत नेतो मेरुकी तरें अचल होके अदीन मनसें सहन करे, अंतमे देवता थकके श्री महावीरजीका सेवक बना शांत हूआ. चंमकौशिक सर्पने मंक मारा परं नगवंततो मरा नही, सर्प प्रतिबोध हूआ. सुदंष्ट्र नागकुमार देवताका उपसर्ग संबल कंबल देवतायोंने निवारा. नगवंत तो कायोत्सर्गमें खमेथे. लोकोंने वनमे अग्नि बालि लोक तो चले गये पीछे अग्नि सूके घासादिकों बालती हूइ नगवंतके पगों हेठ आ गइ, तिस्से नगवंत

त्पन्न होवे तो तहां नही रहेनां १; सदाही कार्यो-त्सर्ग अर्थात् सदा खमा होके दोनो बाहां शरी-रके अनलगती हुइ हेठकों लांबी करके पगोंमे चार अंगुल अंतर रखके ओमाला मस्तक नीचा नमावी एक किसी जीव रहित वस्तु उपर दृष्टि लगाके खमा रहुं॥ २; गृहस्थका विनय नही क-रुंगा ३; मौन धारके रहुंगा ४; हाथमेही लेके भो-जन करुंगा, पात्रमे नही ५. ये अभिग्रह नियम धारण करेथे.

प्र.४७–श्रीमहावीरस्वामीजीने छद्मस्थ का-लमे कैसे कैसे परीग्रह परीषह उपसर्ग सहन करे थे तिनका संक्षेपसे बयान करो.

उ. प्रथम उपसर्ग गोवालीयेने करा १ शू-लपाणिके मंदिरमें रहे तहां शूलपाणी यक्षने उ-पसर्ग करे ते ऐसे अट्टहासी करके डराया १

हाथीका रूप करके उपसर्ग करा २ सर्पके रूपसें ३ पिशाचके रूपसें ४ उपसर्ग करा. पीछे मस्तकमें १ कानमें २ नाकमें ३ नेत्रोंमें ४ दांतोमें ५ पुंठमें ६ नखमें ७ अन्य सुकुमार अंगोमें ऐसी पीडा करी. के जेकर सामान्य पुरुष एक अंगमेंभी एसी पीडा होवे तो तत्काल मरण पावे, परं भगवंत. नेंतो मेरुकी तरें अचल होके अदीन मनसें सहन करें, अंतमे देवता थकके श्री महावीरजीका सेवक बना शांत हूआ. चंडकौशिक सर्पने डंक मारा परं भगवंततो मरा नही, सर्प प्रतिबोध हूआ. सुदंष्ट्र नागकुमार देवताका उपसर्ग संबल कंबल देवतायोंने निवारा. भगवंत तो कायोत्सर्गमें खडेथे. लोकोंने वनमे अग्नि बालि लोक तो चले गये पीछे अग्नि सूके घासादिकों बालती हूइ भगवंतके पगों हेठ आ गइ, तिस्सें भगवंत

के पग दग्ध हूए, परं भगवंतने तो कायोत्सर्ग छोडा नही. तहांही खडे रहे. कटपूतना देवीने माघमासके दिनोंमें सारी रात भगवंतके शरीरको अत्यंत शीतल जल छांटा, भगवंततो चलायमान नही हुए. अंतमे देवी थकके भगवंतकी स्तुति करने लगी. संगम देवताने एक रात्रिमें वीस उपसर्ग करे वे एसेहै भगवंतके उपर धूलिकी वर्षा करी जिस्सें भगवंतके आंख कानादि श्रोत वंद होनेसें स्वासोस्वाससें रहित हो गये तोभी ध्यानसे नही चले १ पीछे वज्रमुखी कीडीयों वनाके भगवंतका शरीर चालनिवत् सछिद्र करा २ वज्र चंचुवाले दंशोने वहु पीडा करी ३ तीक्ष्ण चंचुवाली घीमेल वनके खाया ४ विछु ५ सर्प ६ नकुल ७ मूषक ८ के रूपोसें डंक मारा और मांस भक्षण करा. हाथी ए हथणी १० वनके सूंड

दांतका घाव करा पग हेठ मर्दन करा तोजी न्न-गवंत वज्ररुषन्ननाराच नामक संहनन वाले होनेसे नही मरे. पिशाच वनके अट्टहास्य करा ११ सिंह बनके नख दाम्रायों से विदारया, फाम्या १२ सिद्धार्थ त्रिशलाका रूप करके पुत्रके स्नेहके विलाप करे १३ स्कंधावारके लोक बनाके न्नग-वंतके पगों जपर हांमी रांधी १४ चंमालके रू-पसें पंखियोंके पंजरे न्नगवंतके कान बाहु आ-दिमें लगाये तिन पक्षीयोंने शरीर नोंचा १५ पीछे खर पवनसें भगवंतको गेंदकी तरे उछाल २ के धरती जपर पटका १६ पीछे कालिका पवनें क-रके न्नगवंतको चक्रकी तरे घुमाया १७ पीछे चक्र मारा जिससें न्नगवंत जानु तक न्नूमिमें धस गये १८ पीछे प्रन्नात विकुर्वी कहने लगा विहार करो. न्नगवंत तो अवधिज्ञानसें जानतेथे के अबीतो रा-

त्रिहै १ए पीछे देवांगनाका रूप करके हाव ज्ञा-
वादि करके उपसर्ग दीना २० इन वीसों उपस-
र्गोंसें जब ज्ञगवंत किंचित् मात्रज्ञी नही चले तब
संगमदेवताने ठमास तक ज्ञगवंतके साथ रहके
उपसर्ग करे, अंतमें थकके अपनी प्रतिज्ञासें त्रष्ट
होके चला गया. अनार्य देशमें ज्ञगवंतको बहुत
परीसह उपसर्ग हुए. अंतमे दोनो कानोमें गोवा-
लीयोंने कांसकी सलीयो मारी तिमसें बहुत पीमा
हुइ सो मध्यम पावापुरी नगरीमे खरकवैद्य सि-
द्धार्थ नामा वाणियानें कांसकी सलीयों कानो-
मेंसे काढी ज्ञगवंत निरुपक्रमायुवाले थे इससें
उपसर्गोंमे मरे नही, अन्य सामान्य मनुष्यकी
क्या शक्तिहै, जो इतमे डुख होनेसें न मरे. वि-
शेष इनका देखना होवे तो आवश्यक सूत्रसें
देख लेना.

प्र. ४८—श्रीमहावीरस्वामीकों उपसर्ग हो-

नेका क्या कारण था.

उ.—पूर्व जन्मांतरोमें राज्य करणेसें अत्यंत पाप करे वे सर्व इस जन्ममेही नष्ट होने चाहिये इस वास्ते असाता वेदनीय कर्म निकाचितनें अपने फल रूप उपसर्गसें कर्म भोगय कराके दूर होगये, इस वास्ते बहुत उपसर्ग हुए.

प्र. ४९—श्रीमहावीरजीने परीषहे किस वास्ते सहन करे और तप किस वास्ते करा.

उ.—जेकर भगवंत परीषहे न सहन करते और तप न करते तो पूर्वोपार्जित पाप, कर्म, क्षय न होते, तबतो केवलज्ञान और निर्वाण पद ये दोनो न प्राप्त होते इस वास्ते परीषहे उपसर्ग सहन करे, और तपभी करा.

प्र. ५०—श्रीमहावीरजीने छद्मस्थावस्थामें तप कितना करा और भोजन कितने दिन कराथा.

उ.—इसका स्वरूप नीचलेयंत्रसे समझ लेनां.

छ मासी	छ मासी तप १	चार मासी	तीन मासी	अढाइ मास तप	दो मासी तप	डेढ मास तप	मास क्षपण तप	पखवाडीयातप
तप १	पांच दिन न्यून	९	२	२	६	२	१२	७२

भद्र प्रतिमा तप	महा भद्र तप	सर्वतो भद्र तप	छठ तप	अठम तप	सर्व पारणां	दिक्षा दिन	सर्व काल तप और पारणा एकत्र करै
दिन २	४	१०	२२९	१२	३४९	१	१२ वर्ष मास [illegible]

प्र. ५१—श्रीमहावीरजीकों दीक्षा लीये पीछे कितने वर्ष गये केवलज्ञान उत्पन्न हुआथा.

उ.—१२ वर्ष ६ मास उपर १५ पंदरा दिन इतने काल गये पीछे केवलज्ञान उत्पन्न हुआथा.

प्र. ५२—श्रीमहावीरजीकों केवलज्ञान कैसी अवस्थामें और किस जगें, उत्पन्न हुआथा.

उ.—वैशाक शुदि १० दशमीके दिन पिछले चौथे पहरमें जृंभिक गाम नगरके बाहिर ऋजुवालुका नामे नदीके कांठे उपर वैयावृत्त नामा व्यंतर देवताके देहरेके पास श्यामाक नामा गृहपतिके खेतमें साल वृक्षके नीचे गाय दोहनेके अवसरमें जैसें पगथलीयोंके भार बैठतेहै तैसें उत्कटिका नाम आसने बैठे आतापना लेनेकी जगें आतापना लेते हुए, तिस दिन दूसरा उपवास छठ भक्त पाणि रहित करा हुआथा. शुक्ल ध्यानके

दूसरे पादमे आरूढ हुआकों केवलज्ञान हुआथा.

प्र. ५३—भगवंतकों जब केवलज्ञान उत्पन्न हुआ था तब तिनकी कैसी अवस्था हुइथी.

उ.—सर्वज्ञ सर्वदर्शी अरिहंत जिन केवली रूप अवस्था हुइथी.

प्र. ५४—भगवंतकी प्रथम देशनासें किसीकों लाभ हुआथा.

उ.—नही ॥ सुनने वालेतो थे, परंतु किसीकों तिस देशनासें गुण नही उत्पन्न हुआ.

प्र. ५५—प्रथम देशना खाली गइ तिस बनावकों जैन शास्त्रमें क्या नाम कहतेहै.

उ.—अछेराभूत अर्थात् आश्चर्यभूत जैन शास्त्रमें इस बनावका नाम कहाहै.

प्र. ५६—अछेरा किसकों कहतेहै.

उ.—जो वस्तु अनंते काल पीछे आश्चर्य-

कारक होवे तिसकों अछेरा कहतेहै, क्योंकि को-इन्नी तीर्थंकरकी देशना निष्फल नही जातीहै और श्रीमहावीरजीकी देशना निष्फल गइ, इस वास्ते इसको अछेरा कहतेहै.

प्र.५७—श्रीमहावीरजी तो केवलज्ञानसें जानते थे कि मेरी प्रथम देशनासें किसीकोंन्नी कुछ गुण नही होवेगा, तो फेर देशना किस वास्ते दीनी.

उ.—सर्व तीर्थंकरोंका यह अनादि नियम है कि जब केवलज्ञान उत्पन्न होवे तब अवश्यही देशना देते है तिस देशनासें अवश्यमेव जीवांकों गुण प्राप्त होताहै, परं श्रीवीरकी प्रथम देशनासें किसीको गुण न हुआ, इस वास्ते अछेरा कहाहै.

प्र. ५८—श्रीमहावीर न्नगवंते दूसरी देशना किस जगें दीनीथी.

उ.—जिस जगें केवलज्ञान उत्पन्न हुआथा

तिस जगासें ४० कोसके अंतरे अपापा नामा, नगरी थी, तिससें इशान कोनमे महासेन वन नामे उद्यान था तिस वनमें श्रीमहावीरजी आए, तहां देवतायोने समवसरण रचा. तिसमें बैठके श्रीमहावीर भगवंते देशना दूसरी दीनी.

प्र. ५९—दूसरी देशना सुनने वास्ते तहां कोन कोन आये थे और तिस दूसरी देशनामें क्या बमा भारी बनाव बना था और किस किसनें दीक्षा लीनी, और भगवंतके कितने शिष्य साधु हूए, और बमी शिष्यणी कोन हूइ.

उ.—चार प्रकारके देवता और चार प्रकारकी देवी मनुष्य, मनुष्यणो इत्यादि धर्म सुननेकों आये थे.

भगवंतकी देशना सुनके वहुत नर नारी अपापा नगरीमें जाके कहने लगे आजतो हमारी

पुन्यदशा जागी जो हमने सर्वज्ञके दर्शन करे, और तिसकी देशना सुनी हमने तो ऐसी रचनावाला सर्वज्ञ कदेइ देखा नही; यह बात नगरमें विस्तरी तिस अवसरमें तिस अपापा नगरीमें सोमल नामा ब्राह्मणनें यज्ञ करनेका प्रारंभ कर रक्खा था, तिस यज्ञके करानेवाले इग्यारें ब्राह्मणोंके मुख्याचार्य बुलवाये थे, तिनके नामादि सर्व ऐसें थे. इंद्रभूति १ अग्निभूति २ वायुभूति ३ ये तीनो सगे भाइ, गौतम गोत्री, इनका जन्म गाम मगधदेशमें गोर्बरगाम, इनका पिता वसुभूति, माताका नाम पृथिवी, क्रमसे तीनोकी गृहवासमें क्रमसे ५० । ४६ । ४२ । वर्षकी इनके विद्यार्थी ५०० पांचसे चतुर्दश विद्याके पारगामी चौथा अव्यक्त नाम। १ भारद्वाज गोत्र २ जन्मगाम कोल्लाक सन्निवेश ३ पिताका नाम धनमि-

त्र ४ माता वारुणी नामा ५ गृहवास उमर ५० वर्षकी ६ विद्यार्थी ५०० सौ ७ विद्या १४ का ज्ञान ८. पाचमा सुधर्म नामा १ अग्निवैश्यायन गोत्री २ जन्म गाम कोल्लाक सन्निवेश ३ पिता धम्मिल ४ भद्दिला माता ५ गृहवास ५० वर्ष ६ विद्यार्थी ५०० सौ ७ विद्या । १४ । ८. छठा मंडिकपुत्र नाम १ वाशिष्ठ गोत्र २ जन्म गाम मौर्य सन्निवेश ३ पिता धनदेव ४ माता विजयदेवा ५ गृहवास ६५ वर्ष ६ विद्यार्थी ३५० सौ ७ विद्या । १४ । ८. सातमा मौर्य पुत्र नाम १ काश्यप गोत्र २ जन्म गाम मौर्य सन्निवेश ३ पिता मौर्य नाम ४ माता विजयदेवा ५ गृहवास ५३ वर्ष ६ विद्यार्थी ३५० सौ ७ विद्या । १४ । ८. आठमा अकंपित नाम १ गौतम गोत्र २ जन्म गाम मिथिला ३ पिता नाम देव ४ माता जयंती ५ गृ-

हवास ४० वर्ष ६ विद्यार्थी ३०० सौ, विद्या १४। ०. नवमा अचलभ्राता नाम १ गोत्र हारीत २ जन्म गाम कोशला ३ पिता नाम वसु ४ नंदा माता ५ गृहवास ४६ वर्ष ६ विद्यार्थी ३०० सौ, विद्या १४। ०. दसमेका नाम मेतार्य १ गोत्र कौंडिन्य २ जन्म गाम कौशला वत्स भूमिमे ३ पिता दत्त ४ माता वरुणदेवा ५ गृहवास ३६ वर्ष ६ विद्यार्थी ३०० तीनसौ ७ विद्या १४। ०. इग्यारमा प्रभास नामा १ गोत्र कौंडिन्य २ जन्म राजगृह ३ पिता बल ४ माता अतिभद्रा ५ गृहवास १६ वर्ष ६ विद्यार्थी ३०० सौ ७ विद्या १४। ०. इस स्वरूप वाले इग्यारे मुख्य ब्राह्मण यज्ञपाडेमें थे तिनोके कानमें पूर्वोक्त शब्द सर्वज्ञकी महिमाका पड़ा, तब इंद्रभूति गौतम अभिमानसें सर्वज्ञका मान भंजन करने वास्ते भगवंतके

पास आया। तिनकों देखके आश्चर्यवान् हुआ; तब भगवंतने कहा हे इंद्रभूति गौतम तुं आया, तब गौतम मनमें चिंतने लगा मेरे नाम लेनेसें तो मै सर्वज्ञ नही मानुं, परं मेरे हृदयगत संशय दूर करे तो सर्वज्ञ मानुं. तब भगवंतने तिनके वेद पद और युक्तिसे संशय दूर करा. तब ५०० सौ छात्रा सहित गौतमजीने दीक्षा लीनी, ए बडा शिष्य हुआ. इसी तरे इग्यारेहीके मनके संशय दूर करे और सर्वने दीक्षा लीनी. सर्व ४४०७ सौ इग्यारे अधिक शिष्य हुए. इग्यारोंके मनमें जीवहै के नही १ कर्महैके नही २ जो जीवहै सोइ शरीरहै वा शरीरसे जीव अलग है ३ पांच भूतहै वा नही ४ जैसा इन जन्ममे जीवहै जन्मांतरमें ऐसाही होवेगा के अन्य तरंका होवेगा ५ मोक्ष है के नही ६ देवते है के नही ७ नारकीहैके नही ८ पुन्य

है के नही ए परलोक है के नही १० मोक्षका उ-
पाय है के नही ११. इनके दूर करनेका संपूर्ण क-
थन विशेषावश्यकमे है. तिस दिनही चंपाके राजा
दधिवाहनकी पुत्री कुमारी ब्रह्मचारणी चंदनबा-
लाने दीक्षा लीनी. यह वमी शिष्यणी हुइ. इसके
साथ कितनीही स्त्रीयोंने दीक्षा लीनी. दूसरी दे-
शनामे यह बनाव बनाथा.

प्र. ६०—गणधर किसकों कहतेहै.

उ.—जिस जीवनें पूर्व जन्ममें शुभ करणी
करके गणधर होनेका पुन्य उपार्जन करा होवे
सो जीव मनुष्यजन्म लेके तीर्थंकरके साथ दीक्षा
लेताहै अथवा तीर्थंकर अर्हतको जब केवलज्ञान
होताहै तिनके पास दीक्षा लेताहै, और वमा शि-
ष्य होताहै; तीर्थंकरकें मुखसें त्रिपदी सुनके ग-
णधर लब्धिसें चौदहे पूर्व रचताहै और चार ज्ञा-

नका धारक होताहै. तिसकों तीर्थंकर भगवंत गणधर पद देतेहै और साधुयोंके समुदायरूप गणकों धारण करता है, तिसकों गणधर कहतेहै.

प्र.६१—श्रीमहावीरजीके कितनेगणधर हुएथे.

उ.—इग्यारें गणधर हुए थे, तिनके नाम उपर लिख आएहै.

प्र. ६२—संघ किसकों कहतेहै.

उ.—साधु १ साध्वी २ श्रावक ३ श्राविका ४ इन चारोंकों संघ कहतेहै.

प्र. ६३—श्रीमहावीर भगवंतके संघमें मुख्य नाम किस किसका था.

उ.—साधुयोंमे इंद्रभूति गौतम स्वामी नाम प्रसिद्ध १ साधवीयोंमं चंपा नगरीके दधिवाहन राजाकी पूत्री साध्वी चंदनबाला २ श्रावकोंमें मुख्य श्रावस्ति नगरीके वसनेवाले संख १ शतक

२ श्राविकायोंमें सुलसा ३ रेवती ४ सुलसा राज-
गृहके प्रसेनिजित राजाका सारथी नाग तिसकी
ज्ञार्या; और रेवती मेंढिक ग्रामकी रहनेवाली
धनाढ्य गृहपत्नी थी.

प्र. ६४–श्रीमहावीरस्वामीनें किस तरेंका
धर्म प्ररूप्या था.

उ.–सम्यक्तपूर्वक साधुका धर्म और श्राव-
कका धर्म प्ररूप्या था.

प्र. ६५—सम्यक्त पूर्वक किसकों कहतेहै.

उ.–ज्ञगवंतके कथनकों जो सत्य करके
श्रद्धे, तिसकों सम्यक्त कहतेहै, सो कथन यहहै.
लोककी अस्तिहै १ अलोकज्ञीहै २ जीवज्ञीहै ३
अजीवज्ञीहै ४ कर्मका बंधज्ञीहै ५ कर्मका मोक्ष-
ज्ञीहै ६ पुन्यज्ञी है ७ पापज्ञीहै ८ आश्रव कर्मका
आवणाज्ञी जीवमेहै ९ कर्म आवनेके रोकणेका

उपाय संवरभीहै १० करे कर्मका वेदना भोगना-
भीहै ११ कर्मकी निर्जराभीहै कर्म फल देके खि-
रजातेहै १२ अरिहंतभीहै १३ चक्रवर्तीभीहै १४
बलदेव वासुदेवभीहै १५ नरकभीहै १६ नारकी-
भीहै १७ तिर्यंचभीहै १८ तिर्यंचणीभीहै १९
माता पिता ऋषीभीहै २० देवता और देवलोक-
भीहै २१ सिद्धिस्थानभी है २२ सिद्धभीहै २३
परिनिर्वाणभीहै २४ परिनिवृत्तभीहै २५ जीवहिं-
साभीहै २५ जूठभीहै २६ चोरीभीहै २७ मैथुन-
भीहै २८ परिग्रहभीहै २९ क्रोध, मान, माया,
लोभ, राग, द्वेष, कलह, अभ्याख्यान, पैशुन, प-
रनिंदा, माया, मृषा, मिथ्यादर्शन, शल्य येभी
सर्व है. इन पूर्वोक्त जीवहिंसासें लेके मिथ्याद-
र्शन पर्यंत अठारह पापोंके प्रतिपक्षी अठारह प्र-
कारके त्यागभीहै ३० सर्व अस्तिभावकों अस्ति-

रूपे और नास्तिनावकों नास्तिरूपें जगवंतने क-
हाहै ३१ अच्छे कर्मका अच्छा फल होताहै बुरे क-
र्मोंका बुरा फल होताहै ३२ पुण्य पाप दोनो सं-
सारावस्थामें जीवके साथ रहतेहै ३३ यह जो
निर्ग्रंथोंके वचनहै वे अति उत्तम देवलोक और
मोक्षके देने वालेहै ३४ चार काम करनेवाला जीव
मरके नरक गतिमें उत्पन्न होताहै. महा हिंसक,
क्षेत्र वाडी कर्षण सर सोसादिसें महा जीवांका
वध करनेवाला १ महा परिग्रह तृष्णावाला २
मांसका खानेवाला ३ पंचेंद्रिय जीवका मारने-
वाला ४ ॥ चार काम करनेवाला मरके तिर्यंच
गतिमें उत्पन्न होताहै. माया कपटसें दूसरेके साथ
ठगी करे १ अपने करे कपटके ढांकने वास्ते जुठ
बोले २ कमती तोल देवे अधिक तोल लेवे ३ गु-
णवंतके गुण देख सुनके निंदा करे ४ चार काम

करनेसें मनुष्य गतिमें उत्पन्न होताहै. मद्दिक स्व-
भाववाले स्वभावें कुटलितासें रहित होवे १
स्वभावेंही विनयवंत होवे २ दयावंत होवे ३ गुण-
वंतके गुण सुनके देखके द्वेष न करे ४॥ चार का-
रणसें देवगतिमें उत्पन्न होताहै; सरागी साधुपणा
पालनेसें १ गृहस्थ धर्म देश विरति पालनेसें २
अज्ञान तप करनेसें ३ अकाम निर्जरासें ४ तथा
जैसी नरक तिर्यंच गतिमे जीव वेदना भोगताहै
और मनुष्यपणा अनित्यहै. व्याधि, जरा, मरण
वेदना करके वहुत भरा हूआहै. इस वास्ते धर्म
करणेसें उद्यम करो. देवलोकमें देवतायोंको मनु-
ष्य करतां वहुत सुखहै. अंतमे सोभी अनित्यहै.
जैसें जीव कर्मोंसें वंधाताहै और जैसें जीव क-
र्मसें छुटके निर्वाण पदकों प्राप्त होताहै. और
षटकायके जीवांका स्वरुप ऐसाहै पीछे साधुका

धर्म और श्रावकके धर्मका यह स्वरूपहै इत्यादि धर्मदेशना श्री महावीर भगवंते सर्वजातिके मनुष्यादिकोंकों कथन करीथी.

प्र. ६६—साधुके धर्मका थोडेसेमें स्वरूप कह दिखलाओ.

उ. पांच महाव्रत और रात्रि भोजनका त्याग यह ७ वस्तु धारण करे. दश प्रकारका यतिधर्म और सत्तरें भेदे संयम पालन करे; ४२ बैतालीस दोष रहित भिक्षा ग्रहण करे; दशविध चक्रवाल समाचारी पाले.

प्र. ६७ श्रावकधर्मका थोडेसेमें स्वरूप कह दिखलाओ.

उ. त्रस जीवकी हिंसाका त्याग १ वडे जुठका त्याग, अर्थात् जिसके बोलनेंसे राजसें दंड होवे, और जगतमें जुठ बोलनेवाला प्रसिद्ध

होवे. ऐसें चौरीमेंभी जानना ३ वभी चोरीका त्याग ३ परस्त्रीका त्याग ४ परिग्रहका प्रमाण ५ छहें दिशामें जानेका प्रमाण करे. भोग परिभोगका प्रमाण करे; बावीस अभक्ष्य न खाने योग्य वस्तुका और बतीस अनंतकायका त्याग करे, और १५ बुरे वाणिज व्यापार करनेका त्याग करे. विना प्रयोजन पाप न करे. सामायिक करे; देशावकाशिक करे; पोषध करे; दान देवे; त्रिकाल देवपूजन करे.

प्र. ६७—साधु श्रावकका धर्म किस वास्ते मनुष्योंको करना चाहिये.

उ.—जन्म मरणादि संसार भ्रमणरूप दुखसें छूटने वास्ते साधु और श्रावकका पूर्वोक्त धर्म करना चाहिये.

प्र. ६९—श्रीभगवंत महावीरजीने जो

धर्म कथन कराथा. सो धर्म श्रीमहावीरजीनें अपने हाथोंसे किसी पुस्तकमें लिखा था वा नही.

उ.—नही लिखाथा.

प्र. ७० श्रीमहावीर नगवंतका कथन करा हुआ सर्व उपदेश भगवंतकी रूबरु किसी दूसरे पुरुषनें लिखाथा.

उ.—दूसरे किसी पुरुषने सर्व नही लिखाथा.

प्र. ७१—क्या लिखने लोक नही जानते थे, इस वास्तें नही लिखा वा अन्य कोइ कारण था.

उ.—लिखनेतो जानते थे, परं सर्व ज्ञान लिखनेकी शक्ति किसीनी पुरुषमें नही थी, क्योंकें नगवंतने जितना ज्ञानमें देखा था तिसके अनंतमें नागका स्वरूप वचनद्वारा कहा था. जितना कथन करा था तिसके अनंतमें नाग

प्रमाण गणधरोने द्वादशांग सूत्रमें ग्रंथन करा, जेकर कोइ १२ वारमें अंग दृष्टिवादका तीसरा पूर्व नामा एक अध्ययन लिखे तो १६३८३ सोलांहजार तीन सौ ब्याशी हाथीयों जितने स्याहीके ढेर लिखनेमें लगें, तो फेर संपूर्ण द्वादशांग लिखनेकी किसमे शक्ति हो सक्तीहै, और जब तीर्थंकर गणधरादि चौदह पूर्वधारी विद्यमानथे, तिनके आगे लिखनेका कुछभी प्रयोजन नहीथा, और देशमात्र ज्ञान किसि साधु, श्रावकने प्रकरण रूप लिख लीया होवे, अपने पठन करने वास्ते ,तो निषेध नही.

प्र. ७९—पूर्वोक्त जैनमतके सर्व पुस्तक श्रीमहावीरसें और विक्रम संवत्की शुरुपातसें कितने वर्ष पीछे लिखे गये है.

उ.—श्रीमहावीरजीसें ९८० नवसौ अ-

स्सी वर्ष पीछे और विक्रम संवत् ५१० में लिखे गये है.

प्र ७३–इन शास्त्रोंके कंठ और लिखनेमें क्या व्यवस्था बनी थी, और यह पुस्तक किस जगे किसने किस रीतीसे कितने लिखेथे.

उ.–श्री महावीरजीसें १७० वर्षतक श्री भद्रबाहुस्वामी यावत् (द्वादशांग) चौदह पूर्व और इग्यारे अंग जैसें सुधर्मस्वामीने पाठ ग्रंथन करा था तैसाही था, परं भद्रबाहुस्वामीने बारां १२ चौमासे निरंतर नैपाल देशमें करे थे, तिस समयमें हिंदुस्थानमें बारां वर्षका काल पडाथा, तिसमें भिक्षा ना मिलनेसें एक भद्रबाहुस्वामी-कों वर्जके सर्व साधुयोंके कंठसें सर्व शास्त्र वीच वीचसें कितनेही स्थल विस्मृत हो गये, जब बारां वरसका काल दुर हूआ, तब सर्व आचार्य

साधु पाटलिपुत्र नगरमें एकठे हुए, सर्व शास्त्र आपसमें मिलान करे तब इग्यारे अंग तो संपूर्ण हुए, परंतु चौदह पूर्व सर्व सर्वथा भूल गए, तब संघकी आज्ञासें स्थुलभद्रादि ५०० सौ तीक्ष्ण बुद्धिवाले साधु नैपाल देशमें श्री भद्रबाहुस्वामीके पास चौदह पूर्व सीखने वास्ते गये, परंतु एक स्थुलभद्रस्वामीने दो वस्तु न्यून दश पूर्व पाठार्थसें सीखे. शेष चार पूर्व केवल पाठ मात्र सीखे. श्री भद्रबाहुके पाट ऊपर श्री स्थुलभद्रस्वामी बैठे, तिनके शिष्य आर्यमहागिरि सुहस्तिसे लेके श्री वज्रस्वामी तक जो वज्रस्वामी श्री महावीरसें पीछे ५८४ में वर्ष विक्रम संवत् ११४ में स्वर्गवासी हुए है तहां तक येह आचार्य दश पूर्व और इग्यारे अंगके कंठाग्र ज्ञानवाले रहे, तिनके नाम आर्य महागिरि १ आर्यसुहस्ति २ श्री

गुणसुंदरसूरि ३ श्यामाचार्य ४ स्कंधिलाचार्य ५ रेवतीमीत्र ६ श्री धर्मसूरि ७ श्री नद्रगुप्त ८ श्री गुप्त ९ वज्रस्वामी १० श्री वज्रस्वामीके समीपे तोसलिपुत्र आचार्यका शिष्य श्री आर्यरक्षित-सूरिजीनें साढे नव पूर्व पाठार्थसें पठन करे. श्री आर्यरक्षितसूरि तक सर्व सूत्रोंके पाठ नपर चा-रोंही अनुयोगकी व्याख्या अर्थात् जिस श्लोकमें चरणकरणानुयोगकी व्याख्या जिन अक्षरोंसे क-रतेथे तिसही श्लोकके अक्षरोंसे द्रव्यानुयोगकी व्याख्या और धर्मकथानुयोगकी और गणितानु-योगकी व्याख्या करते थे. इसतरें अर्थ करणेकी रीती श्री सुधर्मस्वामीसे लेके श्री आर्यरक्षितसूरि तक रही, तिनके मुख्य शिष्य विंध्यदुर्वलिका पु-ष्पादिकी बुद्धि जब चारतरेंके अर्थ समझनेमें ग-नराइ तब श्री आर्यरक्षितसूरिजीने मनमें वि-

चार करा के इन नव पुर्वधारीयोंकी बुद्धिमें जब चार तरेंका अर्थ याद रखना कठिन पमता है. तो अन्य जीव अल्प बुद्धिवाले चार तरेंका सर्व शास्त्रोंका अर्थ क्युं कर याद रखेंगे, इस वास्ते सर्व शास्त्रोंके पाठोंका अर्थ एकैक अनुयोगकी व्याख्या शिष्य प्रशिष्योंकों सिखाइ. शेष व्यवछेद करी सोइ व्याख्या जैन श्वेतांबर मतमे आचार्योंकी अविछिन्न परंपरायसे आज तक चलती है, तिनके पीछे स्कंधिलाचार्य श्री महावीरजीके २४ में पाट हुए है. नंदीसूत्रकी वृत्तिमें श्री मलयगिरि आचार्यैं ऐसा लिखाहै कि श्री स्कंधिलाचार्यके समयमे बारां वर्ष १२ का दुर्भिक्ष काल पमा, तिसमें साधुयोंको भिक्षा न मिलनेसें नवीन पढना और पिछला स्मरण करना बिलकुल जाता रहा. और जो चमत्कारी अतिशयवंत शास्त्र थे वेभी

वहुत नष्ट हो गये. और अंगोपांगभी न्नावसें अ-
र्थात् जैसे स्वरूपवाले थे तैसे नही रहे. स्मरण
परावर्त्तनके अन्नावसें जब बारां वर्षका डुर्निक्ष
काल गया और सुन्निक्ष हूआ, तब मथुरा नग-
रीमें स्कंधिलाचार्य प्रमुख श्रमणसंघने एकठे
होके जो पाठ जितना जिस साधुके जिस शा-
स्त्रका कंठ याद रहा सो सर्व एकत्र करके कालि-
क श्रुत अंगादि और कितनाक पूर्वगत श्रुत किं-
चित्मात्र रहा हुआ जोमके अंगादि घटन करे,
इस वास्ते इसकों माथुरी वाचना कहते है. कि-
तनेक आचार्य ऐसें कहतेहै १२ वर्षके कालके व-
ससें एक स्कंधिलाचार्यकों वर्जके शेष सर्वाचार्य
मर गये थे. गीतार्थ अन्य कोइन्नी नही रहा था;
परं सर्व शास्त्र न्नूले तो नही थे; परंतु तिस का-
लमें इतनाही कंठ था, शेष अल्प बुद्धिके प्रन्ना-

वर्से पहिलांही भूल गया था, तिस स्कंधिला-
चार्यके पीछे आठमें पाट और श्री वीरसें २९ में
पाट देवर्द्धिगणि क्षमाश्रमण हुए, तिनका वृत्तांत
ऐसें जैन ग्रंथोमे लिखा है. सोरठ देशमें वेला-
कूलपत्तनसें अरिदमन नामे राजा, तिसका सेव-
क काश्यप गोत्रीय कामर्द्धि नाम क्षत्रिय, तिस-
की भार्या कलावती, तिनका पुत्र देवर्द्धिनामे,
तिसने लोहित्य नामा आचार्यके पास दीक्षा ली
नी, इग्यारे अंग और पूर्वगत ज्ञान जितना अ-
पने गुरुकों आताथा, तितना पढ लिया, पीछे श्री
पार्श्वनाथ अर्हंतकी पट्टावलिमे प्रदेशी राजाका
प्रतिबोधक श्री केशी गणधरके पट्ट परंपरायमें
श्री देवगुप्तसूरिके पासों प्रथम पूर्व पठन करा,
अर्थसें, दूसरे पूर्वका मूल पाठ पढते हुए श्री दे-
वगुप्तसूरि काल कर गये, पीछे गुरुने अपने पट्ट

ऊपर स्थापन करा. एक गुरुने गणिपद दीना, दूसरेने क्षमाश्रमणपद दीना, तब देवर्द्धिगणि क्षमाश्रमण नाम प्रसिद्ध हुआ. तिस समयमें जैन मतके ५०० पांचसौ आचार्य विद्यमान थे; तिन सर्वमें देवर्द्धिगणि क्षमाश्रमण युगप्रधाम और मुख्याचार्य थे, वे एकदा समय श्री शत्रुंजय तीर्थमें वज्रस्वामीकी प्रतिष्ठा हुइ. श्री ऋषभदेवकी पितलमय प्रतिमाकों नमस्कार करके कपर्दि यक्षकी आराधना करते हुए; तब कपर्दि यक्ष प्रगट होके कहने लगा, हे भगवान्, मेरे स्मरण करनेका क्या प्रयोजन है. तब देवर्द्धिगणि क्षमाश्रमणजीने कहा, एक जिनशासनका कामहै, सो यहहै कि बारें वर्षी डुकालके गये, श्री स्कंधिलाचार्यने माथुरी वाचना करीहै; तोभी कालके प्रभावसें साधुयोंकी मंद बुद्धिके होनेसें शास्त्र कं-

उसें भूलते जातेहै. कालांतरमें सर्व भूल जावेंगे; इस वास्ते तुम साहाय्य करो. जिससें मै ताम्रपत्रो उपर सर्व पुस्तकोंका लेख करुं; जिससें जैन शास्त्रकी रक्षा होवे. जो मंदबुद्धिवालाभी होवेगा सोभी पत्रों उपरि शास्त्राध्ययन कर सकेगा, तब देवतानें कहा मैं सानिध्य करुंगा, परंतु सर्व साधुयोंकों एकठे करो और स्याही ताम्रपत्र बहुत संचित करो, लिखारियोंको बुलाउ; और साधारण द्रव्य श्रावकोंसें एकठा करावो; तब श्री देवर्द्धिगणि क्षमाश्रमणनें पूर्वोक्त सर्व काम वल्लभी नगरीसें करा, तब पांचसौ आचार्य और वृद्ध गीतार्थोनें सर्वांगोपांगादिकोंके आलापक साधु लेखकोंनें लिखे, खरडा रुपमें; पीछे देवर्द्धिगणि क्षमाश्रमणजीने सर्व अंगोपांगोके आलापक जोडके पुस्तकरूप करे. परस्पर सूत्रांको मुलावना

जैसें ज्ञगवतीमें जहा पन्नवणाए इत्यादि अति देशकरें सर्व शास्त्र शुद्ध करके लिखवाए. देवताकी सानिध्यतासें एक वर्षमें एक कोटी पुस्तक १०००००० लिखे आचारंगका महाप्रज्ञा अध्ययन किसी कारणसें न लिखा, परं देवर्द्धिगणि क्षमाश्रमणजी प्रमुख कोइजी आचार्यने अपनीमन- कल्पनासें कुछज्ञी नही लेखादे. इस वास्ते जैन शास्त्र सर्व सत्य कर मानने चाहिये ॥ जो कोइ कोइ कथन समजमें नही आताहै, सो यथार्थ गुरु गम्यके अज्ञावसें; परं गणधरोके कथनमें किंचित् मात्रज्ञी जूल नहीहै. और जो कुछ किसी आचा- र्यके जूल जानेसें अन्यथा लिखाज्ञी गया होवै तो ज्ञी अतिशय ज्ञानी विना कोन सुधार सके; इस वास्ते तहमेव सच्चं जं जिणेहिं पन्नत्तं, इस पाठके अनुयायी रहना चाहिये.

प्र. ७४–जैन मतमै जिसकों सिद्धांत तथा आगम कहते है, वै कौनसे कौनसे है. और तिनके मूल पाठ १ निर्युक्ति २ भाष्य ३ चूर्णि ४ टीका ५ के कितने कितने ३२ बत्तीस अक्षर प्रमाण श्लोक संख्याहै, यह संक्षेपसें कहो.

उ.–इस कालमें किसी रूढिके सबबसें ४५ पैंतालीस आगम कहै जातेहै, तिनके नाम और पंचांगीके श्लोक प्रमाण आगे लिखे हुए, यंत्रसें जान लेने. और इनमें विषय विधेय इस तरेका है. आचारंगमें मूल जैन मतका स्वरूप, और साधुका आचारका कथन है.१ सूयगडांगमे तीनसौ ३६३ त्रेसठ मतका स्वरूप कथनादि विचित्र प्रकारका कथन है.२ ठाणांगमें एकसें लेके दश पर्यंत जे जे वस्तुयो जगतमें है तिनका कथन है. ३ समवायांगमें एकसें लेके कोटाकोटि

पर्यंत जे पदार्थ है तिनका कथन है ४ जगवतीमें गौतमस्वामीके करे हुए विचित्रप्रकारके ३६००० छत्तीस हजार प्रश्नोके उत्तर है. ५ ज्ञातामें धर्मी पुरुषोंकी कथा है. ६ उपाशक दशामें श्री महावीरके आनंदादि दश श्रावकोंके स्वरूपका कथन है. ७ अंतगडमें मोक्ष गये ९० नव्वे जीवांका कथन है. ८ अणुत्तरोववाइमें जे साधु पांच अनुत्तर विमानमे उत्पन्न हुएहे, तिनका कथन है.९ प्रश्नव्याकरणमें हिंसा १ मृषावाद २ चौरी ३ मैथुन ४ परिग्रह ५ इन पांचो पापांका कथन और अहिंसा १, सत्य २, अचौरी ३, ब्रह्मचर्य ४ परिग्रह त्याग ५ इन पांचो संवरोका स्वरूप कथन कराहे. १० विपाक सूत्रमें दश दुख विपाकी और दश सुख विपाकी जीवांके स्वरूपका कथन है. ११ इति संक्षेपसें अंगाभिधेय उववाइमें १२

बावीस प्रकारके जीव काल करके जिस जिस जगें उत्पन्न होते है तिनका कथनादि, कोणककी वंदनाविधि महावीरकी धर्मदेशनादिका कथन है. १ राजप्रश्नीयमें प्रदेशी राजा नास्तिक मती- का प्रतिबोधक केशी गणधरका और देव विमा- नादिकका कथन है. २ जीवाजीगममें जीव अ- जीवका विस्तारसें चमत्कारी कथन करा है. ३ पन्नवणामें ३६ छत्तीस पदसे छत्तीस वस्तुका बहुत विस्तारसें कथन है. ४ जंबुद्वीप पन्नतिमें जंबुद्वी- पादिका कथन है. ५ चंद्रप्रज्ञप्ति, सूर्यप्रज्ञप्तिमें ज्योतिष चक्रके स्वरूपका कथन है. ६, ७ निरा- वलिकामें कितनेक नरक स्वर्ग जानेवाले जीव और राजायोंकी लडाइ आदिकका कथन है. ८। ९। १०। ११॥ १२ आवश्यकमें चमत्कारी अति सूक्ष्म पदार्थ नय निक्षेप ज्ञान इतिहासादिका क-

थन है, १, दशवैकालिकमें साधुके आचारका कथन है २ पिंरुनिर्युक्तिमें साधुके शुद्धाहारादिकके स्वरूपका कथन है ३ उत्तराध्ययनमें तो छत्तीस अध्ययनोंमें विचित्र प्रकारका कथन करा है ४ छहों छेद ग्रंथोंमें पद विभाग समाचारी प्रायश्चित्त आदिका कथन है ६ नंदीमे ५ पांच ज्ञानका कथन करा है. १ अनुयोगद्वारमें सामायिकके उपर चार अनुयोगद्वारोंसें व्याख्या करीहै २ चउसरणमें चारसरणोंका अधिकार है १, रोगीके प्रत्याख्यान की विधि २, अनशन करणेकी विधि ३, वंदे प्रत्याख्यानके करणेका स्वरूप ४ गर्भादिका स्वरूप ५, चंद्र वेध्यका स्वरूप ६, ज्योतिषका कथन ७, मरणके समय समाधिकी रीतिका कथन ८ इंद्रोके स्वरूपका कथन ए, गह्वाचारमें गछका स्वरूप, १० और संस्थारपइन्नेमें संथारेकी महि-

माका कथनहै, यह संक्षेपसें पैंतालीस आगममें जो कुछ कथन करा है, तिसका स्वरूप कहा, परंतु यह नही समझ लेनाके जैन मतमें इतनेही शास्त्र प्रमाणिक है, अन्य नही; क्योंकि उमास्वाति आचार्यके रचे हुए, ५०० प्रकरण है, और श्री महावीर भगवंतका शिष्य श्री धर्मदास गणि क्षमाश्रमणजीकी रची हुइ उपदेशमाला तथा श्री हरिभद्रसूरिजीके रचे १४४४ चौदहसौ चौवालीस शास्त्र इत्यादि प्रमाणिक पूर्वधरादि आचार्यों-के प्रकृति शतकादि हजारोही शास्त्र विद्यमान है, वे सर्व प्रमाणिक आगम तुल्य है, राजा शिवप्रसादजीनें अपने बनाए इतिहास तिमर नाशकमें लिखा है. बुलरसाहिबन १५०००० डेढ लाख जैन मतके पुस्तकोंका पता लगाया है; और यहभी मनमें कुविकल्प न करनाके यह

शास्त्र गणधरोंके कथन करे हुए है, इस वास्ते सच्चे है, अन्य सच्चे नही, क्योंके सुधर्मस्वामीने जेसे अंग रचेथे वैसेतो नही रहेहै. संप्रति काल-के अंगादि सर्व शास्त्र स्कंधिलादि आचार्योंने वां-चनारूप सिद्धांत बांधेहै, इस वास्ते पूर्वोक्त आ-ग्रह न करना, सर्व प्रमाणिक आचार्योंके रचे प्र-करण सत्य करके मानने, यही कल्याणका हेतु है.

अंक.	सूत्र नामानि.	सूत्र मूल संख्या.	निर्युक्तिः	भाष्यं.	चूर्णिः	टीका.	सर्व संख्यां.
	अथांगानि.						
१	आचारांग सूत्रं	२५००	४५०	०	८३००	१२०००	२३२५०
२	सूयगडांग सूत्रं.	२१००	२५०	०	१००००	१२८५०	२५२००
३	ठाणंग सूत्रं.	३७७५	०	०	०	१५२५०	१९०२५
४	समवायांग सूत्रं.	१६६७	०	०	४००	३७७६	५८४३
५	भगवती सूत्रं.	१५७५२	०	०	४०००	१८६१६	३८३६८
६	ज्ञाता धर्मकथा सूत्रं.	६०००	०	०	०	४२५२	१०२५२

७	उपाशकदशांग सूत्रं.	८१२	०	०	०	१३००	३०१४
८	अंतगड सूत्रं.	७१०	०	०	०		
९	अनुत्तरोववाइ सूत्रं.	१९२	०	०	०		
१०	प्रश्नव्याकरण सूत्र.	१२५०	०	०	०		
११	विपाक श्रुतांग सूत्रं.	१२१६	०	०	०	४४०० / ९००	५८५० / २१११

अथोपांगानि.

१ ११	उववाइ सूत्रं.	११६७	०	०	०	३१२५	४२९२
२ १२	राजप्रश्नीय सूत्रं.	२०७८	०	०	०	६०००	८०७८

३ १४	जीवाभिगम सूत्रं.	४७००	०	०	१५००	१३००० टिप्पन ११००	२०३००
४ १५	पन्नवणा सूत्रं.	७८००	०	०	०	लघु ३७२८ बृहत् १४०००	२५५२८
५ १६	जंबूद्वीप पन्नत्ति सूत्रं.	४१४६	०	०	१८६०	१६०००	२२००६
६ १७	चंद्र पन्नत्ति सूत्रं.	२२००	०	०	०	९११४	११३१४
७ १८	सूर्य पन्नत्ति सूत्रं.	२२००	०	०	०	९०००	११२००

८ १९ ९ २० १० २१ ११ २२ १२ २३	निरावलिया सुयखंध सूत्रं. कप्पिया सूत्रं. कप्पवडंसिया सूत्रं. पुप्फिया सूत्रं. पुप्फचूलिया सूत्रं. वन्हिदशांग सूत्रं.	११०९	०	०	०	७००	१८०९

अथ मूल सूत्राणि.

१ २४	आवश्यकं	१००	३१००	०	१८०००	२२००० टिप्पन ४६००	४७८००

	विशेषावश्यकं	५०००	०	०	०	लघु १४००० बृहत् २८०००	४७०००
	पाक्षिकं सूत्रं	३००	०	०	४००	२७००	३४००
	उघनिर्युक्तिः	११७०	०	३०००	७००	७०००	११८७०
२ २५	दशवैकालिकं सूत्रं.	७००	४५०	०	७०००	लघु २७०० बृहत् ६८१०	१७६६०
३ २६	पिंडनिर्युक्तिः	७००	०	०	०	लघु ४००० बृहत् ७०००	११७००

४ २७	उत्तराध्ययन सूत्रं.	२०००	५००	०	६०००	लघु १२००० वृहत् १७६४५	३८१४५

अथ छेद सूत्राणि.

१ २८	दशाश्रुत स्कंध सूत्रं.	१८३०	१६८	०	२२२५	०	४२२३
२ २९	वृहत्कल्प सूत्रं.	४७३	०	लघु ८००० वृहत् १२०००	१४००० विशेष ११०००	४२०००	८७४७३
३ ३०	व्यवहार सूत्रं.	६०००	०	६०००	१०३६१	३३६२५	५०९८६
४ ३१	पचकल्प सूत्रं.	११३३	०	३१२५०	३१३०	०	७३८८

	जीतकल्प सूत्रं.	२०५	०	३१२४	१००० विशेपचूर्णि ११०००	७०००	२२३२९
५ ३२	निशिथ सूत्रं.	८१५	०	लघु ७४०० वृहत् १२०००	२८०००	०	४८२१५
६ ३३	महानिशिथ	लघुवांचना ३५००		मध्यम वांचना ४२००		वृहद्वांचना ४५००	१२२००

पइन्ना सूत्राणि.

१ ३४	चतुःशरण सूत्रं	६४	०	०	०	०	६४
२ ३५	आनुरगत्या ख्यानं सत्रं.	८४	०	०	०	०	८४

३ ३६	भक्तपरिज्ञा सूत्रं,	१७१	०	०	०	०	१७१
४ ३७	महाप्रत्याख्यानं सूत्रं.	१३४	०	०	०	०	१३४
५ ३८	तंदुलवेयालीय सूत्रं.	४००	०	०	०	०	४००
६ ३९	चंद्रवेध्यक सूत्रं.	१७६	०	०	०	०	१७६
७ ४०	गणिविद्या सूत्रं.	१००	०	०	०	०	१००
८ ४१	मरणसमाधि सूत्रं.	६५६	०	०	०	०	६५६
९ ४२	देवेंद्र स्तव सूत्रं वीर स्तव सूत्रं	२००	०	०	०	०	२००

१.० ४३	गच्छाचार सां.	१३८	०	०	०	०	१३८
	सस्तारक सूत्रं	१२२	०	०	०	०	१२२
	चूलिका सूत्रं.	हांगिभापित सूत्रं. ७००	ज्यातिस्क करंड सूत्रं १८५०	सिद्धप्राभृत सूत्रं १३३५	वसुदेव-हिंडि प्रथम खंड ११०००	मध्यमखंड १९००० द्वीपसागर पन्नाति २५००	तीर्थोडार सूत्र १५०० अंगविद्या ९००० ये भी४५के अंतर भूतही है
१ ४४	नंदि सूत्रं	७००	०	०	२००१	लघु २११२ बृहत् ७७३५	१२७४८
२ ४५	अनुयोगद्वार सूत्रं.	१८९९	०	०	३०००	लघु ३५०० बृहत् ५५००	१४८९९

प्र. ७५—श्री देवर्द्धिगणि क्षमाश्रमणसें पहिलां जैन मतका कोइ पुस्तक लिखा हुआ थाके नही.

उ.—अंगोपांगादि शास्त्रतो लिखे हुए नही मालुम होतेहै. परंतु कितनेक अतिशय अद्भुत चमत्कारी विद्याके पुस्तक और कितनीक आम्नायके पुस्तक लिखे हुए मालुम होतेहै, क्योंकि विक्रमादित्यके समयमें श्री सिद्धसेन दिवाकर नामा जैनाचार्य हुआहै, तिनौनें चित्रकुटके किल्लेमें एक जैन मंदिरमें एक बम्हाचारी एक पथरका बीचमे पोलाडवाला स्तंभ देखा, तिसमे श्री सिद्धसेनसें पहिले होगए कितनेक पूर्वधर आचार्योने विद्यायोंके कितनेक पुस्तक स्थापन करेथे, तिस स्तंभका ढांकणा ऐसो किसी जषधीक लेपसे बंद करा था कि सर्व स्तंभ एक सरीखा मालुम पडताथा;

तिस स्तंभका ढांकणा श्री सिद्धसेन दिवाकरकों मालुम पड़ा, तिनोंने किसीक औषधीका लेप करा तिससें स्तंभका ढांकणा खुल गया. जब पुस्तक देखनेकों एक निकाला तिसका एक पत्र वांच्या, तिसके उपर दो विद्या लिखी हुइथी. एक सुवर्ण सिद्धी १ दूसरी परचक्र सैन्य निवारणी २ इन दोनो विद्यायोंके वांचे पीछे जब आगे वांचने लगे तब तिन विद्यायोंके अधिष्टाता देवताने श्री सिद्धसेन कों कहा कि आगे मत वांचो, तुमारे भाग्यमें ये दोही विद्याहै। तब श्री सिद्धसेन दिवाकरजीने स्तंभका मुख बंद करा. वो एक पुस्तक अपनेपास रखा, पीछे तिस पुस्तककों उज्जयन नगरीके श्री आवंती पार्श्वनाथजीके मंदिरमे गुप्तपणे कहीं रख दीया. पीछे वो पुस्तक श्री जिनदत्तसूरिजी महाराज जो विक्रम संवत् १२०४ मे थे तिनकों तिस

मंदिरमेंसे मिला. अब वोही पुस्तक जैसलमेरके श्री चिंतामणि पार्श्वनाथजीके मंदिरमे बडे यत्न· सें रखा हुआहै, ऐसा हमने सुनाहै. ओर चित्र- कुटका स्तंभ भूमिमें गरक हो गया, यह कथन कितनेक पट्टावलि प्रमुख ग्रंथोमें लिखा हुआहै. इस वास्ते श्री देवर्द्धिगणि क्षमाश्रमणसें पहिलां भी कितनेक पुस्तक लिखे हुए मालुम होतेहै.

प्र. ७६—श्री महावीरजीके समयमें कितने राजे श्री महावीरके भक्त थे.

उ—राजगृहका राजे श्रेणिक जिसका दूसरा नाम भंभसार था, १ चंपाका राजा भंभसारका पुत्र अशोकचंद्र जिसका नाम कोणिक प्रसिद्ध था, २ वैशालिनगरीका राजा चेटक, ३ काशी देशके नव मल्लिक जातिके राजे और कोशल देशके नव लोछिक जातिके राजे २१ पु-

लासपुरका विजयनामा राजा २२ अमलकल्पा नगरीका स्वेतनामा राजा २३ वीतभय पट्टनका उदायन राजा २४, कौशांबीका उदायन वत्स-राजा, २५ क्षत्रियकुंड ग्राम नगरका नंदिवर्धन राजा, २६ उज्जयनका चंदप्रद्योत राजा, २७ हि-मालय पर्वतके उत्तर तर्फ पृष्टचंपाके शाल महा-शाल दो भाइ राजे २८ पोतनपुरका प्रसन्नचंद्र राजा, २९ हस्तिशीर्ष नगरका अदिनशत्रु राजा, ३० रुषभपुरका धनावह नामा राजा, ३१ वीर-पुर नगरका वीरकृष्ण मित्र नामा राजा, ३२ वि-जयपुरका वासवदत्त राजा, ३३ सौगंधिक नग-रीका अप्रतिहत नामा राजा, ३४ कनकपुरका प्रियचंद्र राजा ३५ महापुरका बलनामा राजा, ३६ सुघोस नगरका अर्जुन राजा, ३७ चंपाका दत्त राजा, ३८ साकेतपुरका मित्रनंदी राजा ३९ इ-

त्यादि अन्यभी कितनेक राजे श्री महावीरके भक्त थे, येह सर्व राजायोंके नाम अंगोपांग शास्त्रोंमें लिखे हुएहैं.

प्र. ७७—जो जो नाम तुमने महावीर भगवंतके भक्त राजायोंके लिखे है, बौधमतके शास्त्रोमें तिनही सर्व राजायोंकों बौद्धमति लिखाहै; तिसका क्या कारणहै.

उ.—जितने राजे श्रीमहावीर भगवंतके भक्त थे, तिन सबकों बौधशास्त्रोंमें बौधमति अर्थात् बुधके भक्तनहि लिखेहै, परंतु कितनेक राजायोंका नाम लिखाहै, तिसका कारणतो ऐसा मालुम होताहैकि पहिलें तिन राजायोंने बुधका उपदेश सुनके बुधके मतकों माना होवेगा, पीछे श्रीमहावीर भगवंतका उपदेश सुनके जैनधर्ममें आये मालुम होतेहै, क्योंकि श्रीमहावीर भग-

वंतसें १६ वर्ष पहिलें गौतम बुधने काल करा, अर्थात् गौतम बुधके मरण पीछे श्रीमहावीर-स्वामी १६ वर्ष तक केवलज्ञानी विचरे थे तिनके उपदेशसें कितनेक बौद्ध राजायोंने जैन धर्म अंगीकार करा, इस वास्ते कितनेक राजायोंका नाम दोनो मतोंमें लिखा मालुम होताहै.

प्र. ७०—क्या महावीर स्वामीसें पहिलां भरतखंडमें जैनधर्म नही था ?

उ.—श्रीमहावीर स्वामीसें पहिलां भरतखंडमें जैनधर्म बहुत कालसें चला आता था, जिस समयमें गौतम बुधने बुध होनेका दावा करा, और अपना धर्म चलाया था, तिस समयमें श्री पार्श्वनाथ २३ मे तीर्थंकरका शासन चला था. तिनके केशी कुमार नामे आचार्य पांचसो ५०० साधुयोंके साथ विचरते थे, और केशी कु-

मारजी गृहवासमें उज्जयिनिका राजा जयसेन और तिसकी पट्टराणी अनंगसुंदरी नामा तिनके पुत्र थे, विदेशि नामा आचार्यके पास कुमार ब्रह्मचारीने दीक्षा लीनी, इस वास्ते केशी कुमार कहे जातेहै, श्री पार्श्वनाथके बमे शिष्य श्री शुभदत्तजी गणधर १ तिनके पट्ट ऊपर श्री हरिदत्ताचार्य २, तिनके पद ऊपर श्री आर्यसमुद्र ३, तिसके पट्ट ऊपर श्री केशी कुमारजी हुएहै, जिनोने स्वेतंबिका नगरीका नास्तिकमति प्रदेशी नामा राजेकों प्रतिबोधके जैनध है. इस कौर श्रीमहावीरजीके बमे शिष्य साथ श्रावस्ति नगरीमें श्री के तहां गौतम स्वामीके साथ ५ मा करा, श्र हे श्री भूति गौतमके शी कुमार मिले श्नोत्तर करके शि महावीरका शासन लेके आज पर्यंत श्री ने ८३ तेरासी आचार्य श्रीपार्श्व ला सिद्धसूरि नामे

आचार्य सांप्रति कालमें मारवाडमें विचरेहै ह-
मने अपनी आंखोंसें देखाहै, जिसकी पट्टावलि
आज पर्यंत विद्यमान है, तिस पार्श्वनाथजीके
होनेमे यही प्रत्यक्ष और अनुमान प्रमाण बलवंतहै.

प्र. ७०–कौन जाने किसी धूर्त्तनें अपनी क-
ल्पनासें श्रीपार्श्वनाथ और तिनकी पट्ट परंपराय
लिख दीनी होवेगी, इससे हमकों क्योंकर श्री
पार्श्वनाथ हुए निश्चित होवें ?

उ.–जिन जिन आचार्योंके नाम श्रीपार्श्व-
नाथजीसें लेके आज तक लिखे हुए है, तिनोमेंसें
कितनेक आचार्योंने जो जो काम करेहै वे प्रत्यक्ष
देखनेमें आते है जैसें श्री पार्श्वनाथजीसें छठे ६
पट्ट ऊपर श्री रत्नप्रभ सूरिजीने वीरात् ७० वर्ष
पीछे उपकेश पट्टमें श्री महावीर स्वामीकी प्र-
तिष्टा करी सो मंदिर और प्रतिमा आज तक

विद्यमान है, तथा अयरणपुरकी छावनीसें ६ कोसके लगनग कोरंटनामा नगर उज्जम पमा है, जिस जगो कोरटा नामें आजके कालमें गाम वसता है. तहांनी श्रीमहावीरजीकी प्रतिमा मंदिरकी श्रीरत्नप्रन्न सूरिजीकी प्रतिष्ठा करी हुइ अब विद्यमान कालमें सो मंदिर खमाहै, तथा उसवाल और श्रीमालि जो बणिये लोकोंमें श्रावक ज्ञाति प्रसिद्ध है, वेन्नी प्रथम श्रीरत्नप्रन्न सूरिजीनेही स्थापन करीहै, तथा श्रीपार्श्वनाथजीसें १७, सत्तरमें पट्ट ऊपर श्री यक्षदेव सूरि हुए है, वीरात् ५८५ वर्ष जिनोनें बारा वर्षीय कालमें वज्रस्वामीके शिष्य वज्रसेनके परलोक हुए पीछे तिनके चार मुख्य शिष्य जिनकों वज्रसेनजीने सोपारक पट्टणमें दीक्षा दीनी थी, तिनके नामसे चार शाखा तथा कुल स्थापन करे, वे येहैं; ना-

गेंद्र १, चंद्र २, निवृत्त ३, विद्याधर ४, यह चारों कुल जैन मतमें प्रसिद्ध है; तिनमेंसें नागेंद्र कुलमें उदयप्रभ मल्लिषेणसूरि प्रमुख और चंद्रकुलमें वड गच्छ, तप गच्छ, खरतर गच्छ, पूर्णवल्लीय गच्छ, देवचंद्रसूरि कुमारपालका प्रतिबोधक श्रीहेमचंद्र-सूरि प्रमुख आचार्य हुए है. तथा निवृत्तकुलमें श्री शीलांकाचार्य श्रीद्रोणसूरि प्रमुख आचार्य हुएहै. तथा विद्याधरकुलमें १४४४ ग्रंथका कर्त्ता श्रीहरि-भद्रसूरि प्रमुखाचार्य हुए है, तथा मैं इसग्रंथका लिखनेवाला चंद्रकुलमें हुं; तथा पैंतीसमें पट्ट ऊ-पर श्रीदेवगुप्तसूरिजी हुए है. जिनोंके समीपे श्री देवर्द्धिगणि क्षमाश्रमणजीने पूर्व २ दो पढे थे, तथा श्री पार्श्वनाथजीके ४३ मे पट्ट ऊपर श्री कक्क-सूरि पंच प्रमाण ग्रंथके कर्त्ता हुएहै, सो ग्रंथ वि-द्यमानहै तथा ४४ मे पट्ट ऊपर श्रीदेवगुप्तसूरिजी

विक्रमात् १०७२ वर्षे नवपद प्रकरणके करता हुए है, सोभी ग्रंथ विद्यमानहै; तथा श्रीमहावीरजीकी परंपराय वाले आचार्योंने अपने बनाए कितनेक ग्रंथोमें प्रगट लिखाहैकि, जो उपकेश गछहै सो पट्ट परंपरायसें श्रीपार्श्वनाथ २३ तेवीसमें तीर्थ-करसें अविछिन्न चला आताहै; जब जिन आचा-र्योंकी प्रतिमा मंदिरकी प्रतिष्ठा करी हुइ और ग्रंथ रचे हुए विद्यमान है तो फेर तिनके होनेमें जो पुरुष शंसय करताहै तिसकों अपने पिता, पितामह, प्रपितामह आदिकी वंशपरंपरायमेंभी शंसय करनां चाहिये, जैसे क्या जाने मेरी सा-तमी पेढीका पुरुष आगे हुआहैके नही. इस त-रेंका जो शंसय कोइ विवेक विकल करे तिसकों सर्व बुद्धिमान् उन्मत्त कहेंगे. इसी तरें श्रीपार्श्व-नाथकी पट्ट परंपरायके विद्यमान जो पुरुष श्री

पार्श्वनाथ २३ तेवीसमें तीर्थंकरके होनेमे नही करे अथवा शंसय करे तिसकोंभी प्रेक्षावंत पुरुष उन्मत्तोंही पंक्तिमे समझते है, तथा धूर्त्त पुरुष जो काम करताहै सो अपने किसी संसारिक सुखके वास्ते करता है. परंतु सर्व संसारिक इंद्रिय जन्य सुखसे रहित केवल महा कष्ट रूप परंपराय नही चला सक्ताहै, इस वास्ते जैनधर्मका संप्रदाय धूर्त्तका चलया हुआ नही, किंतु अष्टादश दूषण रहित अर्हंतका चलाया हुआहै.

प्र. ८१ कितनेक यूरोपीअन पंडित प्रोफेसर ए. वेवर साहिबादि मनमे ऐसी कल्पना करतेहै कि जैन मतकी रीती बुध धर्मके पुस्तकोंके अनुसारे खडी करीहै, प्रोफेसर वेवर ऐसेंभी मानतेहै कि, बौध धर्मके कितने साधु बुधकों नाकबूल करके बुधके एक प्रतिपक्षीके अर्थात् महा-

वीरके शिष्यबनें और एक वार्त्ता नवीन जोमके जैनमत नामे मत खमाकरा, इस कथनकों आप सत्य मानते होके नही?

उ.–इस कथनकों हम सत्य नही मानते है; क्यों कि प्रोफेसर जेकोबीने आचारंग और कल्पसूत्रके अपने करे हुए इंग्लीश नाषांतरकी उपयोगी प्रस्तावनामें प्रोफेसर ए. वेबर और मी० ए. बाथकी पूर्वोक्त कल्पनाकों जूगी दिखाइहै; और प्रोफेसर जेकोबीने यह सिद्धांत अंतमे बताया है कि जैनमतके प्रतिपक्षीयोंनें जैन मतके सिद्धांत शास्त्रों ऊपर नरोंसा रखनां चाहिये, कि इनमें जो कथनहै सो माननें लायकहै. विशेष देखनां होवेतो माक्तर बूलरसाहिब कृत जैन दंत कथाकी सत्यता वास्ते एक पुस्तकका अंतर हिस्सा नागहै, सो देख लेनां हमबी अपनी बुद्धिके

अनुसारे इस प्रश्नका उत्तर लिखते है. हम उपर जैनमतकी व्यवस्था श्रीपार्श्वनाथजीसें लेके आज तक लिख आएहै, तिससें प्रोफेसर ए. वेवरका पूर्वोक्त अनुमान सत्य नही सिद्ध होताहै. जेकर कदाचित् वौध मतके मूल पिटग ग्रंथोमें ऐसा लेख लिखा हुआ होवेकि, वुधके कितनेक शिष्य वुधकों नाकवूल करके वुधके प्रतिपक्षी निर्ग्रंथोके सिरदार न्यात पुत्रके शिष्य वने; तिनोंने वुधके समान नवीन कल्पना करके जैनमत चलायाहै. जेकर ऐसा लेख होवे तपतो हमकोवी जैनमतकी सत्यता विषे संशय उत्पन्न होवे, तवतो हमभी प्रोफेसर ए. वेवरके अनुमानकी तर्फ ध्यान देवें; परंतु ऐसा लेख उग वुधके पुस्तकोंमे नही है क्योंकि वुधके समयमे श्रीपार्श्वनाथजीके हजारां साधु विद्यमानथे तिनके होते हुए ऐसा पुर्वोक्त

लेख कैसें लिखा जावे, वलके जैन पुस्तकोंमेंतो बुधकी बाबत बहुत लेखहै. श्रीआचारंगकीटीकामें ऐसा लेखहै. मौद्गलिस्वातिपुत्राभ्यां शौद्धोदनिं ध्वजीकृत्य प्रकाशितः अस्यार्थ ॥ मौद्गलिपुत्र अर्थात् मौद्गलायन और स्वातिपुत्र अर्थात् सारीपुत्र दोनोंने शुद्धोदनके पुत्रको ध्वजीकृत्य अर्थात् ध्वजाकी तरें सर्व मताध्यक्षोंसें अधिक ऊंचा सर्वोत्तम रूप करकें प्रकाश्याहै. आचारंगके लेख लिखनेवालेका यह अभिप्रायहै कि शुद्धोदनका पुत्र सर्वज्ञ अतिशयमान् पुरुष नही था, परंतु इन दोनों शिष्योनें अपनी कल्पनासें सर्वसें उत्तम प्रकाशित करा, इस वास्ते बौद्धमत स्वरूचिसें बनाथाहै; तथा श्री आचारंगजीकी टीकामें एक लेख ऐसाभी लिखा है, तच्चनिकोपासकोनेंदवदात्, बुद्धोत्पत्ति कथानकात् द्वेषमुपगछेत्. अर्थ बुधका उपासक आ-

नंद तिसकी बुद्धिके बलसें बुधकी उत्पत्ति हूइहै, जेकर यह कथा सत्यसत्य पर्षदामें कथन करीये तो बौद्धमतके मानने वालोंकों सुनके द्वेष उत्पन्न होवे, इस वास्ते जिस कथाके सुननेसें श्रोताकों द्वेष उत्पन्न होवे तैसी कथा जैनमुनि परिषदामें न कथन करे, इस लेखसें यह आशय हैकि बुधकी उत्पतिरूप सच्ची कथा बुधकी सर्वज्ञता और अति उत्तमता और सत्यता और तिसकी कल्पित कथाकी विरोधनीहै, नहीतो तिसके भक्तोकों द्वेष क्यों कर उत्पन्न होवे, इस वास्ते जैन मत इस अवसर्प्पिणिमे श्री ऋषभदेवजीसें लेकर श्रीमहावीर पर्यंत चौवीस तीर्थंकरोंका चलाया हुआ चलताहै परंतु कल्पित नहीहै.

प्र.८९—बुद्धकी उत्पतिकी कथा आपने किसी स्वेतांबरमतके पुस्तकोमें वांची है ?

उ.—स्वेतांबरमतके पुस्तकोंमेंतो जितना बुधकी बाबत कथन हमने श्री आचारंगजीकी टीकामें देखा बांचाहै तितनातो हमने ऊपरके प्रश्नमें लिख दीयाहै, परंतु जैनमतकी दुसरी शाखा जो दिगंबरमतकीहै तिसमे एक देवसेनाचार्यने अपने रचे हूए दर्शनसार नामक ग्रंथमे बुधकी उत्पत्ति इस रीतीसें लिखीहै. गाथा ॥ सिरि पासणाह तित्थे ॥ सरऊ तीरे पलासणयर त्थे॥ पिहि आसवस्स सीहे ॥ महा लुदो बुद्धकित्ति मुणी ॥१॥ तिमिपूरणासणेया ॥ अहिगयपवज्जावऊपरमन्नठे ॥ रत्तंबरंधरित्ता ॥ पवढ्ढियतेणएयत्तं ॥२॥ मंसस्सनत्थिजीवो जहाफलेदहियदुद्धसक्कराए ॥ तम्हातंमुणित्ता भरकंतोणत्थिपाविठ्ठो॥३॥ मज्जंणवज्जणिज्जं ॥ दव्वदवंऊहजलंतहएदं ॥ इति लोएघोसित्ता पवत्तियंसंघसावज्जं ॥४॥ अणोकरे

दिकम्मं ॥ अणोतंभुंजदीसिद्धंतं ॥ परिकप्पिकऊ-
णणूणं ॥ वसिकिच्चाणिरयमुववणो ॥५॥ इतिइ-
नकी भाषा अथ बौद्धमतकी उत्पत्ति लिखते है.
श्री पार्श्वनाथके तीर्थमें सरयू नदीके कांठे ऊपर
पलासनामे नगरमें रहा हुआ, पिहिताश्रव नामा
मुनिका शिष्य बुद्धकीर्ति जिसका नाम था, ए-
कदा समय सरयू नदीमें वहुत पानीका पुर चढी
आया तिस नदीके प्रवाहमें अनेक मरे हुए, मछ
वहते हुए कांठे ऊपर आ लगे, तिनको देखके
तिस बुद्धकीर्तिने अपने मनमें ऐसा निश्चय क-
राकि स्वतः अपने आप जो जीव मर जावे ति-
सके मांस खानेमे क्या पापहै, तव तिसने अंगी-
कार करी हुइ प्रवज्याव्रत रूप छोड दीनी,अर्थात्
पूर्वे अंगीकार करे हुए धर्मसें भ्रष्ट होके मांस
भक्षण करा. और लोकोंके आगे ऐसा अनुमान

कथन कराकी मांसमें जीव नही है, इस वास्ते इसके खानेमें पाप नही लगताहै. फल, दुध, दहिं तरें तथा मदीरा पीनेमेंजीपाप नही है. ढीला द्रव्य होनेसें जलवत्. इस तरेंकी प्ररूपणा करके तिसने बौध्धमत चलाया, और यहजी कथन करा के सर्व पदार्थ क्षणिकहै, इस वास्ते पाप पुन्यका कर्त्ता अन्यहै, और जोक्ता अन्यहै. यह सिध्धांत कथन करा. बौध्धमतके पुस्तकोमें ऐसाजी लेखहै कि, बुधका एक देवदत्तनामा शिष्य था. तिसनें बुधके साथ बुधकों मांस खाना छुमानेके वास्ते बहुत ऊगडा करा, तोजी शाक्यमुनि बुधनें मांस खाना न छोमा, तब देवदत्तन बुधकों छोम दीया, जब बुधने काल करा था, तिस दिनजी चंदनामा सोनीके घरसें चावलोंकेबीच सूयरका मांसरांधा हुआ खाके मरणको प्राप्त हुआ. यह कथनजी बु-

धमतके पुस्तकोंमें है; और स्वेतांबराचार्य साडे-
तीन करोड़ नवीन श्लोकोंका कर्त्ता श्री हेमचंद्र-
सूरिजीने अपने रचे हूए योगशास्त्रके दूसरे प्रका-
शकी वृत्तिमें यह श्लोक लिखाहै। स्वजन्मकाल
एवात्म, जनन्युदरदारिणः मांसोपदेशदातुश्च, क-
थंशौद्धोदनेर्दया ॥११॥ अर्थ। अपने जन्मकालमें
ही अपनी माता मायाका जिसनें उदर विदारण
करा, तिसके, और मांस खानेके उपदेशके देने-
वाले शुद्धोदनके पुत्रके दया कहांसे थी, अपितु
नही थी. इस ऊपरके श्लोकसें यह आशय निक
लताहै कि जब बुध गर्भमें था, तब तिसके सब
बसें इसकी माताका उदर फट गयाथा. अथवा
उदर विदारके इसको गर्भमेंसें निकाला होवेगा.
चाहो कोइ निमित्त मिला होवे, परंतु इनकीमाता
इनके जन्म देनेसें तत्काल मरगइ थी. तत्काल

मरणांतो इनकी माताका बुध धर्मके पुस्तकोमेंभी लिखाहै. और बुध मांसाहार गृहस्थावस्थामेंभी करता होवेगा, नहीतो मरणांत तकभी मांसके खानेसें इसका चित्त तृप्तही न हूआ ऐसा बौद्धमतके पुस्तकोंसेंही सिद्ध होताहै. इस वास्तेही बौद्धमतके साधु मांस खानेमे घृणा नही करते है, और बेखटके आज तक मांस भक्षण करे जाते है, परंतु कच्चे मांसमें अनगिनत कृमि समानजीव उत्पन्न होते है, वे जीव बुधकों अपने ज्ञानसेंनही दीखे है, इस वास्तेही बुध मतके उपासक गृहस्थ लोक अनेक कृमि संयुक्त मांसकों रांधते है, और खाते है. इस मतमें मांस खानेका निषेध नहीहै, इस वास्तेही मांसाहारी देशोंमें यह मत चलताहै.

प्र.७३–श्रीमहावीरजी छद्मस्थ कितनेकाल कतरहे और केवली कितने वर्ष रहे ?

उ.—बारा वर्ष १२ व ६ मास १५ पंदरा दिन छद्मस्थ रहे. और तीस वर्ष केवली रहेहै.

प्र. ७४—भगवंतने छद्मस्थावस्थामें किस किस जगे चौमासे करे. और केवली हुए पीछे किस किस जगे चौमासे करेथे ?

उ.—अस्थि ग्राममें १, दुसरा राजगृहमें, २, तीसरा चंपामें ३, चौथा पृष्ट चंपामें ४, पांचमा भाद्दिकामें ५, छठा भद्दिकामें ६, सातमा आलंभियामें ७, आठमा राजगृहमे ८ नवमाअनार्यदेशमे ९, दशमा सावत्थिमे १०, इग्यारमा विशालामे ११, बारमा चंपामे १२, येह १२ छद्मस्थावस्थाके चौमासे करे केवली हुए. पीछे १२ राजगृहमें ११ विशालामें ६ मिथलामें १ पावापुरीमें एवं सर्व ३० हुए.

प्र. ७५--श्रीमहावीरस्वामीका निर्वाण किस जगें और कब हुआ था ?

उ–पावापुरी नगरीके हस्तिपाल राजाकी दफतर लिखनेकी सन्नामें निर्वाण हुआथा, ओर विक्रमर्मे ४७० वर्ष पहिलें और संप्रति कालके १एध५ के सालमें २४१५ वर्ष पहिलें निर्वाण हुआथा.

प्र. ७६–जिस दिन भगवंतका निर्वाण हुआ था सो कौनसा दिन वा रात्रिथी ?

उ,–भगवंतका निर्वाण कार्त्तिक वदि अमावस्याकी रात्रिके अंतमें हुआथा.

प्र. ७७– तिस दिन रात्रिकी यादगीरी वास्ते कोइ पर्व हिंडुस्थानमे चलताहै वा नही ?

उ.–हिंडु लोकमें जो दिवालीका पर्व चलताहै, सो श्री महावीरके निर्वाणके निमित्तसें चलताहै.

प्र. ७८–दिवालिकी उत्पत्ति श्री महावीरके निर्वाणसें किसतरें प्रचलित हुइहै ?

उ.–जिस रात्रिमें श्रीमहावीरका निर्वाण हुआ था, तिस रात्रिमें नव मल्लिक जातिके राजे और नव लेछकी जातिके राजे जो चेटक महाराजाके सामंत थे, तिनोंने तहां उपवास रूप पोषध करा था, जब भगवंतका निर्वाण हुआ तब तिन अगारहही राजायोंने कहा कि इस भरतखंडसें भाव उद्योत तो गया, तिसकी नकलरूप हम द्रव्योद्योत करेंगें, तब तिन राजायोंनें दीपक करे, तिस दिनसे लेकर यह दीपोत्सव प्रवृत्त हुआ है. यह कथन कल्पसूत्रके मुल पाठमें है. जो अन्य मतवाले दिवालीका निमित्त कथन करतेहै, सो कल्पितहै क्योंकि किसि मतके भी मुख्य शास्त्रमें इस पर्वको उत्पत्तिका कथन नही है.

प्र. ८९–भगवंतके निर्वाण होनेके समयमें

शक्रइंद्रे आयु वधावनेके वास्ते क्या विनती करी थी, और भगवंत श्री महावीरजीयें क्या उत्तर दीनाथा ?

उ.—शक्रइंद्रे यह विनती करीथी के, हे स्वामि एक क्षणमात्र अपना आयु तुम वधावो, क्योंकि तुमारे एक क्षणमात्र अधिक जीवनेसें तुमारे जन्म नक्षत्रोपरि भस्म राशिनामा तीस ३० मा ग्रह आया है, सो तुमारे शासनकों पिडा नही दे सकेगा, तव भगवंतने ऐसे कहाके हे इंद्र, यह पीछे कदेइ हूआ नही, और होवेगाभी नही कि कोइ आयु वधा सके; और जो मेरे शासनकों पीडा होवेगी सो अवश्य होनहार है, कदापी नही टलेगी.

प्र. ९७—तवतो कोइभी देह धारी आयु नही वधा सक्ताहै यह सिद्ध हूआ ?

उ.—हां, कोइभी क्षणमात्र आयु अधिक नही वधा सक्ता है.

प्र.९१—कितनेक मतावलंबी कहतेहै कि योगाभ्यासादिके करनेसें आयु वध जाताहै, यह कथन सत्यहै वा नही ?

उ.—यह निकेवल अपनी महत्वता वधाने वास्ते लोकों गप्पे ठोकतेहै, क्योंकी चौवीस तीर्थंकर, ब्रह्मा, विष्णु, महेश, पातंजली, व्यास, ईशामसीह, महम्मद प्रमुख जे जगतमें मतचलाने वाले समर्थ पुरुष गिने जातेहै, वेभी आयु नही वधा सकेहै, तो फेर सामान्य जीवोंमें तो क्या शक्तिहै जो आयु वधा सके; जेकर किसीने वधाइ होवे तो अब तक जीता क्यों नही रहा.

प्र. ९२—भगवंतका भाइ नंदिवर्द्धन, और भगवंतकी संसारावस्थाकी यशोदा स्त्री और भग-

वंतकी बेटी प्रियदर्शना, और भगवंतका जमाइ जमाली, इनका क्या वर्त्तत हूआ था ?

उ.—नंदीवर्द्धन राजातो श्रावक धर्म पालता रहा और यशोदाजी श्राविका तो थी, परंतु यशोदाने दीक्षा लीनी मैंने किसी शास्त्रमें नही वांचाहै. और भगवंतकी पुत्रीने एक हजार स्त्रीयोंके साथ और जमाइ जमालिने ५०० पांचसौ पुरुषोंके साथ भगवंत श्री महावीरजीके पास दीक्षा लीनीथी.

प्र. ए३—श्रीमहावीर भगवंतने जो अंतमें सोलां पोहर तक देशना दीनीथी, तिसमे क्या क्या उपदेश कराथा ?

उ.—भगवंतने सर्वसें अंतकी देशनामें ५५ पचपन अशुभ कर्मोंके जैसें जीव भवांतरमें फल भोगतेहै, ऐसे अध्ययन और पचपन ५५ शुभ

कर्मोंके जैसे ज्ञवांतरमें जीव फल ज्ञोगतेहै, ऐसे अध्ययन ओर ढत्तीस ३६ विना पूढयां प्रश्नोके उत्तर कथन करके पीढे ५५, पचपन शुज्ञ विपाक फल नामे अध्ययनोंमेंसें एक प्रधान नामे अध्ययन कथन करते हुए निर्वाण प्राप्त हुए थे. यह कथन संदेह विषौषधो नामे ताड पत्रोपर लिखी हुइ पुरानी कल्पसूत्रकी टीकामें है. येह सर्वाध्ययन श्री सुधर्मास्वामीजीने सूत्ररूप गूंथे होवेंगे के नही, ऐसा लेख मेरे देखनेमें किसी शास्त्रमें नही आया है.

प्र. ए४- जैनमतमे यह जो रूढिसें कितनेक लोक कहते है कि श्री उत्तराध्ययनजीके ढत्तीस अध्ययन दिवालीकी रात्रीमें कथन करके ३७ सैंतीसमा अध्ययन कथम करते हुए मोक्ष गये, यह कथन सत्य है, वा नही ?

उ.—यह कथन सत्य नही, क्योंकि कल्प-
सूत्रकी मूल टीकासें विरुद्धहै, और श्री भद्रबा·
हुस्वामीने उत्तराध्ययनकी निर्युक्तिमें ऐसा कथन
कराहै कि उत्तराध्ययनका दूसरा परीषहाध्ययनतो
कर्मप्रवाद पुर्वके १७ सत्तरमें पाहुममें उद्धार क-
रके रचाहै, और आठमाध्ययन श्री कपिल केव-
लीने रचाहै, और दशमाध्ययन जब गौतमस्वामी
अष्टापदसें पीछे आएहै, तब भगवंतने गौतमको
धीर्य देने वास्ते चंपानगरीमें कथन करा था, और
२३ मा अध्ययन केशीगौतमके प्रश्नोत्तर रूप
स्थिवरोने रचाहै. कितने अध्ययन प्रत्येकबुद्धि
मुनियोके रचे हुएहै. और कितनेक जिन भाषित
है. इस वास्ते उत्तराध्ययन दिवालीकी रात्रीमे
कथन करासिद्ध नही होताहै.

प्र. ९५—निर्वाण शब्दका क्या अर्थ है ?

उ.—सर्व कर्म जन्य उपाधि रूप अग्निका जो बुझ जाना तिसकों निर्वाण कहते है, अर्थात सर्वोपाधिसें रहित केवल, शुद्ध, बुद्ध सच्चिदानंद रूप जो आत्माका स्वरूप प्रगट होना, तिसकों निर्वाण कहते है.

प्र. ८६—जीवकों निर्वाण पद कब प्राप्त होता है?

उ. जब शुभाशुभ सर्व कर्म जीवके नष्ठ हो जातेहै तब जीवको निर्वाणपद प्राप्त होताहै.

प्र. ८७—निर्वाण हूआ पीछे आत्मा कहां जाता है, और कहां रहताहै?

उ.—निर्वाण हूआ पीछे आत्मा लोकके अग्र भागमे जाताहै, और सादिअनंत काल तक सदा तहांही रहताहै.

प्र. ८८—कर्म रहित आत्माकों लोकाग्रमें

कौन ले जाताहै ?

उ.—आत्मामें ऊर्ध्वगमन स्वभावहै, तिससें आत्मा लोकाग्र तक जाताहै.

प्र. ९९—आत्मा लोकाग्रसें आगे क्यों नही जाताहै ?

उ.—आत्मामें ऊर्ध्वगमन स्वभाव तो है, परंतु चलनेमे गति साहायक धर्मास्तिकाय लोकाग्रसें आगे नहीहै, इस वास्ते नही जाताहै. जैसें मछमे तरनेकी शक्तितो है, परंतु जल विना नही तरसक्ताहै, तैसें मुक्तात्माभी जानना.

प्र. १००—सर्व जीव किसी कालमें निर्वाण पद पावेंगे के नही ?

उ.—सर्व जीव निर्वाण पद किसी कालमें भी नही पावेंगे.

प्र. १०१—क्या सर्व जीव एक सरीखे नही

है जिससें सर्व जीव निर्वाण पद नही पावेगें.

उ.—जीव दो तरे के है; एक भव्य जीवहै १, दुसरे अभव्य जीवहै; तिनमें जो अभव्य जीव होवेतो कदेभी निर्वाण पदको प्राप्त नही होवेगें, क्योंकि तिनमें अनादि स्वभावसेंही निर्वाण पद प्राप्त होनेकी योग्यताही नही है; और जो भव्य जीवहै तिनेंमे निर्वाणपद पावनेकी योग्यता तो है, परंतु जिस जिसको निर्वाण होनेके निमित्त मिलेंगे वे निर्वाणपद पावेंगे, अन्य नही.

प्र. १०४—सदा जीवोंके मोक्ष जानेसे किसी कालमें सर्व जिव मोक्षपद पावेंगे, तबतो संसारमें अभव्य जीवही रह जावेंगे, और मोक्ष मार्ग बंद हो जावेगा ?

उ.—भव्य जीवांकी राशि सर्व आकाशके प्रदेशोंकी तरे अनंत तथा अनागत कालके सम-

यकी तरें अनंतहै कितनाही काल व्यतीत होवे तोभी अनागत कालका अंत नही आताहै, इसी तरें सदा मोक्ष जानेसें जीवभी खूटते नही है. इस लोकमें निगोद जीवांके असंख्य शरीर है एकैक शरीरमें अनंत अनंत जीवहै एक शरीरमें जितने अनंत अनंत जीव है, तिनमेंसे अनंतमे भाग प्रमाण जीवअतीत कालमें मोक्षपद पायेहै; और तिनमेंसे अनंतमें भाग प्रमाण अनंत जीव अनागत कालमें मोक्ष पद पावेंगे, इस वास्ते मोक्ष मार्ग बंद नही होवेगा.

प्र. १०३—आत्मा अमरहैके नाशवंत है ?

उ.--आत्मा सदा अविनाशी है, सर्वथा नाशवंत नही है.

प्र. १०४--आत्मा अमर है अविनाशी है इस कथनमें क्या प्रमाण है ?

उ.—जिस वस्तुकी उत्पत्ति होतीहै, सो नाशवंत होता है, परंतु आत्माकी उत्पत्ति नही हुइहै, क्योंकि जिस वस्तुकी उत्पत्ति होतीहै तिसका उपादान अर्थात् जिसकी आत्मा बन जावे जैसें घटका उपादान मिट्टीका पिंड है, सो उपादान कारण कोइ अरूपी ज्ञानवंत वस्तु होनी चाहिये, जिसमें आत्मा बने, ऐसा तो आत्मासें पहिलां कोइभी उपादान कारण नही है; इसवास्ते आत्मा अनादि अनंत अविनाशी वस्तु है.

प्र १०५—जेकर कोइ ऐसे कहे आत्माका उपादान कारण ईश्वर है, तबतो तुम आत्माको अनित्य मानोगेके नही.

उ—जब ईश्वर आत्माका उपादान कारण मानोगे, तबतो ईश्वर ओर सर्व अनंत संसारी आत्मा एकही हो जावेगे, क्योंके कार्य अपणे

उपादान कारणसें भिन्न नही होता है.

प्र. १०६--ईश्वर और सर्व संसारि आत्मा एकही सिद्ध होवेगेतो इसमे क्या हानि है ?

उ.--ईश्वर और सर्व संसारी आत्मा एकही सिद्ध होवेगे तो नरक तिर्यंचकी गतिमेंभी ईश्वरही जावेगा, और धर्माधर्मभी सर्व ईश्वरही करनवाला और चौर, यार, लुच्चा, लफंगा, अगम्य गामी इत्यादि सर्व कामका कर्ता ईश्वरही सिद्ध होवेगा, तबतो वेदपुराण, बैबल, कूरान प्रमुख शास्त्रभी ईश्वरने अपनेही प्रतिबोध वास्ते रचे सिद्ध होवेगे, तबतो ईश्वर अज्ञानी सिद्ध होवेगा. जब अज्ञानी सिद्ध हुआ तबतो तिसके रचे शास्त्रभी जूठे और निष्फल सिद्ध होवेगे, ऐसे जब सिद्ध होगा तबतो माता, बहिन, बेटीके गमन करनेकी शंका नही रहेगी, जिसके मनमें जो

आवे सो पाप करेगा, क्योंके सर्व कुछ करने क-
राने फल भोगने भुक्ताने वाला सर्व ईश्वरही
है, ऐसे माननेमे तो जगतमे नास्तिक मत खमा
करना सिद्ध होवेगा.

प्र. १०७—जीवको पुनर्जन्म किस कारणसे
करणा पडता है !

उ -जीवहिंसा, १ जूठ बोलना, २ चौरि
करनी; ३ मैथुन, स्त्रीसें भोग करना, ४ परिग्रह
रखना, ५ क्रोध ६ मान ७ माया ८ लोभ ९ एवं
ए राग १० द्वेष ११ कलह १२ अभ्याख्यान अ
र्थात् किसीको कलंक देना १३ पैशुन, १४ प
रकी निंदा करनी १५ रति अरति १६ मायामृषा
१७ मिथ्यादर्शन शल्य, अर्थात् कुदेव, कुगुरु, कु-
धर्म, इन तीनोको सुदेव; सुगुरु; सुधर्म करके
मानना १८. जब तक जीव येह अष्टादश पाप

सेवन करताहै, तबतक इसकों पुनर्जन्म होताहै.

प्र. १०८—जीवकों पुनर्जन्म बंध होनेका क्या रस्ताहै ?

उ.--ऊपर लिखे हुइ अष्टादश पापका त्याग करे, और पूर्व जन्मांतरोमें इन अष्टादश पापोंके सेवनेसे जो कर्मोंका बंध कराहै, तिसकों अर्हंतकी आज्ञानुसार ज्ञान श्रद्धा जप तप करनेसें सर्वथा नाश करे तो फेर पुनर्जन्म नही होताहै.

प्र. १०९—तीर्थंकर महाराजके प्रभावसें अपना कल्याण होवेगा, के अपनी आत्माकेगुणोके प्रभावसें हमारा कल्याण होवेगा ?

उ.—अपनी आत्माका निज स्वरुप केवल ज्ञान दर्शनादि जब प्रगट होवेगे, तिसके प्रभावसें हमारी तुमारी मोक्ष होवेगी.

प्र. ११०— जेकर निज आत्माके गुणोंसे-

मोक्ष होवेगा, तबतो तीर्थंकर भगवंतकी भक्ति करनेका क्या प्रयोजन है ?

उ.—तीर्थंकर भगवंतकी भक्ति करनेमें तीर्थंकर भगवंत निमीत्त कारणहै. विना निमत्तके अपनी आत्माके गुणरुप उपादान कारण कदेइ फल नही देताहै. तीर्थंकर निमित्तभूत होवे तब भक्तिरुप उपादान कारण प्रगट होताहै तिससेंही; आत्माके सर्व गुण प्रगट होतेहै, तिनसें मोक्ष होताहै. जैसे घट होनेमे मिट्टी उपादान कारनहै, परंतु विना कुलाल चक्र दंड चीवरादि निमित्तके कदापि घट नहि होताहै, तैसेंही तीर्थंकर रुप निमित्त कारण विना आत्माको मोक्ष नही होता है, इस वास्ते तीर्थंकरकी भक्ति अवश्य करने योग्यहै.

प्र. ११९—जगतमें जीव पुन्य पाप करतेहै

तिनके फलका देनेवाला परमेश्वरहै वा नही?

उ.—पुन्य पापके फलका देनेवाला परमेश्वर नही है.

प्र. ११३—पुन्य पापके फलका दाता ईश्वर मानिये तो क्या हरज है?

उ.—ईश्वर पुन्य पापका फल देवे तब तो ईश्वरकी ईश्वरताकों कलंक लगता है.

प्र. ११४—क्या कलंक लगताहै?

उ.—अन्यायता, निर्दयता, असमर्थता अज्ञानतादि.

प्र. ११५—अन्यायता दूषण ईश्वरकों पुन्य पापके फल देनेसें कैसें लगताहै?

उ.—जब एक आदमीनें तलवारादिसें किसी पुरुषका मस्तक छेदा, तब मस्तकके छिदनेसें उस पुरुषकों जो महा पीडा जोगनी पडीहै,

सो फल ईश्वरने दुसरे पुरुषके हाथसें उसका मस्तक कटवाके भुक्ताया, तद पीछे तिस मारने वालेकों फांसी आदिकसें मरवाके तिसकों तिस शिर छेदन रूप अपराधका फल भुक्ताया, ईश्वरनें पहिलां तिसका शिर कटवाया, पीछे तिसकों फांसी देके तिस शिर छेदनेका फल भुक्ताया; ऐसे काम करनेसें ईश्वर अन्यायी सिद्ध होताहै.

प्र. ११६–पुन्य पापके फल भुक्तानेसें ईश्वरमें निर्दयता क्यों कर सिद्ध होतीहै?

उ.–जब ईश्वर कितने जीवांकों महा दुखी करताहै, तब निर्दयी सिद्ध होताहै, शास्त्रोंमेंतो ऐसें कहताहै किसी जीवकों मत मारना, दुखीभी न करनां, भूखेकों देखके खानेकों देनां, और आप पूर्वोक्त काम नही करताहै, जीवांकों मारताहै, महा दुखी करताहै. भूखसें लाखो क

रोगो मनुष्य कालादिमें मर जातेहै, तिनकों खानेकों नही देताहै इस वास्ते निर्दयी सिद्ध होताहै.

प्र. ११७—ईश्वरतो जिस जीवने जैसा जैसा पुन्य पाप कराहै तिसको तैसा तैसा फल देता है. इसमे ईश्वरकों कुछ दोष नहि लगताहै, जैसें राजा चौरकों दंड देताहै और अछे काम करने वालेकों इनाम देताहै.

उ.—राजातो सर्वचोरांकों चोरी करनेसें बंद नही कर सकता है. चाहतातोहै कि मेरे राज्यमें चोरी न होवेतो ठीकहै, परंतु ईश्वरकों तो लोक सर्व सामर्थ्यवाला करतेहै, तो फेर ईश्वर सर्व जीवांकों नवीन पाप करनेसे क्यों नही मनै करताहै. मनै न करनेसें ईश्वर जान बुझके जीवोसें पाप करताहै. फेर तिसका दंड देके जी

वोंकों दुखी करताहै. इस हेतुसेंही अन्यायी, निर्दयी, असमर्थ ईश्वर सिद्ध होताहै. इस वास्ते ईश्वर जगवंत किसीकों पुन्य पापका फल नही देताहै. इस चर्चाका अधिक स्वरुप देखनां होवे तो हमारा रचा हुआ जैनतत्वादर्शनामा पुस्तक वांचनां.

प्र. ११७—जव ईश्वर पुन्य पापका फल नहीं देता है, तो फेर पुन्य पापका फल क्योंकर जीवांको मिलताहै ?

उ.—जव जीव पुन्य पाप करतेहै तव तिनके फल जोगनेके निमित्तजी साथही होनेवाले वनाता करताहै, तिन निमित्तो द्वारा जीव शुजाशुभ कर्मोका फल जोगतेहै, तिन निमित्तोका नामही अज्ञ लोकोने ईश्वर रख गेराहै.

प्र. ११९—जगतका कर्ता ईश्वर है के नही?

उ.—जगततो प्रवाहसें अनादि चला आता है, किसीका मूलमें रचा हुआ नही है. काल १ स्वभाव २ नियते ३ कर्म ४ चेतन आत्मा और जड पदार्थ इनके सर्व अनादि नियमोसें यह जगत विचित्ररूप प्रवाहसें चला हुआ उत्पाद व्यय ध्रुव रुपेसें इसी तरे चला जायगा.

प्र. १२०—श्री महावीरस्वामीए तीर्थंकरो-की प्रतिमा पूजनेका उपदेश कराहै के नही ?

उ.—श्री महावीरजीने, जिन प्रतिमाकी पूजा द्रव्ये और भावेतो गृहस्थकों करनी बतायि है और साधुयोंकों भावपूजा करनी बताइ है.

प्र. १२१—जिन प्रतिमाकी पूजा विना जिन-की भक्ति हो शक्तीहै के नही ?

उ.—प्रतिमा विना भगवंतका स्वरुप स्मरण नही हो शक्ताहै, इस वास्ते जिन प्रतिमा

विना गृहस्थलोकोसे जिनराजकी भक्ति नही हो सक्ती है.

प्र. १२२—जिन प्रतिमातो पाषाणादिककी बनी हुइहै, तिसके पूजने गुणस्तवन करनेसें क्या लाभ होताहै ?

उ.—हम पत्थर जानके नही पूजतेहै, किन्तु तिस प्रतिमा द्वारा साक्षात् तीर्थंकर भगवंतकी पूजा स्तुति करतेहै. जैसे सुंदर स्त्रीकी तसवीर देखनेसे असल स्त्रीका स्मरण होकर कामी काम पीडित होताहै तैसेही जिन प्रतिमाके देखनेसें भक्तजनोको असली तीर्थंकरका रूपका स्मरण होकर भक्तोंका जिन भक्तिसें कल्याण होता है.

प्र. १२३—जिन प्रतिमाकी फूलादिसें पूजा करनेसें श्रावकोंको पाप लगताहै के नही ?

उ.—जिन प्रतिमाकी फूलादिसें पूजा कर-

नेसें संसारका क्षय करे, अर्थात् मोक्ष पद पावे; और जो किंचित् द्रव्य हिंसा होतीहै, सो कूपके दृष्टांतसें पूजाके फलसेही नष्ट होजातिहै, यह कथन आवश्यक सूत्रमेंहै.

प्र. १२४- सर्व देवते जैनधर्मी है ?

उ.—सर्व देवते जैनधर्मी नहीहै, कितनेकहै.

प्र. १२५—जैनधर्मी देवताकी स्तुति श्रावक साधु करे के नही ?

उ.—सम्यग् दृष्टी देवताकी स्तुति करनी जैनमतमें निषेध नही, क्योंकि श्रुत देवता ज्ञानके विघ्नोकों दुर करतेहै, सम्यग् दृष्टी देवतेधर्ममे होते विघ्नोकों दुर करतेहै, और कोइ भोला जीव इस लोकार्थके वास्ते सम्यग् दृष्टि देवतायोंका आराधन करेतो तिसकाभी निषेध नही है, साधुभी सम्यग दृष्टि देवताका आराधन स्तु-

ति जैनधर्मकी उन्नति तथा विघ्न दुर करने वास्ते करेतो निषेध नही. यह कथन पंचाशकादि शास्त्रोंमें है.

प्र. १२६—सर्व जीव अपने करे हूए कर्मका फल भोगते है, तो फेर देव ते क्या करसक्ते है.

उ.—जैसें अशुभ निमित्तोकें मिले अशुभ कर्मका फल उदय होता है, तैसे शुभ निमित्तोके मिलनेसें अशुभ कर्मोदय नष्टभी हो जाता है, इस वास्ते अशुभ कर्मोंके उदयकों दुर करनेमे देवताभी निमित्त है.

प्र. १२७—जैनधर्मी अथवा अन्यमति देवते विना कारण किसीकों दुख दे सक्ते है के नही ?

उ.—जिस जीवके देवताके निमित्तसें अ-

शुभ कर्मका उदय होना है तिसकों, तो द्वेषादि कारणसे देवते दुख दे सक्तेहै, अन्यको नही.

प्र. १९८–संप्रतिराजा कौन था ?

उ.–राजगृह नगरका राजा श्रेणिक जिसका दुसरा नाम भंभसार था, तिसकी गद्दी ऊपर तिसका बेटा अशोकचंद्र दूसरा नाम कोणिक बैठा, तिसने चंपानगरीकों अपनी राजधानी करी, तिसकै मरां पिछे तिसकी गद्दी ऊपर तिसका बेटा उदायि बैठा, तिसने अपनी राजधानी पाडलीपुत्र नगरमें करी सो उदायि विना पुत्रके मरण पाया; तिसकी गद्दी उपर नायिका पुत्र नंद बैठा, तिसकी नव पेढीयोने नंदही नामसें राज्य करा, वे नव नंद कहलाए नवमें नंद की गद्दी उपर मौर्यवंशी, चंद्रगुप्तराजा बैठा, तिसकी गद्दी उपर तिसका पुत्र बिंदुसार बैठा,

तिसकी गद्दी ऊपर तिसका बेटा अशोकश्रीराजा बैठा, तिसका पुत्र कुणाल आंखासें अंधाथा इस वास्ते तिसकों राज गद्दी नही मिली, तिस कुणालका पुत्र संप्रति हुआ, सो जिस दिन जन्म्याथा तिस दिनही तिसकों अशोकश्री राजाने अपनी राज गद्दी ऊपर बैठाया, सो संप्रति नामे राजा हुआहै, श्रेणिक १ कोणिक २ उदायि ३ यह तीनो तो जैनधर्मी थे. नव नंदोकी मुझे खबर नही, कौनसा धर्म मानते थे. चंद्रगुप्त १ बिंडुसार ए दोनो जैनी राजे थे, अशोकश्रीभी जैनराजा था, पीछेसें केइक बौद्धमति हो गया कहतेहै, और संप्रति तो परम जैनधर्मीराजा था.

प्र. १२ए—संप्रति राजाने जैनधर्मके वास्ते क्या क्या काम करेथे.

उ.—संप्रतिराजा सुहस्ति आचार्यका आ-

बक शिष्य १२ वारां व्रतधारी था; तिसने द्रविड़ अंध्र करणाटादि और काबुल कुराशानादि अनार्य देशोमें जैनसाधुयोका विहार करके तिनके उपदेशसें पूर्वोक्त देशोमें जैनधर्म फैलाया और निनानवे ९९००० हजार जीर्ण जिन मंदरोंका उद्धार कराया, और छव्वीस २६००० हजार नवीन जिनमंदिर बनवाए थे, और सवाकिरोड़ १२५००००० जिन प्रतिमा नवीन बनवाइ थी, जिनके बनाए हूए जिनमंदिर गिरनार नडोलादि स्थानोमे अबभी मौजूद खड़ेहै, और तिनकी बनवाइ हुइ सैंकड़ो जिन प्रतिमाभी महा सुंदर विद्यमान कालमे विद्यमान है; और संप्रति राजा ने ७०० सौ दानशाला करवाइ थी. और प्रजाके महा हितकारी उषधशालादिभी बनवाइ थी, इत्यादि संप्रतिराजाने जैनमतकी वृद्धि और प-

ज्ञावना करी थी. विरात् २९१ वर्ष पीछे हुआ है,

प्र. १३०—मनुष्योंमे कोइ ऐसी शक्ति वि॰ द्यमानहै कि जिसके प्रज्ञावसें मनुष्य अद्भुत काम कर सक्ताहै ?

उ.—मनुष्यमें अनंत शक्तियों कर्माके आ॰ वरणोसें ढंकी हुइहै, जेकर वे सर्व शक्तियां आव॰ रण रहित हो जावेंतो मनुष्य चमत्कारी अद्भुत काम कर सक्तेहै.

प्र. १३१—वेशक्तियां किसने ढांक गेरुीहै ?

उ. आठ कर्माकी अनंत प्रकृतियोने आ॰ छादन कर गेरुीहै.

प्र. १३२ हमनेतो आठ कर्मकी १४८ वा १५८ प्रकृतियां सुनीहै, तो तुम अनंत किस तरेसें कहेते है ?

उ. — १४८ वा १५८ यह मध्य प्रकृ॰

तियांके नेदहै, और उत्कृष्ट तो अनंत नेद है, क्योंके आत्माके अनंत गुणहै, तिनकै ढांकनेवालीयां कर्म प्रकृतियांभी अनंत है.

प्र. १३३—मनुष्यमें जो शक्तियां अद्‌भुत काम करनेवालीयांहै तिनका थोमासा नाम लेके बतलाउ, और तिनका किंचित् स्वरूपभी कहो, और यह सर्व लब्धियां किस जीवकों किस कालमें होतीयांहै ?

उ.—आमोसहि लद्धी १ जिस मुनिके हाथादिके स्पर्श लगनेसें रोगीका रोग जाए, तिसका नाम आमर्षौषधि लब्धि है, मुनि तिस लब्धिवाला कहा जाताहै, यह लब्धि साधुकोंही होती है.

विप्पोसही लद्धी २—जिस साधुके मलमूत्रके लगनेसें रोगीका रोग जाए, तिसका नाम

विट्पोषधि लब्धि है, इस लब्धिवाले मुनिका मल, विष्टा और मूत्र सर्व कर्प्पूरादिवत् सुगंधिवाला होता है, यह लब्धि साधुकोंही होतीहै.

खेलोसहि लद्धी ३—जिस साधुका श्लेष्म थूंकही उषधिरूप है, जिस रोगीके शरीरकों लग जावेतो तत्काल सर्व रोग नष्ट हो जावे, यह सुगंधित होताहै, यह लब्धि साधुकों होती है, इसकों श्लेष्मोपधि लब्धि कहतेहै.

जल्लोसहि लद्धी ४—जिस साधुके शरीरका पसीना तथा मैलभी रोग दूर कर सके, तिसकों जल्लोषधि लब्धि कहते है, यहभी साधुकोंही होती है.

सव्वोसहि लद्धी ५ जिस साधुके मलमूत्र केश रोम नखादिक सर्वोपधि रूप हो जावे सर्व रोग दूर कर सकें, तिसको सर्वोपधि लब्धि कह

तेहै, यह साधुकों होतीहै.

संभिन्नासोए लद्धी ६—जो सर्व इंड्रियोंसे सुणे, देखे, गंध सूंघे, स्वाद लेवे, स्पर्श जाणे एकैक इंड्रियसें सर्व इंड्रियांकी विषय जाणे अथवा बारा योजन प्रमाण चक्रवर्तिकी सेनाका पडाव होताहै, तिसमे एक साथ वाजते हुए सर्व वाजिंत्रोंको अलग अलग जान सके तिसको संभिन्न श्रोत्र लब्धि कहतेहै, यह साधुकों होती है.

उहिनाण लद्धी ७—अवधिज्ञानवंतको अवधिज्ञान लब्धि होती है, यह चारो गतिके जीवांको होतीहै, विशेष करके साधुकों होतीहै.

रिजुमइ लद्धी ८—जिस मनः पर्यायज्ञानसें सामान्य मात्र जाणें; जैसें इस जीवने मनमें घट चिंतन कराहै इतनाही जाणे, परंतु ऐसा न जानकि वैसा घट किस क्षेत्रका उत्पन्न हूआ किस

केवल लब्धी १२—जिस मनुष्यको केवल ज्ञान होवे, तिसकों केवल नामे लब्धि है.

गणहर लब्धी १३—जिससें अंतर मुहूर्त्तमें चौदह पूर्व गूंथे और गणधर पदवी पामे, तिसकों गणधर लब्धि कहते है.

पुव्वधर लब्धि १४ जिससें चौदह पूर्व दश पूर्वादि पूर्वका ज्ञान होवे, सो पूर्वधर लब्धि.

अरहंत लब्धी १५—जिससें तीर्थंकर पद पावे, सो अरहंत लब्धि.

चक्कवट्टि लब्धी १६—चक्रवर्त्तीकों चक्रवर्त्ती लब्धि.

वलदेव लब्धी १७—बलदेवकों बलदेव लब्धि.

वासुदेव लब्धी १८—वासुदेवकों वासुदेवकी लब्धि.

खीरमहुसप्पिआसव लब्धी १९—जिसके

वचनमें ऐसी शक्तिहै कि तिसकी वाणी सुणके श्रोता ऐसा तृप्त हो जावेके मानु दूध, घृत, शाकर, मिसरीके खानेसे तृप्त हुआहै, तिसको खीर मधुसर्पि आसव लब्धि कहते हैं, यह साधुको होती है.

कुठय बुद्धि लब्धी २०—जैसे वस्तु कोठेमें पडी हुइ नाश नही होतीहै, ऐसेही जो पुरुष जितना ज्ञान शीखे सो सर्व वैसेका तैसाही जन्मपर्यंत भूले नही, तिसका कोष्टक बुद्धि लब्धि कहते है.

पयाणुसारी लब्धी २१— एक पद सूननेसें संपूर्ण प्रकरण कह देवे, तिसको पदानुसारी लब्धि कहते है.

बीयबुद्धि लब्धी २२— जैसें एक बीजसें अनेक बीज उत्पन्न होतेहै, तैसेही एक वस्तुके स्व

रूपके सुननेसे जिसको अनेक प्रकारका ज्ञान होवे, सो बीजबुद्धि लब्धि है.

तेउलेसा लद्धी २३—जिस साधुके तपके प्रभावसें ऐसी शक्ती उत्पन्न होवेके जेकर क्रोध चढे तो मुखक फुंकारेसें कितनेही देशांको बाल के भस्म कर देवे, तिसकों तेजोलेश्या लब्धि कहते है.

आहारए लद्धी २४—चउदह पूर्वधर मुनि तीर्थंकरकी रुद्धि देखने वास्ते, १ वा कोइ अर्थ अवगाहन करने वास्ते अथवा अपना संशय दूर करने वास्ते अपने शरीरमें हाथ प्रमाण स्फटिक समान पूतला काढके तीर्थंकरके पास भेजताहै. तिस पूतलेसें अपने कृत्य करके पाछा शरीरमें संहार लेताहै तिसका आहारक लब्धि कहतेहै,

सीयलेसा लद्धी २५—तपके प्रभावसें मु-

निकों ऐसी शक्ति उत्पन्न होतीहै के जिससें तेजो लेश्याकी उष्णताकों रोक देवे, वस्तुकों दग्ध न होने देवे, तिसकों शीतलेशा लब्धि कहते है.

वेउव्विदेह लद्धी २६ जिसकी सामर्थसें अणुकी तरें सूक्ष्म कण मात्रमें हो जावे, मेरुकी तरें भारी देह कर लेवे, अर्क तुलकी तरें लघु हलका देह कर लेवे, एक वस्त्रमेंसें वस्त्र करोमों और एक घटमेंसें घट करोमों करके दिखला देवे, जैसा इछे तैसा रुप कर सके, अधिक अन्य क्या कहिये, तिसका नाम वैक्रिय लब्धि है.

अरकीणमहाणसी लद्धी २७–जिसके प्रभावसें जिस साधुनें आहार आणाहै, जहां तक सो साधु न जीमे तहां तक चाहो कितनेही साधु तिस भिक्षामेंसे आहार करे तोभी खूटे नही, तिसकों अक्षीणमहानसिक लब्धि कहते है.

पुलाय लब्धी २८—जिसके प्रभावसें धर्मकी रक्षा करने वास्ते धर्मका द्वेषी चक्रवर्त्यादिकों सेना सहित चुर्ण कर शके, तिसकों पुलाकलब्धि कहते है.

पूर्वोक्त येह लब्धीयां पुन्यके और तपके और अंतःकरणके वहुत शुद्ध परिणामोंके होनेसें होतेहे, ये सर्व लब्धियां प्रायें तीसरे चौथे आरेमेही होतीयांहै, पंचम आरेकी शरूआतमेंभी हो तीयां है.

प्र. १३४—श्री महावीरस्वामीकों ये पूर्वोक्त लब्धियां २८ अठावीस थी ?

उ.—श्री महावीरजीकोंतो अनंतीयां लब्धियां थी. येह पूर्वोक्ततो २८ अठावीस किस गिनतीमेंहै, सर्व तीर्थंकराकों अनंत लब्धियां होतीहै.

प्र. १३५—इंद्रभूति गौतमकों ये सर्व ल-

ब्धियां थी ?

उ. चक्री, बलदेव, वासुदेव रुजुमति, ये नही थी शेष प्राये सर्वही लब्धियां थी.

प्र. १३६–आप महावीरकोंही नगवंत सर्वज्ञ मानतेहो, अन्य देवोंकों नही, इसका क्या कारणहै ?

उ.–अपने २ मतका पक्षपात गेमके विचारीये तो, श्री महावीरजीमेंही नगवंतके सर्व गुण सिद्ध होतेहै, अन्य देवोमें नही.

प्र. १३७–श्री महावीरजीकों हुएतो बहुत वर्ष हुएहै, हम क्योंकर जानेके श्री महावीरजीमेंही नगवानपणेके गुण थे, अन्य देवोमें नही थे ?

उ.- सर्व देवोंकी मूर्त्तियों देखनेसें और तिनके मतोमें तिन देवोंके जो चरित कथन करेहै तिनके वांचने और सुननेसें सत्य नगवंतके लक्ष

पुलाय लब्धी २८—जिसके प्रभावसें धर्मकी रक्षा करने वास्ते धर्मका द्वेषी चक्रवर्त्यादिकों सेना सहित चुर्ण कर शके, तिसकों पुलाकलब्धि कहते है.

पूर्वोक्त येह लब्धीयां पुन्यके और तपके और अंतःकरणके बहुत शुद्ध परिणामोंके होनेसें होतेहे, ये सर्व लब्धियां प्रायें तीसरे चौथे आरेमेही होतीयांहै, पंचम आरेकी शरूआतमेंभी हो तीयां है.

प्र. १३४—श्री महावीरस्वामीकों ये पूर्वोक्त लब्धियां २८ अठावीस थी ?

उ.—श्री महावीरजीकोंतो अनंतीयां लब्धियां थी. येह पूर्वोक्तता २८ अठावीस किस गिनतीमेंहै, सर्व तीर्थंकराकों अनंत लब्धियां होतीहै.

प्र. १३५—इंद्रभूति गौतमकों ये सर्व ल-

ब्धियां थी ?

उ. चक्री, बलदेव, वासुदेव रुजुमति, ये नही थी शेष प्राये सर्वही लब्धियां थी.

प्र. १३६–आप महावीरकोंही भगवंत सर्वज्ञ मानतेहो, अन्य देवोंकों नही, इसका क्या कारणहै ?

उ.–अपने २ मतका पक्षपात छोडके विचारीये तो, श्री महावीरजीमेंही भगवंतके सर्व गुण सिद्ध होतेहै, अन्य देवोमें नही.

प्र. १३७–श्री महावीरजीकों हुएतो बहुत वर्ष हुएहै, हम क्योंकर जानेके श्री महावीरजीमेंही भगवानपणेके गुण थे, अन्य देवोमें नही थे ?

उ.–सर्व देवोंकी मूर्त्तियों देखनेसें और तिनके मतोमें तिन देवोंके जो चरित कथन करेहै तिनके वांचने और सुननेसें सत्य भगवंतके लक्ष

ण और कल्पित जगवंतोंके लक्षण सर्व सिद्धहो जावेगे.

प्र.—१३७ कैसी मूर्त्तिके देखनेसें जगवंतकी यह मूर्त्ति नही है, ऐसे हम माने ?

उ. जिस मूर्त्तिके संग स्त्रीकी मूर्त्ति होवे तव जाननाके यह देव विषयका जोगी था. जिस मूर्त्तिके हाथमें शस्त्र होवे तव जानना यह मूर्त्ति रागी, द्वेषी वैरीयोंके मारने वाले और असमर्थ देवोकी है. जिस मूर्त्तिके हाथमें जपमाला होवे तव जानना यह किसीका सेवक है, तिससें कुछ मागने वास्ते तिसकी माला जपता है.

प्र. १३ए परमेश्वरकी कैसी मुर्त्ति होतीहै ?

उ.—स्त्री, जपमाला, शस्त्र, कमंडलुसें रहित, और शांत निस्पृह ध्यानारूढ समता मतवारी शांतरस मग्न,मुख विकार रहित, ऐसी सच्चे

देवकी मुर्त्ति होती है.

प्र. १४० जैसे तुमनें सर्वज्ञकी मुर्त्तिके लक्षण कहेहै, तैसें लक्षण प्राये बुद्धकी मुर्त्तिमेंहै, क्या तुम बुद्धको भगवंत सर्वज्ञ मानतेहो ?

उ.—हम निकेवल मुर्त्तिकेही रूप देखनेसें सर्वज्ञका अनुमान नही करतेहै, किंतु जिसका चरितभी सर्वज्ञके लायक होवे, तिसको सच्चा देव मानते है.

प्र, १४१ क्या बुद्धका चरित सर्वज्ञ सच्चे देव सरिखा नहीहै ?

उ. बुद्धके पुस्तकानुसार बुद्धका चरित सर्वज्ञ सरीखा नही मालुम होताहै.

प्र. १४२ बुद्धके शास्त्रोमें बुद्धका किसतरेंका चरित है, जिससें बुद्ध सर्वज्ञ नहीहै ?

उ.—बुद्धका बुद्धके शास्त्रानुसारे यह चरित

जो आगे लिखतेहै, तिसें बुद्ध सर्वज्ञ नही सिद्ध होता है. १ प्रथम बुद्धने संसार छोडके निर्वाणका मार्ग जानने वास्ते योगीयांका शिष्य हुआ, वे-योगी जातके ब्राह्मणथे और तिनकों बडे ज्ञानी भी लिखाहै. तिनके मतकी तपस्यारूप करनीसें बुद्धका मनोर्थ सिद्ध नही हुआ, तब तीनको छो-डके बुद्ध गयाके पास जंगलमे जा रहा २, इस उपरके लेखसेतो यह सिद्ध होता है कि बुद्ध कोइ ज्ञानी बुद्धीमान्‌तो नही था, नहीतो तिनके म-तकी निष्फल कष्ट क्रिया काहेको करता, और गुरुयोंके छोडनेसें स्वछंदचारी अविनीतभी इसी लेखसें सिद्ध होताहै १ पीछे बुद्धने उग्र ध्यान और तप करनेमे कितनेक वर्ष व्यतीत करे २ इस लेखसें यह सिद्ध होताहै कि जब गुरूयोकों छोडा निकम्मे जानके तो फेर तिनका कथन करा हुआ

उग्र ध्यान और तप निष्फल काहेको करा, इस सेंभी तप करता हुआ, जब मुर्छा खाके पड़ा तहां तकभी अज्ञानी था, ऐसा सिद्ध होता है? पीछे जब बुद्धने यह विचार कराके केवल तप करनेसें ज्ञान प्राप्त नही होताहै, परंतु मनके उघाड करनेसें प्राप्त करना चाहिए, पीछे तिसने खानेका निश्चय करा और तप छोड़ा २ जब ध्यान और तप करनेसें मन न उघाड़ा तो क्या खानेसें मन उघड़ शकताहै, इससें यहभी तिसकी समझ असमंजस सिद्ध होती है १ पीछे अजपाल वृक्ष-के हेठे पूर्व तर्फ बैठके इसने ऐसा निश्चय कराके जहां तक मै बुद्ध न होवांगा तहां तक यह जगा न छोडुंगा, तिस रात्रिमें इसको इच्छारोध करनेका मार्ग और पुनर्जन्मका कारण और पूर्व जन्मां-तरोका ज्ञान उत्पन्न हुआ, दूसरे दिनके सवे-

जो आगे लिखतेहै, तिसें बुद्ध सर्वज्ञ नही सिद्ध होता है. १ प्रथम बुद्धने संसार छोडके निर्वाणका मार्ग जानने वास्ते योगीयांका शिष्य हुआ, वे योगी जातके ब्राह्मणथे और तिनकों बडे ज्ञानी भी लिखाहै. तिनके मतकी तपस्यारूप करनीसें बुद्धका मनोर्थ सिद्ध नही हुआ, तव तीनको छोडके बुद्ध गयाके पास जंगलमे जा रहा २, इस उपरके लेखसेतो यह सिद्ध होता है कि बुद्ध कोइ ज्ञानी बुद्धीमान्तो नही था, नहीतो तिनके मतकी निष्फल कष्ट क्रिया काहेको करता, और गुरुयोंके छोडनेसें स्वछंदचारी अविनीतभी इसी लेखसें सिद्ध होताहै १ पीछे बुद्धने उग्र ध्यान और तप करनेमे कितनेक वर्ष व्यतीत करे २ इस लेखसें यह सिद्ध होताहै कि जब गुरुयोकों छोडा निकम्मे जानके तो फेर तिनका कथन करा हुआ

उग्र ध्यान और तप निष्फल काहेको करा, इस मेंभी तप करता हुआ, जब मुर्छा खाके पड़ा तहा तकभी अज्ञानी था, ऐसा सिद्ध होता है ? पीछे जब बुद्धने यह विचार कराके केवल तप करनेसें ज्ञान प्राप्त नही होताहै, परंतु मनके उघाड़ करनेसें प्राप्त करना चाहिए, पीछे तिसने खानेका निश्चय करा ओर तप छोड़ा २ जब ध्यान और तप करनेसें मन न उघाड़ा तो क्या खानेसें मन उघड़ शकताहै, इससें यहभी तिसकी समझ असमंजस सिद्ध होती है १ पीछे अजपाल वृक्ष के हेठे पूर्व तर्फ बैठके इसने ऐसा निश्चय कराके जहां तक मै बुद्ध न होवांगा तहां तक यह जगा न छोडुंगा, तिस रात्रिमें इसको इछारोध करनेका मार्ग और पुनर्जन्मका कारण और पूर्व जन्मांतरोका ज्ञान उत्पन्न हुआ, दूसरे दिनके सवे-

रेके समय इसका मन परिपूर्ण उपशम और स-
र्वोपरि केवलज्ञान उत्पन्न हुआ २ अब विचारिये
जिसने उग्रध्यान आर तप शेरू दीया और नि-
त्यप्रते खानेका निश्चय करा तिसका निर्हेतुक इ-
च्छारोध करनेका और पुनर्जन्मके कारणोंका ज्ञान
कैसें हो गया, यह केवल अयौक्तिक कथनहै.मो
ग्गलायन और शारिपुत्र और आनंदकी कल्पना
सें ज्ञानी लोकोमें प्रसिद्ध हुआहै १, बुद्धने यह क
थन करा है. आत्मा नामक कोइ पदार्थ नही है
आत्मातो अज्ञानियोने कल्पना करा है २ जब
बुद्धने ज्ञानमें आत्मा नही देखा तब केवलज्ञान
किसकों हुआ, और बुद्धने पुनर्जन्मका कारण कि
सका देखा; और पूर्व जन्मांतर करने वाला कि-
सकों देखा, और पुन्य पापका कर्त्ताभूक्ता किस-
कों देखा, और निर्वाण पद किसकों हूआ देखा,

जेकर कोइ यह कहेके नवीन नवीन क्षणको पिछले २ क्षणोकी वासना लगती जाती है, कर्त्ता पिछला क्षणहै; और भोक्त अगला क्षणहै मोक्ष का साधन तो अन्य क्षणने करा, और मोक्ष अगले क्षणकी हुइ, निर्वाण उसको कहतेहै कि जो दीपककी तरें क्षणोका बुझ जाना, अर्थात् सर्व क्षण परंपरायका सर्वथा अभाव हो जाणा, अथवा शुद्ध क्षणोकी परंपराय रहती है. पांच स्कंधोसें वस्तु उत्पन्न होती है, पांचो स्कंधभी क्षणिकहै, कारण कार्य एक कालमे नही है, इत्यादि सर्व बौद्ध मतका सिद्धांत अयौक्तिक है १ बुद्धके शिष्य देवदत्तने बुधको मांस खाना छुडानेके वास्ते बहुत उपदेश करा, परंतु बुद्धने नमाना, अंतमेंभी सूयरका मांस और चावल अपने भक्तके घरसें लेके खाया, और वेदना ग्रस्त होकरके मरा,

और पाणीके जीव बुद्धकों नही दीखे तिशसें कच्चे पानीके पीने और स्नान करनेका उपदेश अपने शिष्योंकों करा, इत्यादि असमंजस मतके उपदेशकका हम क्यों कर सर्वज्ञ परमेश्वर मान सके जो जो धर्मके शब्द बौद्ध मतसें कथन करे है वे सर्व शब्द ब्राह्मणोके मतमेंतो है नही, इस वास्ते वे सर्व शब्द जैन मतसें लीयेहै बुद्धसें पहिलें जैन धर्म था. तिसका प्रमाण हम उपर लिख आए है बुद्धके शिष्य मौद्गलायन और शारिपुत्रन श्री महावीरके चरितानुसारी बुद्धकों सर्वसें ऊंचा करके कथन करा सिद्ध होताहै, इस वास्तें जैन मतवाले बुद्धके धर्मकों सर्वज्ञका कथन करा हुआ नही मानते है.

प्र, १४३—कितनेक युरोपीयन विद्वान् ऐसें कहतेहै कि जैन मत ब्राह्मणोंके मतमेंसे लीयाहै,

अर्थात् ब्राह्मणोके शास्त्रोकी बाता लेके जैन मत रचा है ?

उ.–युरोपीयन विद्वानोने जैनमतके सर्व पुस्तक वांचे नही मालुम होतेहै, क्योंकि जेकर ब्राह्मणोके मतमें अधिक ज्ञान होवे. और जैन-मतमें तिसके साथ मिलता थोमासा ज्ञान होवे, तब तो हमजी जैनमत ब्राह्मणोके मतसें रचा ऐसा मान लेवे, परंतु जैनमतका ज्ञानतो ब्राह्म-णादि सर्व मतोके पुस्तकोंसें अधिक और विल-क्षणहै, क्योंकि जैनमतके भेद पुस्तक और कर्मा के स्वरुप कथन करनेवाले कर्म प्रकृति, १ पंच संग्रह, २ षट्कर्म ग्रंथादि पुस्तकोंमें जैसा ज्ञान कथन करा है, तैसा ज्ञान सर्व दुनियाके मतके पुस्तकोंमे नहीहै, तो फेर ब्राह्मणोके मतकें ज्ञान सें जैन मत रचा क्योंकर सिद्धहोवे, बलकी यह

तो सिद्धनी हो जावेके सर्व मतोमें जो जो सूक्त वचन रचना है वे सर्व जैनके द्वादशांग समुद्रकेही विंदु सर्व मतोमे गये हुएहै. विक्रमादित्य राजेके प्रोहितका पुत्र मुकंदनामा चार वेदादि चौदह विद्यांका पारगामी तिसने वृद्धवादी जैनाचार्यके पास दीक्षा लीनी. गुरुने कुमुदचंद्र नाम दीना और आचार्यपद मिलनेसें तिनका नाम सिद्धसेन दिवाकर प्रसिद्ध हुआ, जिनके नाम कवि काली दासने अपने रचे ज्योतिर्विदाभरण ग्रंथमें विक्रमादित्ययकी सभाके पंडितोके नाम लेतां श्रुतसेन नामसें लिखाहै, तिनोनें अपने रचे बत्तीस बत्ती सी ग्रंथमें ऐसा लिखाहै, सुनिश्चितं नःपरतंत्र युक्तिषु ॥ स्फुरंतिया कश्चिन्सुक्तिसंपदः ॥ तवैव-तांः पूर्वमहार्णवोच्छता ॥ जगत्प्रमाणं जिनवाक्य विप्रुष ॥१॥ उदधाविव सर्व संधव ॥ समुदीरणा

त्वयि नाथ दृष्टयः॥ नचतासु नवान्प्रदृश्यते ॥ प्रविभक्त सरित्स्विवोदधिः ॥२॥ प्रथम श्लोक-का भावार्थ ऊपर लिख आएहै, दूसरे श्लोकका भावार्थ यह है, कि समुद्रमें सर्व नदीयां समा सक्ती है, परंतु समुद्र किसीभी एक नदीमें नही समा सक्ता है, तैसे सर्व मत नदीयां समान है, वैतो सर्व स्याद्वाद समुद्ररूप तेरे मतमे समा सक्ते है, परंतु तेरा स्याद्वाद समुद्ररूप मत किसी म-तमेंभी संपूर्ण नही समा सक्ता है, ऐसेहीश्रीह रिभद्रसूरिजी जो जातिके ब्राह्मण और चित्रकू-टके राजाके प्रोहित थे और वेद वेदागांदि चौद ह विद्याके पारगामी थे, तिनोनें जैनकी दीक्षालेके १४४४ ग्रंथ रचेहै, तिनोनेभी ऊपदेशपद षोमश कादि प्रकरणोमें सिद्धसेन दिवाकरकी तरेही लि खाहै तथा श्री जिनधर्मी हुआ पीछे जानाहै, जि

सने शैवादि सकल दर्शन और वेदादि सर्व मतों के शास्त्र ऐसे पंम्ति धनपालने जोके न्नोजराजा की सन्नामें मुख्य पंम्ति था, तिसने श्री रूपन्नदेवकी स्तुतिमें कहाहै, पावंति जमं असमंजसाव्रि, वयणेंहि जेहि पर समया, तुह समय महो अहिणो, ते मंदाविंडु निस्संदा ॥ १ ॥ अस्यार्थः॥ जैनमतके विना अन्य मतके असमंजस वचनरूप शास्त्र जो जगमें यशकों पावें है जैनसें वचनोसें वे सर्व वचन तेरे स्याद्वादरूप महोदधि के असंद विंडु नमके गए हुएहै. इत्यादि सैकमो चार वेद वेदांगादिके पाठीयोनें जैनमतमें दीक्षा लीनीहै, कयाजन सर्व पंम्तिोकों बौधायनादि शास्त्र पमते हुआंको नही मालुम पमा होगा के बौधायनादि शास्त्र जैनमतके वचनोसें रचे गये है, वा जैन मत बौधायनादि शास्त्रोसें रचा गया

है, जेकर कोइ यह अनुमान करके श्री महावीर
जीसें बौधायनादि शास्त्र पहिले रचे गएहै, इस
वास्ते जैनमतपीछेसें हुआहै, यह माननाभ्री ठीक
नही क्योंकि श्री माहावीरजीसें २५० वर्ष पहिलें
श्री पार्श्वनाथजी और तिनसें पहिले श्री नेमिना
थादि तीर्थंकर हुएहै, तिनके वचन लेके बौधाय-
नादि शास्त्र रचे गएहै, जैनी ऐसें मानतेहै, जेक
र कोइ ऐसें मानता होवेकि जैनमत थोडाहै और
ब्राह्मणमत बहुतहै, इस वास्ते थोडे मतसें वडा
मत रचा क्यों कर सिद्ध होवे; यह अनुमान अ
तीत कालकी अपेक्षाए कैसा मानना ठीक नही,
क्योंकि इस हिंदुस्तानमें बुद्धके जीते हुए बुद्धमत
विस्तारवंत नही था, परंतु पीछेसे ऐसा फैलाके
ब्राह्मणोका मत बहुतही तुछ रह गया था; इसी
तरें कोइ मत किसी कालमे अधिक हो जाता है,

और किसी कालमे न्यून हो जाता है इस वास्ते थोमा और बमा मत देखके थोमे मतको वमेसे रचा मानना ये अनुमान सच्चा नही है; भट्ट मे क्समुलरने यह जो अनुमान करके, अपने पुस्तक में लिखाहै कि वेदोंके छंदोभाग और मंत्रभागके रचेकों २९०० वा ३१०० सौ वर्ष हुएहै; तो फेर बौधायनादि शास्त्र बहुत पुराने रचे हुए क्योंकर सिद्ध होवेगें; इस वास्ते अपने मनकल्पित अनुमानसें जो कल्पना करनी सो सर्व सत्य नहीहो शक्ती है, इस वास्ते अन्य मतोंमें जो ज्ञान है सो सर्व जैन मतमें है, परंतु जैनमतका जो ज्ञानहै सो किसी मतमें सर्व नही है; इस वास्ते जैन मतके द्वादशांगोकेही किंचित वचन लेकेलोकोने मनकल्पित उसमें कुछ अधिक मिलाके मत रच लीनेहै; हमारे अनुमानसेंतो यही सिध्ध होता है.

प्र. १४४—कोइ युरोपीयन विद्वान् ऐसे कहताहै कि बौद्धमतके पुस्तक जैनमतसें चढतेहै ?

उ.—जेकर श्लोक संख्यामे अधिक होवे अथवा गिनतिमें अधिक होवे अथवा कवितामें अधिक होवे तबतो अधिकता कोइ माने तो हमारी कुछ हानि नहीहै, परंतु जेकर ऐसें मानता होवेके बौद्ध पुस्तकोमें जैन पुस्तकोंसें धर्मका स्वरूप अधिक कथन करा है, यह मानना बिलकुल भूल संयुक्त मालुम होताहै, क्योंकि जैन पुस्तकोंमें जैसा धर्मका रूप और धर्म नीतिका स्वरूप कथन कराहै, वैसा सर्व दुनीयांके पुस्तकोंमें नही है.

प्र. १४५—जैनके पुस्तक बहुत थोरे है, और बौधमतके पुस्तक बहुत है, इस वास्ते अधिकता है ?

उ.—संप्रति कालमें जो जैनमतके पुस्तकहै वे सर्व किसी जैनीनेभी नही देखेहै, तो यूरोपीयन विद्वान कहांसे देखे; क्योंकि पाटन और जैसलमेरमें ऐसे गुप्त भंडार पुस्तकोंके है कि वे किसी इंग्रेजनेभी नही देखे है, तो फेर पूर्वोक्त अनुमान कैसें सत्य होवे.

प्र. १४६—जैनमतके पुस्तक जो जैनी रखते है सो किसीकों दिखाते नही है, इसका क्या कारण है ?

उ.—कारणतो हमकों यह मालुम होताहै कि मुसलमानोंकी अमलदारीमें मुसलमानोने वहुत जैनमतोपरि जुल्म गुजारा था, तिसमें सैंकडो जैनमतके पुस्तकोंके भंडार वाल दीये थे, और हजारो जैनमतके मंदिर तोडके मसजिदे वनवा दीनी थी. कुतव दिल्ली अजमेर जुनागढके

किलेमें प्रन्नास पाटणमें रांदेर, न्नरूचमें इत्यादि बहुत स्थानोमें जैनमंदिर तोमके मसजिदो बनवाइ हुइ खमी है, तिस दिनके मरे हुए जैनि कि सीकोन्नी अपने पुस्तक नही दिखाते है, और गुप्त न्नंमारोंमे बंध करके रख गेमेहै.

प्र, १४७–इस कालमें जो जैनी अपने पुस्तक किसीकों नही दिखातेहै, यह काम अछा है वा नही ?

ज.–जो जैनी लोक अपने पुस्तक बहुत यत्नसें रखतेहै यहतो बहुत अछा काम करते है, परंतु जैसलमेरमें जो न्नंमारके आगे पथ्थरकी न्नीत चिनके न्नंमार बंध कर गेमा है, और कोइ उसकी खबर नही लेता है, क्या जाने वे पुस्तक मट्टी हो गयेहैके शेष कुछ रह गयेहै, इस हेतुसें तो हम इस कालके जैन मतीयोंको बहुत

नालायक समझते है.

प्र. १४८—क्या जैनी लोकोंके पास धन न हीहै, जिससें वे लोक अपने मतके अति उत्तम पुस्तकोंका उद्धार नही करवाते है ?

उ.—धनतो बहुतहै, परंतु जैनी लोकोंकी दो इंद्रिय बहुत जबरदस्त हो गइहै, इस वास्ते ज्ञान भंडारकी कोइभी चिंता नही करताहै.

प्र. १४९—वे दोनो इंद्रियो कौनसी है जो ज्ञानका उद्धार नही होने देती है?

उ.—एकतो नाक और दुसरी जिव्हा, क्यों-कि नाकके वास्ते अर्थात् अपनी नामदारीके वास्ते लाखों रूपइये लगाके जिन मंदिर बनवाने चले जातेहै, और जिव्हाके वास्ते खानेमे लाखों रूपइये खरच करतेहै, चूरमेथ्यादिकके लडुयोंकी खबर लीये जातेहै, परंतु जीर्णभंडारके उद्धार

करणेकी बाततो क्या जाने, स्वप्नमेंभी करते होवेंगेके नही.

प्र. १५०–क्या जिन मंदिर और साहम्मि वछल करनेमें पापहै, जो आप निषेध करतेहो ?

उ.–जिन मंदिर बनवानेका और साहम्मिवछल करनेका फलतो स्वर्ग और मोक्षकाहै, परंतु जिनेश्वर देवनेतो ऐसे कहाकि जो धर्मक्षेत्र बिगमता होवे तिसकी सार संभाल पहिले करनी चाहिये; इस वास्ते इस कालमें ज्ञान भंमार बिगमताहै. पहिले तिसका उद्धार करना चाहिये. जिन मंदिरतो फेरभी बन शकतेहै, परंतु जेकर पुस्तक जाते रहेगे तो फेर कोन बना सकेगा.

प्र. १५१–जिन मंदिर बनवाना और साहम्मिवछल करना, किस रीतका करनां चाहिये?

उ.–जिस गामके लोंक धनहीन होवें, जिन

मंदिर न बना सकें, और जिन मार्गके भक्त होवे, तिस जगे आवश्य जिन मंदिर करानां चाहिये, और श्रावकका पुत्र धनहीन होवे तिसकों किसी का रोजगारमें लगाके तिसके कुटुंबका पोषणहोवे ऐसे करे, तथा जिस काममें सीदाता होवे तिसमें मदत करे. यह साहम्मिवछलहै, परंतु यह न समजनांके हम किसी जगे जिन मंदिर बनानेकों और बनिये लोकोंकें जिमावने रूप साहम्मिवच्छलका निषेध करतेहै, परंतु नामदारीके वास्ते जिन मंदिर बनवानेमें अल्प फल कहते है, और इस गामके बनीयोने उस गामके बनियोंकों जिमाया और उस गामवालोंने इस गाम के बनियोंकों जिमाया, परंतु साहम्मिकों साहाय्य करनेकी बुद्धितें नही, तिसकों हम साहम्मिवछल नही मानते है, किंतु गधे खुरकनी मानते है.

प्र. १५३—जैनमततो तुमारे कहनेसें हम-को बहुत उत्तम मालुम होताहै, तो फेर यह मत्त बहुत क्यों नही फैलाहै ?

उ.—जैनमतके कायदे ऐसे कठिन है कि-तिन उपर अल्प सत्ववाले जिव बहुत नही चल सक्तेहै. गृहस्थका धर्म और साधुका धर्म बहुत नियमोसें नियंत्रितहै, और जैनमतका तत्व तो बहुत जैन लोकभी नही जान सक्तेहै, तो अन्य मतवालोंको तो बहुतही समझना कठिनहै, बौद्ध मतके गोविंदआचार्यनें भरुचमें जैनाचार्यसें च-रचामें हार खाइ, पीछे जैनके तत्व जानने वास्ते कपटसे जैनकी दीक्षा लीनी. कितनेक जैनमतके शास्त्र पढके फेर बौद्ध बन गया, फेर जैनाचार्यों के साथ जैनमतके खंडन करनेमें कमर बांधके चरचा करी, फेरभी हारा, फेर जैनकी दीक्षा

लीनी, फेर हारा इसीतरें कितनी वार जैनशास्त्र पढे; परंतु तिनका तत्व न पाया, पिछली विरीयां तत्व पाया तो फेर बौद्ध नही हुआ. जैनमत समझनां और पालना दोनो तरेसें कठिन है इस वास्ते बहुत नही फेला है, किसी कालमें बहुत फेलाभी होवेगा, क्या निषेध है इसीतरे मीमांसाका वार्तिककार कुमारिल भट्टने और किरणावलिके कर्त्ता उदयननेभी कपटसें जैन दीक्षा लीनी, परंतु तत्व नही प्राप्त हुआ.

प्र. १५३–जैनमतमें जो चौदहपूर्व कहे जातेहै, वे कितनेक बडेथे और तिनमें क्या क्या कथन था. इसका संक्षेपसें स्वरुप कथन करो?

उ.–इस प्रश्नका उत्तर अगले यंत्रसें देख लेनां.

पूर्व नाम	पद संख्या	शाहीलिख नेमेंकितनी	विषय क्या है.
उत्पाद पूर्व १	एक करोड पद १००००००	१ एकहाथी जितने शाहीके ढेरमें लिखा जावे	सर्व द्रव्य और सर्व पर्यायांकी उत्पत्तिका स्वरूप कथन करा है.
आग्रायणीपूर्व २	९६०००००० छानवेलाख पद.	२ हाथी प्रमाण शाहीसें एवं सर्वत्र	सर्व द्रव्य और सर्व पर्याय और सर्व जीव विशेषांके प्रमाणका कथन है.
वीर्यप्रवादपूर्व ३	सित्तरलाख पद. ७००००००	४ हाथी प्रमाण.	कर्म साहित और कर्म रहित सर्व जीवांका और सर्व अजीव पदार्थोंके वीर्य अर्थात् शक्तिके स्वरुपका कथन है.
अस्ति नास्ति प्रवाद पूर्व ४	साठलाख पद. ६००००००	८ हाथी प्रमाण.	जो लोकमें धर्मास्ति कायादि अस्तिरुप है और जो खर शृंगादि नास्तिरुप है तिसका कथन है अथवा

			सर्व वस्तु स्वरूप करके अस्तिरूप है और पररूप करके नास्तिरूप है ऐसा कथन है.
ज्ञान प्रवाद पूर्व ५	एक करोड पद १०००००० एक पद न्यून	१६ हाथी प्रमाण.	पांचो ज्ञान मति आदि तिनका महा विस्तारमें कथन है.
सत्य प्रवाद पूर्व ६	एक करोड पद १००००००६ पद अधिक	३२ हाथी प्रमाण.	सत्य संयम वचन इन तीनोका विस्तारसें कथन है.
आत्मप्रवादपूर्व ७	छब्बीस करोड पद. २६०००००००	६४ हाथी प्रमाण.	आत्मा जीव तिसका सातसौ ७०० नयके मतोंसें स्वरूप कथन करा है.
कर्म प्रवाद पूर्व ८	एक करोड अस्सी हजार १००८००००	१२८ हाथी प्रमाण.	ज्ञानावरणीयादि अष्ट कर्मका प्रकृति स्थिति अनुभागप्रदेशादिमें स्वरूपका कथनकराहै.
प्रत्याख्यान प्रवाद	चोराशी लाख पद. ८४०००००	२५६ हाथी प्रमाण.	प्रत्याख्यान त्यागने योग्य वस्तुयोंका और त्यागका विस्तारसें कथन क-

९			रा है.
विद्यानुप्रवादपूर्व १०	एक करोड दश लाख पद ११००००००	५१२ हाथी प्रमाण.	अनेक अतिशयवंत चमत्कार करनेवाली अनेक विद्यायोका कथन है,
अवंध्य पूर्व ११	छव्वीस करोड पद. २६००००००००	१०२४ हाथी प्रमाण	जिसमें ज्ञान, तप, संयमादिका शुभ फल और सब प्रमादादि पापोंका अशुभ फल कथन करा है.
प्राणायु पूर्व १२	एक करोड पंचाश लाख पद १५०००००००	२०४८ हाथी प्रमाण.	पांच इंद्रिय और मनबल, वचनबल, कायाबल, और उच्छ्वास निःश्वास और आयु इन दशो प्राणाका जहां विस्तारमें स्वरूप कथन करा है.
क्रिया विशालपूर्व १३	नव करोड पद. ९०००००००	४०९६ हाथी प्रमाण. शाहीसें लिखा जावे .	जिसमें कायक्यादि क्रिया वा संयमाक्रिया छंदक्रियादि क्रियायोंका कथन है.

लोक विं दुसार पूर्व १४	साढेवारा क रोड पद. १२५०००००	८१९२ हा थी प्रमाण.	लोकमें वः श्रुतज्ञान लोकमें अक्षरोपरि विंदू समान सार सर्वोत्तम सर्वाक्षरो के मिलाप जाननेकी लब्धिका हेतु जिसमें है.

प्र. १५४–जैनमतके पंच परमष्टिकी जगे प्राचीन और नवीन मत धारीयोनें अपनी बुद्धि अनुसारे लोकोंने अपने अपने मतमें किस रीतेसें कल्पना करीहै, और जैनी इस जगतकी व्यवस्था किस हेतुसें किस रीतीसें मानते है ?

उ.–मतधारीयोने जो जैनमतके पंच परमेष्टीकी जगे जुदी कल्पना खमी करी है, सो नीचले यंत्रसें देख लेना.

जैनमत १	अरिहंत १	सिद्ध २.	आचार्य २	उपाध्याय ४.	साधु ५.
सांख्य मत २	कपिल	०	आसुरी	विद्यापाठक.	सांख्य साधु
वैदीक मत ३.	जैमनि	०	भद्रप्रभाकर	विद्यापाठक.	०
नैयायिक मत ४.	गौतम	एकईश्वर	आचार्य नैयायिक	न्याय पाठक	साधु
वेदांत मत ५.	व्यास	एकब्रह्म	आचार्यो स्ति	वेदांत पाठक	परमहंसादि
वैशेषिक मत ६.	शिव	एकईश्वर	कणाद	पाठक	साधु
यहुदी मत ७.	मूसा	एकईश्वर	अनेक	पाठक	उपदेशक
इसाइ मत ८.	ईशा	एकईश्वर	पथर समस्यादि	पाठक	पादरी

मुसल्मान मत ९.	महम्मद	एक ईश्वर	अनेक	पाठक	फकीर
शंकर मत १०.	शंकर	एक ब्रह्म	आनंदगिरी आदि	शंकरभाष्यादि पाठक	गिरिपुरि भारती आदि
रामानुज मत ११.	रामानुज	एकईश्वर रामचंद्र	अनेक	रामानुज मत पाठक	साधु वैश्नव
वलभ मत १२.	वल्लभाचार्य	एक ईश्वर कृष्ण	अनेक	वल्लभ मत पाठक	तिस मतके साधु नहि.
कवीरमत १३.	कवीर	एक ईश्वर	अनेक	तन्मत पाठक	गृहस्थ वा साधु
नानक मत १४.	नानक	एक ईश्वर	अनेक	ग्रंथ पाठक	उदासी साधु
दादूमत १५.	दादू	एक ईश्वर	सुंदर दासादि	तत् ग्रंथ पाठक	दादू पंथी साधु
गोरख मत १६.	गोरख	एक ईश्वर	अनेक	तत् ग्रंथ पाठक	कानफटे योगी

स्वामीनारायण १७	स्वामी नारायण	एकईश्वर	स्त्री और परिग्रह धारी	तत् ग्रंथ पाठक	रंगे वस्त्रवाले धोले वस्त्रां वाले
दयानंदमत १८	दया नंद	एक ईश्वर	अस्ति	तन्मत पाठक	साधु

इत्यादि इस तरे मतधारीयोंने पंच परमेष्टीकी जगे पांच २ वस्तु कल्पना करी है, इस वास्ते पंच परमेष्टीके विना अन्य कोइ सृष्टिका कर्त्ता सर्वज्ञ वीतराग ईश्वर नही है, निःकेवल लोकांको अज्ञान भ्रमसें सृष्टिकेर्त्ताकी कल्पना उत्पन्न होती है, पूर्व पक्ष कोइ प्रश्न करे के जेकर सर्वज्ञ वीतराग ईश्वर जगतका कर्त्ता नहीहै, तो यह जगत अपने आप कैसे उत्पन हुआ, क्योंकि हम देखतेहै कर्त्ताके विना कुछभी उत्पन्न नही होता है, जैसें घमीयालादि वस्तु. तिसका

उत्तर-हे परीक्षको ! तुमको हमारा अभिप्राय यथार्थ मालुम पमता नही है, इस वास्ते तुम कर्त्ता ईश्वर कहतेहो, जो इस जगतमें बनाइ हुइ वस्तुहै, तिसका कर्त्ता तो हमभी मानतेहै, जैसें घट, पट, शराव, उदंचन, घमियाल, मकान, हाट, हवेली, संकल, जंजीरादि परंतु आकाश, काल, स्वभाव, परमाणु, जीव इत्यादि वस्तुयां किसीकी रची हुइ नही है, क्योंकि सर्व विद्वानोका यह मतहैके जो वस्तु कार्यरूप उत्पन्न होती है तिसका उपादान कारण अवस्य होनां चाहिये. विना उपादानके कदापि कार्यकी उत्पत्ति नही होती है, जो कोइ विना उपादान कारणके वस्तुकी उत्पत्ति मानता है, सो मूर्ख, प्रमाणका स्वरूप नही जानता है; तिसका कथन कोइ महा मूढ मानेगा, इस वास्ते आकाश १ आत्मा २

काल ३ परमाणु ४ इनका उपादान कारण कोइ नही है, इस वास्ते यें चारो वस्तु अनादि है. इनका कोइ रचनेवाला नही है, इस्सें जो यह कहता है कि सर्व वस्तुयों ईश्वरने रचीहै सो मिथ्याहै, अब शेष वस्तु पृथ्वी १ पानी २ अग्नी ३ पवन ४ वनस्पति ५ चलने फिरने वाले जीव रहे है, तथा पृथ्वीका भेद नरक, स्वर्ग, सूर्य, चंद्र, ग्रह, नक्षत्र, तारादि है, ये सर्व जड चैतन्यके उपादानसें बने है, जें जीव और जड परमाणुओंके संयोगसें वस्तु बनीहै, वे ऊपर पृथ्वी आदि लिख आयेहै, ये पृथ्वी आदि वस्तु प्रवाहसें अनादि नित्यहै, और पर्याय रूप करके अनित्यहै, और यें जड चैतन्य अनंत स्वाभाविक शक्तिवाले है, वे अनंत शक्तियां अपने २ कालादि निमित्तांके मिलनेसें प्रगट होतीहै, और इस ज-

गतमें जो रचना पिछे हूइहै, और जो हो रहीहै, और जो होवेगी, सर्व पांच निमित्त उपादान कारणोंसें होतीहै, वे कारण येहहै, काल १ स्वभाव २ नियति ३ कर्म ४ उद्यम ५; इन पांचोके सिवाय अन्य कोइ इस जगतका कर्त्ता और नियंता ईश्वर किसी प्रमाणसें सिद्ध नही होताहै, तिसकी सिद्धीका खंडन पूर्व पहिले सत्र लिख आइहै, जैसे एक वीजमें अनंत शक्तियांहै, वृक्षमें जितने रंग विरंगे मूल १ कंद २ स्कंध ३ त्वचा ४ शाखा ५ प्रवाल ६ पत्र ७ पुष्प ८ फल ९ वीज १० प्रमुख विचित्र रचना मालुम होतीहै, सो सर्व वीजमें शक्ति रूपसें रहतीहै, जब कोइ वीजको जालके भस्म करे तब तिस विजके परमाणुयोमें पूर्वोक्त सर्व शक्तियां रहतीहै, परंतु विना निमित्तके एकभी शक्ति प्रगट नही होतीहै,

जेकर बीजमें शक्तियां न मानीये, तबतो गेहूंके बीजसें आंब और बंबुल मनुष्य, पशु, पक्षी आदिभी उत्पन्न होने चाहिये. इस वास्ते सर्व वस्तुयोंमें अपनी २ अनंत शक्तियांहै. जैसा २ निमित्त मिलताहै तैसी २ शक्ति वस्तुमें प्रगट होतीहै, जैसें बीज कोठिमें पमाहै तिसमें वृक्षके सर्व अवयवोंके होनेकी शक्तियांहै, परंतु बीजके काल विमा अंकुर नही हो शक्ताहै; कालतो वृष्टी रुतुकाहै, परंतु भूमि और जलके संयोग विना अंकुर नही हो शक्ताहै, काल भूमि जलतो मिलेहै परंतु विना स्वभावके कंकर बोवेतो अंकुर नही होवेहै. बीजका स्वभाव १ काल २ भूमि ३ जलादितो मिलेहै, परंतु बीजमें जो तथा तथा भवन अर्थात् होनेवाली अनादि नियतिके विना बीजतैसा लंबा चौमा अंकुर निर्विघ्नसें नही दे

शक्ताहै, जो निर्विघ्नपणे तथा तथा रूप कार्यको निष्पन्न करे सो नियति, और जेकर वनस्पतिके जीवोंने पूर्व जन्ममें ऐसे कर्म न करे होतेतो वनस्पतिमे उत्पन्न न होते; जेकर बोवनेवाला न होवे तथा बीज स्वयं अपने भारीपणे करके पृथ्वीमें न पडेतो कदापि अंकुर उत्पन्न न होवे; इस वास्ते बीजांकुरकी उत्पत्तिमें पांच कारणहै. काल १ स्वभाव २ नियति ३ पुर्वकर्म ४ उद्यम ५ इन पांचोके सिवाय अन्य कोइ अंकुर उत्पन्न करनेवाला कोइ ईश्वर नही सिद्ध होताहै, तथा मनुष्य गर्भमें उत्पन्न होताहै तहांभी पांच कारणसेंही होताहै, गर्भ धारणेके कालमेंही गर्भ रहै १, गर्भ की जगाका स्वभाव गर्भ धारणका होवे तोही गर्भ धारण करे २, गर्भका तथा तथा निर्विघ्नपनेसें होना नियतिसेंहै ३, जीवोंने पूर्व जन्ममें

मनुष्य होनेके कर्म करेहै तोही मनुष्यपणे उत्पन्न होतेहै ४, माता पिता और कर्मसें आकर्षण न होवेतो कदापि गर्भ उत्पन्न न होवे, ५ इसीतरे जो वस्तु जगतमें उत्पन्न होतीहै सो इनही पांचो निमित्त कारणोंसें और उपादान कारणोंसें होती है, और पृथ्वी प्रवाहसें सदा रहेगी. और पर्याय रूप करके तो सदा नाश और उत्पन्न होती रही है; क्योंकि सदा असंख्य जीव पृथ्वीपणेही उत्पन्न होतेहै, और मरतेहै तिन जीवाके शरीरोंका पिंडही पृथ्वीहै. जो कोइ प्रमाणवेत्ता ऐसे समझताहै के कार्य रूप होनेसें पृथ्वी एक दिनतो अवश्य सर्वथा नाश होवेगी, घटवत्. उत्तर—जैसा कार्य घटहै तैसा कार्य पृथ्वी नहीहै, क्योंकि घटमें घटपणे उत्पन्न होनेवाले नवीन परमाणु नही आतेहै, और पृथ्वीमें तो सदा पृथ्वी शरीरवाले

जीव असंख उत्पन्न होतेहै, और पुर्वले नाश हो-
तेहै. तिन असंख जीवांके शरीर मिलने और वि
छरूनेसे पृथ्वी तैसीही रहेगी. जैसें नदीका पाणी
अगला २ चला जाता है; और नवीन नवीन आ
नेसें नदी वैसीही रहती है, इस वास्ते घटरूपकार्य
समान पृथ्वी नही है, इस वास्ते पृथ्वी सदाही
रहेगी और तिसके उपर जो रचना है; सो पुर्वोक्त
पांच कारणोंसें सदा होती रहेगी. इस वास्ते
पृथ्वी अनादि अनंत काल तक रहगी, इस वास्ते
पृथ्वीका कर्त्ता ईश्वर नही है, और जो कितनेक
लोलें जीव मनुष्य १ पशु २ पृथ्वी ३, पवन ४,
वनस्पतिकों तथा चंद्र, सूर्यकों देखके और मनु-
ष्य पशुयोके शरीरकी हड्डीयांकी रचना आंखके
परुदे खोपरीके टुकरु नशा जालादि शरीरोंकी
विचित्र रचना देखकें हेरान होतेहे, जब कुछ

आगा पीछा नही सूझताहै, तब हार कर यह कह देतेहै, यह रचना ईश्वरके विना कौन कर सक्ता है; इस वास्ते ईश्वर कर्त्ता २ पुकारते है; परंतु जगत कर्त्ता माननेसें ईश्वरका सत्यानाश कर देते है, सो नही देखतेहै. काणी हथनी एक पासेकी ही वेलमीयां खातिहै, परंतु हे भोले जीव जेकर तेने अष्ट कर्मके १४८ एकसौ अम्तालीस भेद जाने होते, तो अपने बिचारे ईश्वरकों काहेको जगत कर्त्ता रूप कलंक देकें, तिसके ईश्वरत्वकी हानी करता. क्योंकि जो जो कल्पना भोले लोकोमें ईश्वरमें करी है सो सो सर्व कर्मद्वारा सिद्ध होती है, तिन कर्मोंका स्वरूप संक्षेप मात्र यहां लिखते है, जेकर विषेश करके कर्म स्वरुप जाननेकी इच्छा होवे तदा षटकर्म ग्रंथ १ कर्म प्रकृति प्राकृत २ पंचसंग्रह ३ शतक ४ प्रमुख ग्रंथ

देख लेने, प्रथम जैनमतमें कर्म किसेकों कहते तिसका स्वरुप लिखता है.

जैसें तेलादिसें शरीर चोपमीने कोइ पुरुष नगरमें फिरे, तब तिसके शरीर ऊपर सूक्ष्म रज पमनेसें तेलादिके संयोगसें परिणामांतर होके मल रुप होके शरीरसें चिप जाती है, तैसेही जीवांके जीवहींसा १ जूठ २ चोरी ३ मैथुन ४ परिग्रह ५ क्रोध ६ मान ७ माया ८ लोभ ९ राग १० द्वेष ११ कलह १२ अभ्याख्यान १३ पैशुन १४ परपरिवाद १५ रतिअरति १६ मायामृषा १७ मिथ्यादर्शन शल्य १८ रूप जो अंतःकरणके परिणाम है. वे तेलादि चीकास समान है, तिनमे जो पुद्गल जमरुप मिलताहै, तिसकों वासना रूप सूक्ष्म कारमण शरीर कहते है यह शरीर जीवके साथ प्रवाहसें अनादि संयोग संबंधवाला

है; इस शरीरमें असंख तरेंकी पाप पुण्य रूप कर्म प्रकृति समा रही है. इस शरीरकों जैनमतमें कर्म कर्म कहतेहै, और सांख्यमतवाले प्रकृति, और वेदांति माया, और नैयायिक वैशेषिक अदृष्ट कहते. कोइक मतवाले क्रियमाण संचित प्रारब्धरूप भेद करते है, बौध्द लोक वासना कहते है, विना समझके लोक इन कर्मोंको ईश्वरकी लीला कुदरत कहतेंहै, परंतु कोइ मतवाला इन कर्मोंका यथार्थ स्वरूप नही जानता है, क्योंकि इनके मतमें कोइ सर्वज्ञ नही हुआ है, जो यथार्थ कर्मोंका स्वरूप कथन करे इस वास्ते लोक भ्रम अज्ञानके वश होकर अनेक मनमानी ऊतपटंग जगत कर्त्तादिककी कल्पना करके, अंधाधुंध पंथ चलाये जातेहै, इस वास्ते भव्य जीवांके जानने वास्ते आठ कर्मका किंचित् स्वरूप लिखते है.

ज्ञानावरणीय १ दर्शनावरणीय २ वेदनीय ३ मोहनीय ४ आयु ५ नाम ६ गोत्र ७ अंतराय ८ इनमेसें प्रथम ज्ञानावरणीयके पांच भेदहै; मति ज्ञानावरणीय १ श्रुतज्ञानावरणीय २ अवधिज्ञानावरणीय ३ मनःपर्यायज्ञानावरणीय ४ केवलज्ञानावरणीय ५. तहां पांच इंद्रिय और छठा मन इन छहो द्वारा जो ज्ञान उत्पन्न होवे तिसका नाम मतिज्ञान है. तिस मतिज्ञानके तीनसो छत्तीस ३३६ भेदहै. वे सर्व कर्मग्रंथकी वृत्तिसें जानने. तिन सर्व ३३६ भेदांका आवरण करनेवालामतिज्ञानावरण कर्मका भेदहै, जिस जीवके आवरण पतला हुआहै तिस जीवकी बहुत बुद्धि निर्मलहै: जैसें जैसें आवरणके पतलेपणेकी तारतम्यताहै तैसें तैसें जीवांमे बुद्धिकी तारतम्यताहै. यद्यपि मतिज्ञान मतिज्ञानावरणके क्षयोप

शमसें होताहै तोजी तिस क्षयोपशमके निमित्त मस्तक, शिर, विशाल मस्तकमे नेजा, चरबी, धीकास, मांस, रुधिर, निरोग्य हृदय, दिल निरुपद्रव, और सूंठ, ब्राह्मी वच, घृत, दूध, साकर, प्रमुख अच्छी वस्तुका खानपानादिसें अधिक अधिकतर मतिज्ञानावरणके क्षायोपशमके निमित्त है; और शील संतोष महा व्रतादि करणी, और पठन करानेवाला विद्यावान् गुरू, और देश काल श्रद्धा, उत्साह परिश्रमादि ये सर्व मतिज्ञानावरणके क्षयोपशमं होनेके कारणहै. जैसें जैसें जीवांको कारण मिलतेहै तैसी तैसी जीवांकी बुद्धि होतीहै इत्यादि विचित्र प्रकारसें मतिज्ञानावरणीका नेदहै. इति मतिज्ञानावरणी १. दूसरा श्रुतज्ञानावरण श्रुतज्ञानका आवरण श्रुतज्ञान, तिसको कहतेहै, जो गुरु पांसे सुनके ज्ञान होवे

और जिसके बलसें अन्य जीवांकों कथन करा जावे, तिसके निमित्त पूर्वोक्त मतिज्ञानवाले जानने, क्योंके ये दोनो ज्ञान एक साथही उत्पन्न होतेहै, परंतु इतना विषेश है; मतिज्ञान वर्त्तमान विषयिक होता है. और श्रुतज्ञान त्रिकाल विषय होताहै; श्रुतज्ञानके चौदह १४ तथा वीस भेद २० है, तिनका स्वरुप कर्मग्रंथसें जानना. पठन पाठनादि जो अक्षरमय वस्तुका ज्ञान है, सो सर्व श्रुतज्ञान है; तिसका आवरण आछादन जो है, जिसकी तारतम्यतासें श्रुतज्ञान जीवांकों विचित्र प्रकारका होताहै, तिसका नाम श्रुतज्ञानावरणीय है. इसकै क्षायोपशमके वेही निमित्तहै, जौनसें मतिज्ञानके है; इति श्रुतज्ञानावरण २. तीसरा अवधिज्ञानका आवरण अवधिज्ञानावरणीय ३. ऐसेंही मनःपर्यायज्ञानावरण ४. केवलज्ञानावरण

५, इन पांचो ज्ञानोमेंसें पिछले तीन ज्ञान इस कालके जीवांकों नहीहै; सामग्री और साधनके अन्नावसें. इस वास्ते इनका स्वरूप नंदी आदी सिद्धांतोसें जानना. ये पांच न्नेद ज्ञानावरण कर्म केहै. यह ज्ञानावरणकर्म जिस कर्त्तव्योंसें बांधता है, अर्थात् उत्पन्न करके अपने पांचो ज्ञान शक्ति-यांका आवरण कर्त्ता है सो येहहै, मति, श्रुत प्र मुख पांच ज्ञानकी १ तथा ज्ञानवंतकी २ तथा ज्ञानोपकरण पुस्तकादिकी ३ प्रत्यनी कता अर्थात् अनिष्टपणा, प्रतिकूलपणा करे, जैसें ज्ञान और ज्ञानवंतका बुरा होवे तैसें करे; १ जिस पासों पढा होवे तिस गुरुका नाम न बतावे, तथा जानी हूइ वस्तुकों अजानी कहे २; ज्ञानवंत तथा ज्ञा-नोपकरणका अग्निशस्त्रादिकसें नाश करे ३; तथा ज्ञानवंत ऊपर तथा ज्ञानोपकरण ऊपर प्रद्वेष अं-

तरंग अरुची मत्सर ईर्ष्या करे ४; पढनेवालोंको अन्न वस्त्र वस्ती देनेका निषेध करें, पढनेवालोंको अन्य काममें लगावे, वातोंमें लगावे, पठन विच्छेद करे ५; ज्ञानवंतकी अति अवज्ञा करे, यह हीन जाति वाला है, इत्यादि मर्म प्रगट करनेके वचन बोले, कलंक देवे, प्राणांत कष्ट देवे, तथा आचार्य उपाध्यायकी अविनय मत्सर करे, अकालमें स्वाध्याय करे, योगोपधान रहित शास्त्र पढें, अस्वाध्यायमें स्वाध्याय करे, ज्ञानके उपकरण पास हूयां हिसा मात्रा करे, ज्ञानोपकरणको पग लगावे, ज्ञानोपकरण सहित मैथुन करे, ज्ञानोपकरणको थूंक लगावे. ज्ञानके द्रव्यका नाश करे, नाश करनेको मना न करे इन कामोंसें ज्ञानावरणीय पंच प्रकारका कर्म बांधे; तिसके उदय क्षयोपशमसें नाना प्रकारकी बुद्धिवाले जीव होते महामत सं-

यम तपसें ज्ञानावरणीय कर्म क्षय करे, तब के-
वलज्ञानी सर्व वस्तुका जानने वाला होवे, इति
प्रथम ज्ञानावरणीय कर्मका संक्षेप मात्र स्वरूप. १

अथ दूसरा दर्शनावरणीय कर्म तिसके नव
९ भेदहै. चक्षुदर्शनावरण १ अचक्षुदर्शनावरण २
अवधिदर्शनावरण ३ केवलदर्शनावरण ४ निद्रा ५
निद्रानिद्रा ६ प्रचला ७ प्रचला प्रचला ८ स्त्यान-
र्द्धी ९. अब इनका स्वरूप लिखतेहै. सामान्य रूप
करके अर्थात् विशेष रहित वस्तुके जाननेकी जो
आत्माकी शक्तिहै तिसकों दर्शन कहते है, तिनमें
नेत्रांकी शक्तिकों आवरण करे सो चक्षुदर्शनावर
णीय कर्मका भेदहै; इसके क्षयोपशमकी विचि-
त्रतासें आंखवाले जीवोंकी आंखद्वारा विचित्र त
रेंकी दृष्टि प्रवर्त्ते है, इसके क्षयोपशम होनेमें वि-
चित्र प्रकारके निमित्त है, इति चक्षुदर्शनावरणी-

य १. नेत्र वर्जके शेष चारों इंद्रियोंकों अचक्षु दर्शन कहते है, तिनके सुनने, सूंघने, रस लेने, स्पर्श पिछाननेका जो सामान्य ज्ञानहै सो अचक्षु दर्शनहै; चारो इंद्रियोंकी शक्तिका आछादन करनेवाला जो कर्म है तिसको अचक्षु दर्शन कहते है, इसके क्षयोपशम होनेमें अंतरंग बहिरंग विचित्र प्रकारके निमित्तहै. तिन निमित्तोंद्वारा इस कर्मका क्षय उपशम जैसा जैसा जीवांके होता है तैसी तैसी जीवोंकी चार इंद्रियकी स्व स्व विषयमें शक्ति प्रगट होती है, इति अचक्षुदर्शनावरणी ३. अवधि दर्शनावरणीय और केवलदर्शनावरणीयका स्वरूप शास्त्रसें देख लेनां; क्योंकि सामग्रीके अभावसें ये दोनो दर्शन इस कालक्षेत्रके जीवांकों नही है, एवं दर्शनावरणीयके चार भेद हुए ४. पांचमा भेद निद्रा जिसके उदयसें

सुखें जागे सो निद्रा १ जो बहुत हलाने चलानेसें जागे सो निद्रा निद्रा २ जो बैठेकों नींद आवे सो प्रचला ३ जो चलतेकों आवे सो प्रचला प्रचला ४ जो नींदमें उठके अनेक काम करे नींदमें शरीरमें बल बहुत होवे है, तिसका नाम स्त्यानर्द्धी निद्राहै ५. पांच इंद्रियांके ज्ञानमे हानि करती है, इस वास्ते दर्शनावरणीयकी प्रकृति है, एवं ए भेद दर्शनावरणीय कर्मके हुए, इस कर्मके बांधनेके हेतु ज्ञानावरणीयकी तरे जानने, परं ज्ञानकी जगे दर्शन पद कहनां, दर्शन चक्षु अचक्षु आदि, दर्शनी साधु आदि जीव, तिनकी पांच इंद्रियाका बुरा चिंते, नाश करे अथवा सन्मति तत्वार्थ द्वादशार नयचक्रवाल तर्कादि दर्शन प्रभावक शास्त्रके पुस्तक तिनका प्रत्यनीकपणादि करेतो दर्शनावरणीय कर्मका बंध करे,

इति दुसरा कर्म २.

अथ तीसरा वेदनीय कर्म तिसकी दो प्र-कतिहै; साता वेदनीय १ असाता वेदनीय २ साता वेदनीयसें शरीरकों अपने निमित्तद्वारा सुख होताहै; और असाता वेदनीयके उदयसें दुःख प्राप्त होता है. एवं दो भेदोंके बांधनेके कारण प्रथम साता वेदनीयके बंध करणेके कारण गुरु अर्थात् अपने माता पिता धर्माचार्य इनकी भक्ति सेवा करे १ क्षमा अपने सामर्थके हुए दुसरायोंका अ-पराध सहन करना २ परजीवांकों दुखी देखके तिनके दुःख मेटनेकी वांछा करे ३ पंचमहाव्रत अनुव्रत निर्दूषण पाले ४ दश विध चक्रवाल समा चारी संयम योग पालनेसें ५ क्रोध, मान, माया, लोभ, हास्य, रति अरति, शोक, भय, जुगुप्सा इनके उदय आया इनको निष्फल करे ६ सुपात्र

दान, अन्नय दान, देता सर्व जीवां उपर उपकार करे; सर्व जीवांका हित चिंतन करे ७ धर्ममें स्थिर रहे, मरणांत कष्टकेन्नी आये, धर्मसें चलायमान न होवे, बाल वृद्ध रोगीकी वैयावृत्त करतां धर्ममें प्रवर्त्ततां सहाय करे, चैत्य जिन प्रतिमाकी अती न्नक्ति करतां सराग संयम पाले; देशव्रतीपणा पाले, अकाम निर्जरा अज्ञान तप करें, सौम्य सत्यादि सुंदर अंतःकरणकी वृत्ति प्रवर्त्तावे तो साता वेदनीय कर्म बांधे, इति साता वेदनीयके बंध हेतु कहे १ इनसें विपर्यय प्रवर्त्तें तो असाता वेदनीय बांधे २ इति वेदनीय कर्म स्वरुप ३.

अथ चोथा मोहनीय कर्म तिसके अठावीस न्नेद है, अनंतानुबंधी क्रोध १ मान २ माया ३ लोन्न ४, अप्रत्याख्यान क्रोध ५ मान ६ माया ७ लोन्न ८, प्रत्याख्यानावरण क्रोध ए मान १० माया

११ लोभ १२, संज्वलका क्रोध १३ मान १४ माया १५ लोभ; १६ हास्य १७ रति १८ अरति १९शोक २० भय २१ जुगुप्सा २२ स्त्रीवेद २३ पुरुषवेद २४ नपुंसकवेद २५ सम्यक्त मोहनीय २६ मिश्र मोह- नीय २७ मिथ्यात्व मोहनीय २८ अब इनका स्वरूप लिखतेहै; प्रथम अनंतानुबंधी क्रोध मान माया लोभ जां तक जीवे तां तक रहे; छूटे नही तिनमेंसें अनंतानुबंधी क्रोध तो ऐसाकि जाव जीव सुधी क्रोध न छोडे, अपराधी कितनी आ- धीनगी करे तोभी क्रोध न छोडे,यह क्रोध ऐ- साहै जैसे पर्वतका फटना फेर कदापि न मिले, मान पथ्थरके स्तंभ समान किंचित मात्रभी न- नमे, माया कठिन वांसकी जड समान सूधी न होवे, लोभ कीरमेके रंग समान फेर उतरे नही; ये चारों जिसके उदयमें होवे सो जीव मरके न-

रकमें जाता है; और इस कषायके उदयमें जी-
वांकों सच्चे देवगुरू धर्मकी श्रद्धारूप सम्यक्त नही
होता है; ४ दूसरा अप्रत्याख्यान कषाय तिसकी
स्थिति एक वर्षकी है. एक वर्ष तक क्रोध मान
माया लोभ रहे तिनमें क्रोधका स्वरूप पृथ्वीके
रेखा फाटने समान बडे यतनसें मिले, मान हा-
ड़कें स्तंभे समान मुश्केलसें नमे, माया मिंढेके
सींगके वल समान सिधा कठनतासें होवे; लोभ
नगरकी मोरीके कीचड़के दाग समान, इस क-
षायके उदयसें देश वृतीपणा न आवे और मरके
पशु तीर्यंचकी गतिमें जावे ५ तीसरी प्रत्याख्या
नावरण कषाय तिसकी स्तिथि चार मासकी है.
क्रोध वालुकी रेखा समान, मान काष्टके स्तंभे
समान, माया बैलके मूत्र समान वांकी, लोभ
गाड़ीके खंजन समान, इसके उदयसें शुद्ध साधु

नही होता है ऐसा कषायवाला मरके मनुष्य होताहै १२ चौथी संज्वलनकी कषाय, तिसकी स्थिति एक पक्षकी. क्रोध पाणीकी लकीर समान, मान वांसकी शीखके स्तंभे समान, माया, वांसकी छिल्लक समान, लोभ हलदीके रंग समान, इसके उदयसें वीतराग अवस्था नही होती है. इस कषाइवाला जीव मरके स्वर्गमें जाताहै १६ जिसके उदयसें हासी आवे सो हास्य प्रकृति १७ जिसके उदयसें चित्तमें निमित्त निर्निमित्तसें रति अंतरमें खुशी होवे सो रति १८ जिसके उदयसें चित्तमें सनिमित्त निर्निमित्तसें दिलगीरी उदासी उत्पन्न होवें सो अरति प्रकृति १९ जिसके उदयसें इष्ट विजोगादिसें चित्तमें उद्वेग उत्पन्न होवे सो शोक मोहनीय प्रकृति २० जिसके उदयसें सात प्रकारका भय उत्पन्न होवे सो भय

मोहनीय २१ जिसके उदयसें मलीन वस्तु देखी सूग उपजे सो जुगुप्सा मोहनीय २२ जिसके उदयसें स्त्रीके साथ विषय सेवन करनेकी इछा उत्पन्न होवे, सो पुरुषवेद मोहनीय २३ जिसके उदयसें पुरुषके साथ विषय सेवनेकी इछा उत्पन्न होवे, सो स्त्री वेद मोहनीय २४ जिसके उदयसें स्त्रीपुरुष दोनोंके साथ विषय सेवनेकी अभिला-षा उत्पन्न होवे, सो नपुंसकवेद मोहनीय. २५ जिसके उदयसें शुद्ध देव गुरु, धर्मकी श्रद्धा न होवे सो मिथ्यात्व मोहनीय २६ जिसके उदयसें शुद्ध देव गुरु धर्म अर्थात् जैनमतके ऊपर राग-भी न होवे और द्वेषभी न होवे, अन्य मतकीभी श्रद्धा न होवे सो मिश्र मोहनीय २७ जिसके उ-दयसें शुद्ध देव गुरु धर्मकी श्रद्धातो होवे परंतु सम्यक्तमें अतिचार लगावे सो सम्यक्त मोहनीय

२८ इन २८. प्रकृतियोमें आदिकी २५ पच्चीस प्रकृतिकों चारित्र मोहनीय कहते है, और ऊपली तीन प्रकृतियोंकों दर्शनमोहनीय कहते है एवं २८ प्रकृतिरुप मोहनीय कर्म चौथा है, अब मोहनीय कर्मके बंध होनेके हेतु लिखते है. प्रथम मिथ्यात्व मोहनीयके बंध हेतु उन्मार्ग अर्थात् जे संसारके हेतु हिंसादिक आश्रव पापकर्म तिनकों मोक्ष हेतु कहे तथा एकांत नयसें निः केवल क्रिया कष्टानुष्टानसें मोक्ष प्ररूपे तथा एकांत नयसें निःकेवल ज्ञान मात्रसें मोक्ष कहे ऐसेही एकले विनयादिकसें मोक्ष कहे १ मार्ग अर्थात् अर्हंत प्ररूपित सम्यग् दर्शन ज्ञान चारित्ररुप मोक्ष मार्ग तिसमे प्रवर्त्तनेवाले जीवकों कुहेतु, कुयुक्ति, करके पूर्वोक्त मार्गमें भ्रष्ट करे २ देवद्रव्य ज्ञान इत्यादिक तिनसें जो भगवानके मंदिर प्रतिमादि

के काम आवे काष्ट, पाषाण, मृतीकादिक तथा तिस देहरादिके निमित्त करा हुआ रूपा, सोनादि धन तिसका हरण करे; देहराकी नूमि प्रमुखकों अपनी कर लेवे, देवकी वस्तुसें व्यापार करके अपनी आजीवीका करे तथा देवद्रव्यका नाश करे, शक्तिके हुए देवद्रव्यके नाश करनेवालेको हटावे नही, ये पुर्वोक्त काम करनेवाला मिथ्यादृष्टि होताहै, सो मिथ्यात्व मोहनीय कर्मका बंध करता है; तथा दूसरा हेतु तीर्थंकर केवलीके अवर्णवाद बोले, निंदा करे, तथा नले साधुकी तथा जिन प्रतिमाकी निंदा करे, तथा चतुर्विध संघ साधु साधवी श्रावक श्राविकाका समुदाय तिसकी श्रुतज्ञानकी निंदा अवज्ञाहीलना करता हुआ, और जिन शासनका उड्डाह करता हुआ अयश करता कराता हुआ निकाचित महा मिथ्यात्व

मोहनीय कर्म वांधे. इति दर्शन मोहनीयके बंध हेतु. ॥ अथ चारित्रमोहनीय कर्मके बंध हेतु लिखते है. चारित्र मोहनीय कर्म दो प्रकारका है, कषाय चारित्र मोहनीय १. नोकषाय चारित्र मोहनीय २. तिनमेंसें कषाय चारित्र मोहनीयके १६ सोलां भेदहे, तिनके बंध हेतु लिखते है. अनंतानुबंधी क्रोध, मान, माया, लोभमे प्रवर्त्ते तो सोलाही प्रकारका कषाय मोहनीय कर्म वांधे. अप्रत्याख्यानमे वर्त्ते तो ऊपल्या बारां कषाय वांधे. प्रत्याख्यानमें प्रवर्त्ते तो ऊपल्या आठ कषाय वांधे, संज्वलनमें प्रवर्त्ते तो चार संज्वलनका कषाय वांधे. इति कषाय चारित्र मोहनीयके बंध हेतु. नोकषाय हास्यादि तिनके बंध हेतु यह है, प्रथम हास्य हांसी करे, भांड कुचेष्टा करे, बहुत बोले तो हास्य मोहनीय कर्म वांधे १ देश देखनेके र-

ससें, विचित्र क्रीमाके रससें, अति वाचाल हो-
नेसें, कामण मोहन टूणा वगेरे करे; कुतुहल करे
तो रति मोहनीय कर्म बांधे २ राज्य ज्ञेद करे,
नवीन राजा स्थापन करे परस्पर लमाइ करावे,
दूसरायोंकों अरित उच्चाट उत्पन करे, अशुज्ञ
काम करने करानेमें उत्साह करे, और शुज्ञ का-
मके उत्साहकों ज्ञांजे, निष्कारण आर्त्तध्यान करे
तो अरति मोहनीय कर्म बांधे ३. परजीवांकों
त्रास देवे तो, निदर्य परिणामी ज्ञय मोहनीय
कर्म बांधे ४. परको शोक चिंता संताप उपजावे
तपावे तो शोक मोहनीय कर्म बांधे ५ धर्मी
साधु जनोकी निंदा करे साधुका मलमलीनगात्र
देखी निंदा करे तो जुगुप्सा मोहनीय कर्म बांधे
६, शब्द, रुप, रस, गंध, स्पर्सरूप मनगती वि-
षयमें अत्यंताशक्त होवे डुसरेकी इर्षा करे, माया

मृषा सेवे, कुटिल परिणामी होवे, पर स्त्रीसें जोग करै तो जीव स्त्रीवेद मोहनीय कर्म वांधे ७ सरल होवे, अपनी स्त्रीस उपरांत संतोषी होवे, इर्षा रहित मंद कषायवाला जीव पुरुषवेद वांधे८ तीव्र कषायवाला, दर्शन दुसरे मतवालोंका शील जंग करे, तीव्र विषयी होवे, पशुकी घात करे, मिथ्यादृष्टी जीव नपुंसकवेद वांधे ए. संयमीके दुषण दिखावे, असाधुके गुण बोले, कषायकी उदीरणा करता हुआ जीव चारित्र मोहनीय कर्म समुच्चय वांधे, इति मोहनीय कर्म बंध हेतु. यह मोहनीय कर्म मदीराके नशेकी तरं अपने स्वरूपसें भ्रष्ट कर देताहै. इति मोहनीय कर्मका स्वरूप संक्षेप मात्र पुरा हुआ ४

अथ पांचमा आयुकर्म, तिसकी चारप्रकृति जिनके उदयसें नरक १ तिर्यंच २ मनुष्य ३

देव ४ जवसें खैंचा हुआ जीव जावे है, जैसें चमकपाषाण लोहकों आकर्षण करता है, तिसका नाम आयुकर्म. नरकायु १ तिर्यंचायु २ मनुष्यायु ३ देवायु ४ प्रथम नरकायुके बंध हेतु कहतेहै. महारंज चक्रवर्ती प्रमुखकी ऋद्धि जोगनेमें महा मूर्छा परिग्रह सहित, व्रत रहित अनंतानुबंधी कषायोदयवान् पंचेंद्रिय जीवकी हिंसा निशंक होकर करे, मदिरा पीवे, मांस खावे, चोरी करे, जूया खेले, परस्त्री और वेस्या गमन करे; शिकार मारे, कृतघ्नी होवे, विश्वासघाती, मित्र द्रोही, उत्सूत्र प्ररूपे, मिथ्यामतकी महिमा वढावे, कृष्ण नील, कापोत लेश्यासें अशुज परिणामवाला जीव नरकायु बांधे १ तिर्यंचकी आयुके बंध हेतु यह है. गूढ हृदयवाला, अर्थात् जिसके कपटकी किसीको खबर न पमे, धूर्त्त होवे, मुखसें मीठा बोले,

हृदयमें कतरणी रखे, जूठे दूषण प्रकाशे, आर्त्त-
ध्यानी इस लोकके अर्थें तप क्रिया करे, अपनी
पूजा महिमाके नष्ट होनेके भयसें कुकर्म करके
गुरुआदिकके आगे प्रकाशे नही, जूठ बोले, क-
मती देवे, अधिक लेवे, गुणवानकी इर्षा करै,
आर्त्तध्यानी कृष्णादि तीन मध्यम लेश्यावाला जीव
तिर्यंच गतिका आयु बांधे. इति तिर्यंचायु १
अथ मनुष्यायुके बंधहेतु मिथ्यात्व कषायका स्व-
भावही मंदोदयवाला प्रकृतिका भद्रिक धूल रेखा
समान कषायोदयवाला सुपात्र कुपात्रकी परीक्षा
विना विशेष यश कीर्त्तिकी वांछा रहित दान देवे,
स्वभावे दान देनेकी तीव्र रुचि होवे, क्षमा, आ-
र्जव, मार्दव, दया, सत्य शौचादिक मध्यम गुणा-
में वर्त्ते, सुसंबोध्य होवे, देव गुरुका पूजक, पूजा-
प्रिय कापोत लेश्याके परिणामवाला मनुष्य ति-

र्यंचादि मनुष्यायु बांधे ३. अथ देव आयु अविरति सम्यगदृष्टि मनुष्य तिर्यंच देवताका आयु बांधे सुमित्रके संयोगसें धर्मकी रुचिवाला देशविरति सरागसंयमी देवायु बांधे, बालतप अर्थात् दुःखगर्भित, मोहगर्भित वैराग्य करके दुष्कर कष्ट पंचाग्नि साधन रस परित्यागसें, अनेक प्रकारका अज्ञान तप करनेसें निदान सहित अत्यंत रोष तथा अहंकारसें तप करे, असुरादि देवताका आयु बांधे तथा अकाम निर्जरा अजाणपणे भूख, तृषा, शीत, उष्ण रोगादि कष्ट सहनेसें स्त्री अन मिलते शील पाले, विषयकी प्राप्तिके अभावसें विषय न सेवनसें इत्यादि अकाम निर्जरासें तथा बाल मरण अर्थात् जलमें डूब मरे, अग्निसें जल मरे, झंपापातसें मरे, शुभ परिणाम किंचित्वाला तो व्यंतर देवताका आयु बांधे, आचार्यादिककी अ-

वज्ञा करे तो, किल्विष देवताका आयु वांधे, तथा मिथ्यादृष्टीके गुणांकी प्रशंसा करे, महिमा वढावे. अज्ञान तप करे, और अत्यंत क्रोध होवे तो, परमाधार्मिकका आयु वांधे, इति देवायुके वंधहेतु. यह आयु कर्म हडिके वंधन समान है. इसके उदयसें चारों गतिके जीव जीवते है. और जव आयु पूर्ण होजाता है तव कोइन्नी तिसकों नही जीवा सक्ता है, जेकर आयुकर्म विना जीव जीवे तो मतधारीयोके अवतार पैगंवर क्यों मरते ? जितनी आयु पूर्व जन्ममें जीव वांधके आया है तिससें एक क्षण मात्रन्नी कोइ अधिक नही जीव सक्ता है, औरन किसीको जीवा सक्ता है मतधारी जो कहते है हमारे अवतारादिकनें अमुक अमुककों फिर जीवता करा, यह वात महा मिथ्या है क्योंकि जेकर उनमें ऐसी शक्ती होतीतो

आप क्यों मर गये ? सदा क्यों न जीते रहे ? ईशा महम्मदादि जेकर आज तक जीते रहेतेतो हम जानते ये सच्चे परमेश्वरकी तर्फसें उपदेश करने आये है. हम सब उनके मतमें हो जाते. मत धारीयोकों मेहनत न करनी पडती, जबसाधारण मनुष्योके समान मर गये तब क्योंकर शक्तिमान हो सक्तेहै ? ये सर्व जूठी वातोंकी अणघड गप्पे जंगली गुरुयोने जंगलीपणेसें मारीहै, इस वास्ते सर्व मिथ्याहै. इति आयु कर्म पंचमा.

अथ ६ठा नाम कर्म, तिसका स्वरूप लिखतेहै. तिसके ९३ तिरानवे भेदहै. नरकगति नाम कर्म १ तिर्यंच गति नाम २ मनुष्य गति नाम ३ देवगति नाम ४ एकेंद्रिय जाति १ द्वींद्रिय जाति२ तीनेंद्रिय जाति ३ चारं इंद्रिय जाति ४ पंचेंद्रिय जाति ५ एवं ९ ऊदारिक शरीर १० वैक्रिय शा-

रीर ११ आहारिक शरीर १२ तैजस शरीर १३ कार्मण शरीर १४ ऊदारिकांगोपांग १५ वैक्रियांगोपांग १६ आहारिकांगोपांग १७ ऊदारिकबंधन १८ वैक्रिय वंधन १९ आहारिक वंधन २० तैजस वंधन ११ कार्मण वंधन २१ ऊदारिक संघातन २३ वैक्रिय संघातन २४ आहारिक संघातन २५ तैजस संघातन २६ कार्मण संघातन २७ वज्र ऋषभ नराच संहनन २८ ऋषभ नराच संहनन २९ नराच संहनन ३० अर्द्ध नराच संहनन ३१ कीलिका संहनन ३२ छेवर्त्त संहनन ३३ सम च तुरस्र संस्थान ३४ निग्रोध परिमंडल संस्थान ३५ सादिया संस्थान ३६ कुब्ज संस्थान ३७ वामन संस्थान ३८ हुंडक संस्थान ३९ कृष्ण वर्ण ४० नील वर्ण ४१ रक्त वर्ण ४२ पीत वर्ण ४३ शुक्ल वर्ण ४४ सुगंध ४५ दुर्गंध ४६ तिक्त रस ४७ क-

टुक रस ४७ कषायरस४ए आम्ल रस ५० मधुर रस ५१ कर्कश स्पर्श ५२ मृडु स्पर्श ५३ हलका ५४ नारी ५५ शीत स्पर्श ५६ उष्ण स्पर्श ५७ स्निग्ध स्पर्श ५७ रुक्षस्पर्श ५ए नरकानुपूर्वी ६० तिर्यँचानुपूर्वी ६१ मनुष्यानुपूर्वी ६२ देवानुपूर्वी शुनविहायगति ६४ अशुनविहायगति६५ पराघात नाम ६६ उत्स्वास ६७ आतप ६७ उद्योत नाम ६एअगुरू लघु ७० तीर्थंकर नाम ७१ निर्माण७२ उपघात नाम ७३ त्रसनाम ७४ बादर नाम ७५ पर्याप्त नाम ७६ प्रत्येक नाम ७७ स्थिर नाम ७७ शुन नाम ७ए सुनग नाम ७० सुस्वर नाम ७१ आदेय नाम ७२ यशकीर्ति नाम ७३स्थावरनाम सूक्ष्म नाम ७५ अपर्याप्तनाम ७६ साधारणनाम ७७ अस्थिर नाम ७७ अशुन नाम ७ए डुर्नग नाम ए० डुस्वर नाम ए१ अनादेय नाम ए२

अपयश नाम ए३ ये तिरानवे भेद नाम कर्मकेहै अब इनका स्वरूप लिखतेहै. गतिनाम कर्म जिस कर्मके उदयसें जीव नरक १ तिर्यंच २ मनुष्य ३ देवताकी गति पर्याय पामें, नरकादि नाम कहनेसें आवे, और जीव मरे तब जिस गतिका गतिनामकर्म, आयुकर्म मुख्यपणे और गतिनाम कर्म सहचारी होवे है, तब जीवकों आकर्षण करके ले जातेहै, तब वो जीव तिस गति नाम और आयु कर्मके वश हुआ थका जहां उत्पन्न होना होवे तिस स्थानमें पहुंचेहै. जेसें लोहेवाली सूइकों चमक पाषाण आकर्षण कर्त्ता है और सूइ चमक पाषाणकी तर्फ जाती है, लोहाकी सूइके साथही जाताहै, इस तरे नरकादि गतियोंका स्थान चमक पाषाण समान है, आयु कर्म और गतिनाम कर्म लोहकी सूइ समान है, और जीव लोह

समान है बीचमें पोया हुआहै, इस वास्ते परन्न
वमें जीवको आयु और गतिनाम कर्म ले जातेहै,
जैसा २ गतिनाम कर्मका जीवांने बंध करा है;
शुन्न वा अशुन्न तैसी गतिमें जीव तिस कर्मके
उदयसें जा रहता है, इस वास्ते जो अज्ञानी-
योने कल्पना कर रखी है कि पापी जीवकों यम
और धर्मी जीवकों स्वर्गके दूत मरापीछे ले जा-
तेहै तथा जबराइल फिरस्ता जीवांकों ले जाता
है, सो सर्व मिथ्या कल्पना है, क्योंकि जब यम
और स्वर्गीय दूत फिरस्ते मरते होगे, तब तिन-
कों कौन ले जाता होवेगा, और जीवतो जगतमें
एक साथ अनंते मरते और जन्मते, तिन सबके
लेजाने वास्ते इतने यम कहांसें आते होवेंगे और
इतने फिरस्ते कहां रहते होवेंगे? और जीव इस
स्थूल शरीरसें निकला पीछे किसीकेन्नी हाथमें

नही आताहै, इस वास्ते पूर्वोक्त कल्पना जिनोंने सर्वज्ञका शास्त्र नही सुना है तिन अज्ञानीयोंने करीहै. इस वास्ते मुख्य आयुकर्म और गतिनाम कर्मके उदयसेंही जीव परभवमें जाताहै. इति गतिनाम कर्म ४. अथ जातिनाम कर्मका स्वरुप लिखते है. जिसके उदयसें जीव पृथ्वी, पाणी अग्नि, पवन, वनस्पतिरूप एकेंद्रिय, स्पर्शेंद्रियवाले जीव उत्पन्न होतेहै. सो एकेंद्रिय जातिनाम कर्म १ जिसके उदयसें दोइंद्रियवाले कृम्यादिपणें उत्पन्न होवे, सो द्वींद्रिय जातिनाम कर्म २ एवं तीनेंद्रि कीडीआदि, चतुरिंद्रिय भ्रमरादि, पंचेंद्रिय नरक पंचेंद्रिय पशु गोमहिष्यादि मनुष्य देवतापणे उत्पन्न होवे, सो पंचेंद्रिय जातिनामकर्म एवं सर्व ए ऊदारिक शरीर अर्थात् एकेंद्रिय, द्वींद्रिय, त्रींद्रिय, चतुरिंद्रिय, पंचेंद्रिय तिर्यंच मनु-

ष्यके शरीर पावनेकी तथा ऊदारीक शरीरपण परिणामकी शक्ति, तिसका नाम ऊदारिक शरीर नाम कर्म १० जिसकी शक्तिसें नारकी देवताका शरीर पावे, जिससें मन इछित रुप बणावे तथा वैक्रिय शरीरपणे पुद्गल परिणामनेकी शक्ति सो वैक्रिय शरीरनाम कर्म ११ एवं आहारिक लब्धि वालेके शरीरपणे परिणामावे १२ तैजस शरीर अंदर शरीरमें उश्नता, आहार पचावनेकी शक्ति-रुप, सो तैजस नाम कर्म १३ जिसकी शक्तिसें कर्मवर्गणाकों अपने अपने कर्म प्रकृतिके परिणामपणे परिणामावे सो कार्मण शरीर नाम कर्म १४ दो बाहू २ दो साथल ४ पीठ५ मस्तक ६ उरुछाती ७उदर पेट ८ ये आठ अंग और अंगोके साथ लगा हुआ, जैसें हाथसें लगी अंगुलीसाथ लसें लगा जानु, गोमा आदि इनका नाम उपांग

है, शेष अंगुलीके पर्व रेखा रोम नखादि प्रमुख अंगोपांगहै; जिसके उदयतें ये अंगोपांग पावे और इनपणे नवीन पुद्गल परिणामावे ऐसी जो कर्मकी शक्ति तिसका नाम उपांग नाम कर्महै. उदारीकोपांग १५ वैक्रियोपांग, १६ आहारिकोपांग. १७ इति उपांग नामकर्म ॥ पूर्वे बांध्या हुआ उदारीक शरीरादि पांच प्रकृति और इन पांचोके नवीन वंध होतेको पिछले साथ मेलकरके वंधाने जैसे राल लाखादि दो वस्तुयोंको मिला देते है, तैसेही जो पूर्वापर कर्मका संयोग करे, सो वंधन नाम कर्म शरीरके समान पांच प्रकारकाहै. उदारिक वंधन वैक्रियवंधन इत्यादि एवं, २२ प्रकृति हुइ. पांच शरीरके योग्य विखरे हुए पुद्गलोंको एकठे करे, पीछे वंधन नामकर्म वंध करे, तिस, एकठे करणेवाला कर्म प्रकृतिका नाम संघातन नामक-

र्म है, सो पांच प्रकारका है, उदारिक संघातन, वैक्रिय संघातन इत्यादि एवं,२७ सत्तावीस प्रकृति हुइ, अथ उदारिक शरीरपणे जो सात धातु परिणमी है तिनमें हमकी संधिको जो दृढ करे सो संहनन नामकर्म, सो ७ ६ प्रकारका है, तिनमेंसें जहां दोनो हाम दोनों पासे मर्कट बंध होवे तिसका नाम नराच है, तिन दोनों हामोंके ऊपर तीसरा हाम पट्टेकी तरें जकड बंध होवे तिसका नाम ऋषन्न है, इन तीनो हामके न्नेदनेवाली ऊपर खीली होवे तिसका नाम वज्रहै, ऐसी जिस कर्मके उदयसें हामका संधी दृढ होवे तिसका नाम वज्रऋषन्न नाराच संहनन नामकर्म है.२० जहां दोनो हामोंके छेहमे मर्कटबंध मिले हुए होवे और उनके उपर तीसरे हाडका पट्टा होवे ऐसी हाम संधी जिस कर्मके उदयसें होवे सो ऋषन्न

नाराच संहनन नामकर्म २९ जिन हाडोका मर्कटबंध तो होवे परंतु पट्टा और कीली न होवे, जिसके उदयसें सो नाराच संहनन नामकर्म, ३० जहां एक पासे मर्कटबंध और दूसरे पासे खीली होवे जिस कर्मके उदयसें सो अर्द्धनराच संहनन नाम कर्म ३१ जैसें खीलीसें दो काष्ट जोडे होवे तैसें हाडकी संधी जिस कर्मके उदयसें होवे, सो कीलिका संहनन नामकर्म ३२ दोनो हाडोंके छेहडे मिले हुए होवे जिस कर्मसें सो सेवार्त्त संहनन नामकर्म ३३ जिस कर्मके उदयसें सामुद्रिक शास्त्रोक्त संपूर्ण लक्षण जिसके शरीरमें होवे तथा चारो अंस बराबर होवे, पलाठी मारके बेठे तब दोनों जानुका अंतर और दाहिने जानुसें वामास्कंध और वामेजानुसें दाहिनास्कंध और पलाठी पीठसें मस्तक मापता चारों डोरी बराबर होवे

और बत्तीस लक्षण संयुक्त होवे, ऐसा रुप जिस कर्मके उदयसें होवे तिसका नाम सम चतुरस्त्र संस्थान नामकर्म ३४ जैसें वरू वृक्षका उपल्या भाग पुर्ण होवेहै, तैसेंहै जो नाभीसें ऊपर संपुर्ण लक्षणवाला शरीर होवे और नाभीसें नीचे लक्षण हीन होवे, जिस कर्मके उदयसें सो निग्रोध परिमंडल संस्थान नामकर्म ३५ जिसका शरीर नाभीसें नीचे लक्षण युक्त होवे और नाभीसें उपर लक्षण रहित होवे, जिस कर्मके उदयसें सो सादिया संस्थान नामकर्म ३६ जहां हाथ पग मुख ग्रीवादिक उत्तम सुंदर होवे, और हृदय, पेट, पूठ लक्षण हीन होवे जिस कर्मके उदयसें सो कुब्ज संस्थान नामकर्म ३७ जहां हाथ पग लक्षण हीन होवे; अन्य अंग लक्षण संयुक्त अछे होवे जिस कर्मके उदयसें सो वामन संस्थान

नामकर्म ३७ जहां सर्व शरीरके अवयव लक्षण हीन होवे सो हुंडक संस्थान नामकर्म, ३९ जिस कर्मके उदयसें जीवका शरीर मषी; स्याही नील समान काला होवे तथा शरीरके अवयव काले होवे सो कृष्णवर्ण नामकर्म ४० जिसके उदयसें जीवका शरीर तथा शरीरके अवयव सूयकी पुछ तथा जंगाल समान नील अर्थात् हरितवर्ण होवे सो नीलवर्ण नामकर्म ४१ जिसके उदयसें जीव-का शरीर तथा शरीरके अवयव लाल हिंगलु स-मान रक्त होवे, सो रक्तवर्ण नामकर्म ४२ जिस कर्मके उदयसें जीवका शरीर तथा शरीरके अ-वयव पीत हरिताल, हलदी चंपकके फूलसमान पीले होवे पीतवर्ण नामकर्म ४३ जिस कर्म के उदयसें जीवका शरीर तथा शरीरके अवयव संख स्फटिक समान उज्वल होवे, सो शुक्लवर्ण

नामकर्म ४४ जिसके उदयसें जीवके शरीर तथा शरीरके अवयव सुरभि गंध अर्थात् कपूर, कस्तूरी, फूल सरीखी सुगंधी होवे, सो सुरभीगंध नामकर्म ४५ जिस कर्मके उदयसें जीवके शरीर तथा शरीरके अवयव दुरभीगंध लशुन मृतक शरीर सरीखी दुरभीगंध होवे, सो दुरभीगंध नामकर्म ४६ जिसके उदयसें जीवका शरीर तथा शरीरके अवयव नींब चिरायते सरीसा रस होवे, सो तिक्तरस नामकर्म ४७ जिसके उदयसें जीवका शरीरादि सूंठ, मरिचकी तरे कटुक होवे, सो कटुकरस नामकर्म ४८ जिसके उदयसें जीवका शरीरादि हरमे, बहेमें समान कसायला रस होवे सो कसायरस नामकर्म ४९ जिस कर्मके उदयसें जीवके शरीरादिका रस लिंबू, आम्ली सरीखा खट्टारस होवे, सो खट्टारस नामकर्म ५०

जिस कर्मके उदयसें जीवके शरीरादि खांड, सा-
करादि समान रस होवे, सो मधुररस नामकर्म
५१ इति रस नाम कर्म जिसके उदयसें जीवके
शरीरमें तथा शरीरके अवयव कठिन कर्कस गा-
यकी जीभ समान होवे, सो कर्कस स्पर्श नाम
कर्म ५२ जिसके उदयसें जीवका शरीर तथा
शरीरके अवयव माखणकी तरें कोमल होवे. सो
मृदु स्पर्श नाम कर्म ५३ जिसके उदयसें जीवका
शरीर तथा अवयव अर्क तूलकी तरें हलकें होवे
सो लघु स्पर्श नामकर्म ५४ जिसके उदयमें लो-
हेवत भारी शरीरके अवयव होवे, सो गुरु स्पर्श
नामकर्म ५५ जिस कर्मके उदयसें जीवका शरीर
तथा अवयव हिम वर्फवत शीतल होवे, सोशीत-
स्पर्श नामकर्म५६ जिसके उदयसें जीवका शरीर
तथा अवयव उष्ण होवे सो उष्ण स्पर्श नाम-

कर्म ५७ जिस कर्मके उदयसें जीवका शरीर तथा शरीरावयव घृतकी तरें स्निग्ध होवे, सो स्निग्ध स्पर्श नाम कर्म ५८ जिस कर्मके उदयसें जीवका शरीरावयव राखकीतरे रूखे होवे सो रुक्ष स्पर्श नामकर्म ५ए इति स्पर्श नामकर्म नरक, तिर्यंच मनुष्य, देव ए चार जगें जब जीव गति नाम कर्मके उदयसें वक्र बांकी गति करे, तव तिस जीवकों बांके जातेको जो अपने स्थानमें ले जावे, जैसे वैलके नाकमें नाथ तैसे जीवके अंतराल वक्र गतिमें अनुपूर्वीका उदय तथा जो जीवके हाथ पगादि सर्व अवयव यथा योग्य स्थानमें स्थापन करे, सो अनुपूर्वी नामकर्म सो. चार प्रकारका है, नरकानुपूर्वी १ तिर्यंचानुपूर्वी २ मनुष्यानुपूर्वी ३ देवतानुपूर्वी ४ एवं सर्व ६३ हुइ, जिसके उदय सें हाथी वृषभकी तरे शुभ चलनेकी गति होवे

सो शुभ्र विहाय गति ६४ जिस कर्मके उदयसें ऊंटकी तरे बुरी चाल गति होवे, सो अशुभ्र विहाय गति नामकर्म ६५ जिसके उदयसें परकी शक्ति नष्ट हो जावे, परसें गंज्या पराभव करा न जाय, सो पराघात नामकर्म ६६ जिसके उदयसें श्वासोश्वासके लेनेकी शक्ति उत्पन्न होवे, सो उत्स्वास नामकर्म ६७ जिसके उदयसें जीवांका शरीर उष्ण प्रकाश वाला होवे, सूर्य मंडलवत्, सो आतप नामकर्म ६८ जिसके उदयसें जीवका शरीर अनुष्ण प्रकाशवाला होवे, सो उद्योत नामकर्म, चंद्र मंडलवत् ६९ जिसके उदयसें जीवका शरीर अति भारी अति हलका न होवे, सो अगुरु लघु नामकर्म ७० जिसके उदयसें चतुर्विध संघ तीर्थथापन करके तीर्थंकर पदवी लहे, सो तीर्थंकर नामकर्म ७१ जिस कर्मके

उदयसें जीवके शरीरमें हाथ, पग, पिंडी, साथ-ल, पेट, छाती, बाहु, गला, कान, नाक, होठ, दांत, मस्तक, केश, रोम शरीरकी नशांकी विचित्र रचना, आंख, मस्तक प्रमुखके पडदे यथार्थ यथा योग्य अपने २ स्थानमें उत्पन्न करे होवे, संचयसें जैसें वस्तु बनतीहै तैसेंही निर्माण कर्मके उदय-सें सर्व जीवांके शरीरोमें रचना होतीहै, सो निर्माणकर्म ७२ जिसके उदयसें जीव अधिक तथा न्यून अपने शरीरके अवयव करके पीडा पामे, सो उपघात नामकर्म ७३ जिसके उदयसें जीव थावरपणा छोडी हलने चलनेकी लब्धि शक्ति पावे सो त्रसनाम कर्म है ७४ जिस कर्मके उदयसें जीव सूक्ष्म शरीर छोडके बादर चक्षु ग्राह्य शरीर पावे सो बादर नामकर्म ७५ जिस कर्मके उदयसें जीव प्रारंभ करी हुइ छ ६ पर्याप्ति

अर्थात् आहार पर्याप्ति १ शरीर पर्याप्ति २ इंद्रिय पर्याप्ति ३ सासोत्स्वास पर्याप्ति ४ भाषा पर्याप्ति ५ मनः पर्याप्ति ६ पूरी करे, सो पर्याप्तनामकर्म ७६ जिसके उदयसें एक जीव एकही उदारिक शरीर पावे सो प्रत्येक नामकर्म ७७ जिस कर्म के उदयसें जिवके हाड दांतादि दृढ बंध होवे, सो थिर नामकर्म ७८ जिस कर्मके उदयसें नाभिसें उपरला भाग शरीरका पावे, दुसरेके तिस अंगका स्पर्श होवें तोभी बुरा न माने सो शुभ नामकर्म ७९ जिस कर्मके उदयसें विना उपकारके कस्याभी तथा सबंध विना वल्लभलागे, सो सौभाग्य नामकर्म ८० जिस कर्मके उदयसें जीवका कोकिलादी समान मधुर स्वर होवे, सो सुस्वर नामकर्म ८१ जिस कर्मके उदयसें जीवका वचन सर्वत्र माननीय होवे सो आदेय नामकर्म

७२ जिस कर्मके उदयसें जगतमें जीवकी यश-कीर्त्ति फैले, सो यश कीर्त्ति नामकर्म ७३ जिस कर्मके उदयसें जीव त्रसपणा गेमी स्थावर पृथ्वी पानी, वनस्पत्यादिकका जीव हो जावे, हली चली न सके, सो स्थावर नामकर्म ७४ जिस कर्मके उदयसें सूक्ष्म शरीर जीव पावे सो सूक्ष्म नामकर्म ७५ जिस कर्मके उदयसें प्रारंभी हुइ पर्याप्ति पुरी न कर सके, सो अपर्याप्त नामकर्म. ७६ जिस कर्मके उदयसें अनंते जीव एक शरीर पामे, सो साधारण नामकर्म ७७ जिस कर्मके उदयसें जीवके शरीरमें लोहु फिरे हाम्हादि, सि-थल होवे, सो अथिर नामकर्म ७८ जिस कर्मके उदयसें नाभीसें नीचेका अंग उपांगादि पावे, सो अशुभ नामकर्म ७९ जिस कर्मके उदयसें जीव अपराधके विना करेही बुरा लगे, सो दौर्भाग्य

अर्थात् आहार पर्याप्ति १ शरीर पर्याप्ति २ इंद्रिय पर्याप्ति ३ सासोत्स्वास पर्याप्ति ४ भाषा पर्याप्ति ५ मनः पर्याप्ति ६ पूरी करे, सो पर्याप्त नामकर्म ७६ जिसके उदयसें एक जीव एकही उदारिक शरीर पावे सो प्रत्येक नामकर्म ७७ जिस कर्म के उदयसें जिवके हाड दांतादि दृढ बंध होवे, सो थिर नामकर्म ७८ जिस कर्मके उदयसें नाभिसें उपरल्या भाग शरीरका पावे, दुसरेके तिस अंगका स्पर्श होवें तोभी बुरा न माने सो शुभ नामकर्म ७९ जिस कर्मके उदयसें विना उपकारके करयांभी तथा संबंध विना वल्लभ लागे, सो सौभाग्य नामकर्म ८० जिस कर्मके उदयसें जीवका कोकिलादी समान मधुर स्वर होवे, सो सुस्वर नामकर्म ८१ जिस कर्मके उदयसें जीवका वचन सर्वत्र माननीय होवे सो आदेय नामकर्म

७२ जिस कर्मके उदयसें जगतमें जीवकी यश-
कीर्त्ति फैले, सो यश कीर्त्ति नामकर्म ७३ जिस
कर्मके उदयसें जीव त्रसपणा छोडी स्थावर पृथ्वी
पानी, वनस्पत्यादिकका जीव हो जावे, हली
चली न सके, सो स्थावर नामकर्म ७४ जिस
कर्मके उदयसें सूक्ष्म शरीर जीव पावे सो सूक्ष्म
नामकर्म ७५ जिस कर्मके उदयसें प्रारंभी हुइ
पर्याप्ति पुरी न कर सके, सो अपर्याप्त नामकर्म.
७६ जिस कर्मके उदयसें अनंते जीव एक शरीर
पामे, सो साधारण नामकर्म ७७ जिस कर्मके
उदयसें जीवके शरीरमें लोहु फिरे हाडादि, सि-
थल होवे, सो अथिर नामकर्म ७८ जिस कर्मके
उदयसें नाभीसें नीचेका अंग उपांगादि पावे, सो
अशुभ नामकर्म ७९ जिस कर्मके उदयसें जीव
अपराधके विना करेही बुरा लगे, सो दौर्भाग्य

अर्थात् आहार पर्याप्ति १ शरीर पर्याप्ति २ इंद्रिय पर्याप्ति ३ सासोत्स्वास पर्याप्ति ४ नाषा पर्याप्ति ५ मनः पर्याप्ति ६ पूरी करे, सो पर्याप्त नामकर्म ७६ जिसके उदयसें एक जीव एकही उदारिक शरीर पावे सो प्रत्येक नामकर्म ७७ जिस कर्म के उदयसें जिवके हाम दांतादि दृढ बंध होवे, सो थिर नामकर्म ७८ जिस कर्मके उदयसें नाभिसें उपरल्या नाग शरीरका पावे, दुसरेके तिस अंगका स्पर्श होवें तोनी बुरा न माने सो शुन्न नामकर्म ७९ जिस कर्मके उदयसें विना उपकारके करयांनी तथा संबंध विना वल्लन्न लागे, सो सौन्नाग्य नामकर्म ८० जिस कर्मके उदयसें जीवका कोकिलादी समान मधुर स्वर होवे, सो सुस्वर नामकर्म ८१ जिस कर्मके उदयसें जीवका वचन सर्वत्र माननीय होवे सो आदेय नामकर्म

८२ जिस कर्मके उदयसें जगतमें जीवकी यश-कीर्त्ति फैले, सो यश कीर्त्ति नामकर्म ८३ जिस कर्मके उदयसें जीव त्रसपणा छोमी स्थावर पृथ्वी पानी, वनस्पत्यादिकका जीव हो जावे, हली चली न सके, सो स्थावर नामकर्म ८४ जिस कर्मके उदयसें सूक्ष्म शरीर जीव पावे सो सूक्ष्म नामकर्म ८५ जिस कर्मके उदयसें प्रारंज्नी हुइ पर्याप्ति पुरी न कर सके, सो अपर्याप्त नामकर्म. ८६ जिस कर्मके उदयसें अनंते जीव एक शरीर पामे, सो साधारण नामकर्म ८७ जिस कर्मके उदयसें जीवके शरीरमें लोहु फिरे हामादि, सि-थल होवे, सो अथिर नामकर्म ८८ जिस कर्मके उदयसें नाज्नीसें नीचेका अंग उपांगादि पावे, सो अशुज्न नामकर्म ८९ जिस कर्मके उदयसें जीव अपराधके विना करेही बुरा लगे, सो दौर्ज्नाग्य

नामकर्म ए० जिस कर्मके उदयसें जीवका स्वर मार्जार, ऊंट सरीखा होवे, सो दुःस्वर नामकर्म ए१ जिस कर्मके उदयसें जीवका वचन अच्छाभी होवे, तोभी लोक न माने सो अनादेय नामकर्म ए२ जिस कर्मके उदयसें जीवका अपयश अकीर्त्ति होवे, सो अपयश कीर्त्ति नामकर्म, ए३ इति नामकर्म. ६.

अथ नामकर्म बंध हेतु लिखते है ॥ देव गत्यादि तीस ३० शुभ नामकर्मकी प्रकृतिका बंधक कौनहोवे, सो लिखते है. सरल कपट रहित होवे जैसी मनमें होवे तैसेही कायकी प्रवृत्ति होवे. किसीकोंभी अधिक न्युन तोला, मापा करके न ठगे, परवंचन बुद्धि रहित होवे, ऋद्धिगारव, रसगारव, सातागारव, करके रहित होवे, पाप करता डरे परोपकारी सर्व जन प्रिय क्षमा

दि गुणयुक्त ऐसा जीव शुन्न नामकर्म बांधे तथा अप्रमत्त यतिपणे चारित्रियो आहारकद्विक बांधे, २ और अरिहंतादि वीश स्थानकको सेवता हुआ तीर्थंकर नामकर्मकी प्रकृत्ति बांधे। और इन पूर्वोक्त कामोसें विपरीत करे अर्थात् बहुत कपटी होवे, कूम्रा, तोला, मान, मापा करके परको ठगे, परड्रोही, हिंसा, जूठ, चौरी, मैथुन, परिग्रहमें तत्पर होवे, चैत्य अर्थात् जिनमंदिरादिककी विराधना करे, व्रतलेकर न्नग्न करे, तिनो गौरवमें मत्त होवे, हीनाचारी ऐसा जीव नरक गत्यादि अशुन्न नाम कर्मकी ३४ चौतीस प्रकृति बांधे, येह सतसठ ६७ प्रकृत्तिकी अपेक्षा करके बंध कथन करा, इति नामकर्म ६ संपुर्ण.

अथ गोत्रकर्म तिसके दो न्नेद. प्रथम नंच गोत्र, विशिष्ट जाती, क्षत्रिय कास्यापादिक न-

नामकर्म ८० जिस कर्मके उदयसें जीवका स्वर मार्जार, ऊंट सरीखा होवे, सो दुःस्वर नामकर्म ८१ जिस कर्मके उदयसें जीवका वचन अच्छाभी होवे, तोभी लोक न माने सो अनादेय नामकर्म ८२ जिस कर्मके उदयसें जीवका अपयश अकीर्त्ति होवे, सो अपयश कीर्त्ति नामकर्म, ८३ इति नामकर्म. ६.

अथ नामकर्म बंध हेतु लिखते है ॥ देव गत्यादि तीस ३० शुभ नामकर्मकी प्रकृतिका बंधक कौनहोवे, सो लिखते है. सरल कपट रहित होवे जैसी मनमें होवे तैसेही कायकी प्रवृत्ति होवे. किसीकोंभी अधिक न्युन तोला, मापा करके न ठगे, परवंचन बुद्धि रहित होवे, ऋद्धिगारव, रसगारव, सातागारव, करके रहित होवे, पाप करता डरे परोपकारी सर्व जन प्रिय क्षमा

दि गुणयुक्त ऐसा जीव शुभ नामकर्म बांधे तथा अप्रमत्त यतिपणे चारित्रियो आहारकद्विक बांधे, १ और अरिहंतादि वीश स्थानकको सेवता हुआ तीर्थंकर नामकर्मकी प्रकृत्ति बांधे । और इन पूर्वोक्त कामोसें विपरीत करे अर्थात् बहुत कपटी होवे, कूडा, तोला, मान, मापा करके परको ठगे, परद्रोही, हिंसा, जूठ, चौरी, मैथुन, परिग्रहमें तत्पर होवे, चैत्य अर्थात् जिनमंदिरादिककी विराधना करे, व्रतलेकर भग्न करे, तीनो गौरवमें मत्त होवे, हीनाचारी ऐसा जीव नरक गत्यादि अशुभ नाम कर्मकी ३४ चौतीस प्रकृति बांधे, येह सतसठ ६७ प्रकृत्तिकी अपेक्षा करके बंध कथन करा, इति नामकर्म ६ संपुर्ण.

अथ गोत्रकर्म तिसके दो भेद. प्रथम उंच गोत्र, विशिष्ट जाती, क्षत्रिय काश्यपादिक उ-

आदी कुल उत्तम बल विशिष्ट रुप ऐस्वर्य तपो गुण विद्यागुण सहित होवे, सो उंच्चगोत्र १ तथा भिक्षाचरादिक कुल जाती आदीक लहे सो नीचगोत्र २ अथ उंच्चगोत्रके बंध हेतु ज्ञान, दर्शन, चारित्रादीक गुण जिसमें जितना जाने, तिसमे तितना प्रकाशकर गुण बोले, और अवगुण देख के निंदे नही, तिसका नाम गुण प्रेक्षीहै, गुणप्रेक्षी होवे, जातिमद १ कुलमद २ बलमद ३ रुपमद ४ सूत्रमद ५ ऐश्वर्यमद ६ लाभमद ७ तपोमद ८ ये आठ मदकी संपदा होवे तोभी मद न करे, सूत्र सिद्धांत तिसके अर्थके पढने पढानेकी जिस कों रुचि होवे, निराहंकारसें सुबुद्धि पुरुषकों शास्त्र समझावे, इत्यादि परहित करनेवाला जीव उंच्च गोत्र बांधे. तीर्थंकर सिद्ध प्रवचन संघादिकका अंतरंगसें भक्तीवाला जीव उंच्चगोत्र बांधे, इन पू.

वोंक्त गुणोसें विपरीत गुणवाला अर्थात् मत्सरी १ जात्यादि आठ मद सहित अहंकारके उदयसें किसीको पढावें नही, सिद्ध प्रवचन अरिहंत चैत्यादिकको निंदा करे, भक्ती न होवे, सो जीव हीन जाती नीच गोत्र बांधे ॥ इति गोत्रकर्म ७.

अथ आठमा अंतराय कर्मका स्वरूप लिखतेहै, तिसके पांच भेद है. जिस कर्मके उदयसें जीव शुद्ध वस्तु आहारादिकके हूएभी दान देंनेकी इछाभी करे, परंतु दे नही सके, सो दानांतराय कर्म १ जिस कर्मके उदयसें देनेवालेके हूएभी इष्ट वस्तु याचनेसेंभी न पावें. व्यापारादिमें चतुरभी होवे तोभी नफा न मिले, सो लाभांतराय कर्म २ जिस कर्मके उदयसें एक वार भोगने योग्य फूलमाला मोदकादिकके हूएभी भोग न कर सके, सो भोगांतराय कर्म ३ जिस कर्मके

उदयसें जो वस्तु बहुत वार भोगनेमें आवे, स्त्री आभरण वस्त्रादि तिनके हूएभी वारंवार भोग न कर सके, सो उपभोगांतराय कर्म ४ जिस कर्म के उदयसें मिथ्या मतकी क्रिया न कर सके, सो बालवीर्यांतराय कर्म १ जिसके उदयसें सम्यगदृष्टी, देश वृत्ति धर्मादि क्रिया न कर सके, सो बाल पंडित वीर्यांतराय कर्म, जिसके उदयसें सम्यग् दृष्टी साधु मोक्ष मार्गकी संपूर्ण क्रिया न कर सके सो पंडित वीर्यांतराय कर्म. अथ अंतराय कर्मके बंध हेतु लिखतेहे. श्री जीन प्रतिमाकी पुजाका निषेध करे, उत्सूत्रकी प्ररूपणा करे, अन्य जीवां-कों कुमार्गमें प्रवर्त्तावे, हिंसादिक आगारह पाप सेवनेमें तत्पर होवे, तथा अन्य जीवांकों दान ला भादिकका अंतराय करे, सो जीव अंतराय कर्म बांधे. इति अंतराय कर्म ८.

इस तरें आठ कर्मकी एकसो अमृतालीस १४८ कर्म प्रकृतिके उदयसें जीवोंके शरीरादिककी विचित्र रचना होतीहै, जैसें आहारकी खाने से शरीरमें जैसें जैस रंग और प्रमाण संयुक्त हाड, नशा, जाल, आंखके पडदे मस्तकके विचित्र अवयवपणें तिस आहारका रस परिणमता है, यह सर्व कर्मोंके उदयसें शरीरकी सामर्थ्यसें होता है, परंतु यहां ईश्वर नही कुछभी कर्त्ताहै तैसेंही काल १ स्वभाव २ नियति ३ कर्म ४ उद्यम ५ इन पांचो कारणोंसें जगतकी विचित्र रचना हो रहीहै. जेकर ईश्वर वादी लोक इन पुर्वोक्त पांचो के समवायको नाम ईश्वर कहते होवे तब तो हमभी ऐसे ईश्वरकों कर्त्ता मानतेहै. इसके सिवाय अन्य कोइ कर्त्ता नहीहै, जेकर कोइ कहे जैनीयोंने स्वकपोल कल्पनासें कर्मोंके भेद बना र-

खेहै. यह कहना महा मिथ्याहै, क्योंकि कार्यानु मानसें जो जैनीयोंने कर्मके ज्ञेद मानेहे वे सर्व सिद्ध होतेहै, और पूर्वोक्त सर्व कर्मके ज्ञेद सर्वज्ञ वीतरागने प्रत्यक्ष केवल ज्ञानसें देखेहै इन कर्मोंके सिवाय जगतकी विचित्र रचना कदापि नही सिद्ध होवेगी, इस वास्ते सुज्ञ लोकोकों अरिहंत प्रणीत मत अंगीकार करना उचितहै, और ईश्वर वीतराग सर्वज्ञ किसी प्रमाणसेंजी जगतका कर्त्ता सिद्ध नही होताहै, जिसका स्वरुप ऊपर लिख आये है.

प्र. १५५—जैन मतके ग्रंथ श्री महावीर जीस लेके श्री देवर्द्धिगणिक्षमाश्रमण तक कंठाग्र रहेते हे क्योंकर माने जावे, और श्वेतांबरमत मुख्य का हे और दिगंबर मत पीछेसें निकला, इस कथनसें क्या प्रमाण है?

उ.—जैन मतके आचार्य सर्व मतोंके आ-चार्योंसें अधिक बुद्धिमान थे, और दिगंबराचार्यों सें श्वेतांबर मतके आचार्य अधिक बुद्धिमान् आत्मज्ञानी थे अर्थात् बहुत कालतक एकाग्र ज्ञान रखनेमें शक्तिमान थे, क्योंकि दिगंबर मतके तीन पुस्तक धवल ७०००० श्लोक प्रमाण १ जयधवल ६०००० श्लोक प्रमाण १ महाधवल ४०००० श्लोक प्रमाण ३ श्री वीरात् ६८३ वर्षे ज्यैष्ठशुद ५ के दिन भूतबलि १ पुष्पदंतनामे दो साधुयोंनें लिखे थे, और श्वेतांबर मतके पुस्तक गिणतीमें और स्वरूपमें अलग अलग एक कोटी १०००००० पांचसो आचार्योंने मिलके और हजारों सामान्य साधुयोंने श्री विरात् ९८० वर्षे वल्लभी नगरीमें लिखे थे, और बौद्धमतके पुस्तकर्त्ता श्री विरात् थोडेसें वर्षों पीछेही लिखे गयेथे, जिनोंकी बुद्धि

अल्प थी तिनोनें अपने मतके पुस्तक जलदीसें लिख लीने, और जीवोकी महा प्रौढ धारणा करनेकी शक्तिवाली बुद्धिथी तिनोंने पीछेसें लिखे. यह अनुमानसें सिद्ध है, और दिगंबर मतमें श्री महावीरके गणधरादि शिष्योसें लेके ५७५ वर्ष तकके काल लगे हुए हजारों आचार्योंमेसें किसी आचार्यका रचा हुआ कोइ पुस्तक वा किसी पुस्तकका स्थल नही है इस वास्ते दिगंबर मत पीछेसें उत्पन्न हुआ है.

प्र. १५६—देवर्द्धिगणिक्षमाश्रमणनें जो ज्ञान पुस्तकोंमें लिखाहै, सो आचार्योंकी अविछिन्न परंपरायसें चला आया सो लिखा है, परं स्वकपोल कल्पित नही लिखा, इसमें क्या प्रमाण है. जिससें जैनमतका ज्ञान सत्य माना जावे.

उ.—जनरल कनिंनहाम साहिब तथा डा-

क्तर हॉरनल तथा डाक्तर बूलर प्रमुखोंनें मथुरा नगरीमेंसें पुरानी श्री महावीरस्वामीकी प्रतिमाकी पलांठी ऊपरसें तथा कितनेक पुराने स्तंजो ऊपरसें जो जूने जैनमत संबंधी लेख अपनी स्वच्छबुद्धिके प्रन्नावसें वांचके प्रगट करे है, और अंग्रेजी पुस्तकोंमें छापके प्रसिद्ध करेहै तिन जूने लेखोंसें निसंदेह सिद्ध होताहै कि, श्रीमहावीरजीसें लेके श्री देवर्द्धिगणिक्षमाश्रमण तक जैन श्वेतांबर मतके आचार्य कंठाग्र ज्ञान रखनेमें बहुत उद्यमी और आत्मज्ञानी थे, इस वास्ते हम जैन मतवाले पूर्वोक्त यूरोपीयन विद्धानोका बहुत उपकार मानते है, और मुंबइ समाचार पत्रवाला जी तिन लेखोंकों बांचके अपने संवत १९४४ के वर्षाके चार मासके एक प्रतिदिन प्रगट होते पत्रमें लिखताहै कि, जैनमतका कल्पसूत्र कितनेक

लोक कल्पित मानते थे, परंतु इन लेखोंसें जैन मतका कल्पसूत्र सच्चा सिद्ध होता है.

प्र. १५७—वे लेख कौनसेंहै, जिनका जिकर आप ऊपरले प्रश्नोत्तरमें लिख आये है, और तिन लेखोंसें तुमारा पूर्वोक्त कथन क्योंकर सिद्ध होता है !

उ.—वे लेख जैसें डाक्तर बूलर साहिबने सुधारके लिखे है और जैसें हमकों गुजराती भाषांतरमें भाषांतर करानें दीयेहै तैसेंही लिखतेहै, येह पूर्वोक्त लेख सर ए. कनिंगहामके आर्किऑ-लोजिकल(प्राचीन कालकी रही हुइ वस्तुयां संबंधी) रिपोर्टका पुस्तक ० आठमेमें चित्र १३-१४ तेरमे चौदमें तक प्रगट करे हुएमथुराके शिला लेख तिनमें केवल जैन साधुयोंका संप्रदाय आ-चार्योंकी पंक्तियां तथा शाखायां लिखीहुइहै, के-

वल इतनाही नही लिखा हुआहै, किंतु कल्पसु-
त्रमें जे नवगण (गछ) तथा कुल तथा शाखायों
कहीहै, सोन्नी लिखी हुइहै, इन लेखोंमें जो सं-
वत् लिखा हुआ है, सो हिंडुस्थान और सीथीया
देशके बीचके राजा कनिश्क १ हविश्क २ और
वासुदेव ३ इनके समयके संवत् लिखे हुएहै और
अब तक इन संवतोकी शरूआत निश्चित नही
हुइहै, तोन्नी यह निश्चय कह सकते है कि येह
हिंडुस्थान और सीथीया देशके राजायोंका राज्य
इसवीसनके प्रथम सैकेके अंतसें और दूसरे सैके
के पहिले पौणेन्नागसें कम नही ठरा सक्तेहै, क्यों
कि कनिश्क सन इशवीसनके ७८ वा ७९ में व
र्षमें गद्दी ऊपर बैठा सिद्ध हुआहै, और कितनेक
लेखोंमे इन राजायोंका संवत् नही है, सो लेख
इन राजयोंके राज्यसें पहिलेका है, ऐसें म्हाक्तर

बूलर साहिब कहता है.

प्रथम लेख सुधरा हुआ नीचे लिखा जाता है. सिद्ध। सं २०। ग्रामा १। दि १०+५। कोट्टियतो, गणतो, वाणियतो, कुलतो, वएरितो शाखातो, शिरिकातो, भत्तितो, वाचकस्य अर्य्यसंघ सिंहस्य निर्व्वर्त्त नंदत्तिलस्य...वि.–लस्य कोट्टुंविकिय, जयवालस्य, देवदासस्य, नागदिनस्य च नागदिनाये, च मातु श्राविकाये दिनाये दानं। इ। वर्द्धमान प्रतिमा. इस पाठका तरजुमा रूप अर्थ नीचे लिखते है. "फतेह" संवत् २०का उष्ण कालका मास १ पहिला मिति १५ ज्यवल (जय पाल)की माता वी...लाकि स्त्री दतिलकी (बेटी) अर्थात् (दिन्ना अथवा दत्ता) देवदास और नागदिन्न अथवा (नागदत्त) तथा नागदिना (अर्थात् नागदिन्ना अथवा नागदत्ताकी संसारिक स्त्री

शिष्यकी वक्तीस कीर्तिमान् वर्द्धमान प्रतिमा (-यह प्रतिमा) कौटिक गच्छमेंसें वाणिज नामे कुलमेंसें वैरी शाखाका सीरीका भागके आर्य संघसिंहकी निर्वरतन है, अथात् प्रतिष्टित है. ॥ इति डाक्तर बूलर ॥

अथ दुसरा लेख. नमो अरहंतानं, नमो सिद्धानं, सं. ६०+ २ ग्र. ३ दि. ५ एताये पुरवायेरारकस्य अर्यककसधं स्तस्य शिष्या आतापेको गहवरी यस्य निर्वतन चतुवस्पर्न संघस्य या दिन्ना पडिभा (भो.१) ग (१ ? वैहिका ये दत्ति ॥ इसका तरजुमा ॥ अरहंतने प्रणाम, सिद्धने प्रणाम, संवत ६२ यह तारीख हिंदुस्थान और सीथीआ बीचके राजायोंके संवत्के साथ सबंध नही रखती है, परंतु तिनोंसें पहिलेंके किसी राजेका संवत् है, क्योंकि इस लेखकी लिपी बहुत असल

है. उभ कालका तिसरा मास ३ मिति ५ कार-
रकी तारीखमें जिस समुदायमें चार वर्गका स-
मावेश होता है तिस समुदायके उपभोग वास्ते
अथवा हरेक वर्गके वास्ते एकैक हिस्सा इस प्र-
माणसें एक । या । देनेमें आयाथा । या । यह क्या
वस्तु होवेगी सो मैं नही जानता हुं, पति भोग
अथवा पति भाग इन दोनोमेंसें कौनसा शब्द
पसिंद करने योग्य है के नही, यहभी मैं नही
कह सक्ताहूं (आ) आतपीको गहवरीरारा (राधा)
कारहीस आर्य—कर्कसघस्त (आर्य—कर्क सघशी
त)का शिष्यका निर्वतन (होउके) वह्नीक (अ
थवा वह्नीता)की वर्कास, यह नाम तोमके इस
प्रमाणे अलग कर सके है, आतपीक—औगहव—
आर्य पीछेके भागमें यह प्रगट है, कि निर्वतन
याके शाथ एकही विभक्तिमें है, तिस वास्ते अन्य

दुसरे लेखोमेंभी बहुत करके ऐसीही पद्धतिके लेख लिखे हुए है, निर्वर्तयतिका अर्थ सामान्य रीते सो रजु करता है; अथवा सो पूरा करता है एसा है, तिससें बहुत करके ऐसे बतलाता है के दीनी हुइ वस्तु रजु करनेमें आइथी अर्थात् जिस आचार्यका नाम आगे आवेगा तिसकी इछासें अर्पण करनेमें आइथी, अथवा तिससें सो पुरी करनेमें आइथी. गणातो, कुलतो इत्यादि पांचमी विभक्तिके रुप वियोजक अर्थमें लेने चाहिये, स्पेइजरका संस्कृतकी वाक्य रचनाका पुस्तक ११६ । १ देखो । इति डाक्तर बूलर. अथ तीसरा लेख॥

सिद्धं महाराजस्य कनिष्कस्य राज्ये संवत्सरे नवमें ॥९॥ मासे प्रथ १ दिवसे ५ अस्यां पूर्वाये कोटियतो, गणातो, वाणायतो, कुलतो, वइरीतो, साखातो वाचकस्य नागनंदि सनिर्वरतनं ब्रह्मधू-

है. उस कालका तिसरा मास ३ मिति ५ कुप-
रकी तारीखमें जिस समुदायमें चार वर्गका स-
मावेश होता है तिस समुदायके उपभोग वास्ते
अथवा हरेक वर्गके वास्ते एकैक हिस्सा इस प्र-
माणसें एक । या । देनेमें आयाथा । या । यह क्या
वस्तु होवेगी सो मैं नही जानता हुं, पति भोग
अथवा पति भाग इन दोनोमेंसें कौनसा शब्द
पसिंद करने योग्य है के नही, यहभी मैं नही
कह सक्ताहूं (आ) आतपीको गहवरीरारा (रावा)
कारहीस आर्य—कर्कसघस्त (आर्य—कर्क सघशी
त)का शिष्यका निर्वतन (होइके) वहीक (अ
थवा वहीता)की वकीस, यह नाम तोफके इस
प्रमाणे अलग कर सके है, आतपीक—औगहव—
आर्य पीछेके भागमें यह प्रगट है, कि निर्वतन
याके शाय एकही विभक्तिमें है, तिस वास्ते अन्य

चार्य श्री माहावीरके आठमें पट्टके अधीकारीने कौटिक नाम गण (गच्छ) स्थापन कराथा, तिसके विभाग रूप चार शाखा तथा चार कुल हूए, जिसकी तीसरी शाखा वइरीथी और तीसरी वाणिज्ज नाम कुलथा यह प्रगट हैकि गण कुल तथा शाखाके नाम मथुराके लेखोंमें जो लिखेहै वे कल्पसूत्रके साथ मिलते आतेहै. कोटियकुळक कोटीयका पुराना रूपहै, परंतु इस बातकी नकल लेनी रसिकहैकि वइरी शाखा सीरीकाभत्ती (श्री काभक्ति) जो नंबर ६ के लेखमें लिखी हूइहै तिसके भागका कल्पसूत्रके जाननेमें नही था, अर्थात् जब कल्पसूत्र हुआथा तिस समयमें सो भाग नही था. यह खाली स्थान ऐसाहैकि जो मुहकी दंत कथा (परंपरायसें चला आया कथन) सें लिखी हुइ यादगीरीसें मालुम होता है. इति

तुये जहिमितस कुटुंबिनिये विकटाये श्री वर्द्धमा-
नस्य प्रतिमा कारिता सर्वे सत्वानं हित सुखाये,
यह लेख श्री महावीरकी प्रतिमा ऊपरहै ॥ इस
का तरजुमा नीचे लिखते है ॥ फतेह महाराजा
कनिष्कके राज्यमें ए नवमें वर्षमेंका १ पहिले
महीनेमें मिति ५ पांचमीमें ब्रह्माकी वेटी और
जहिमित (जहिमित्र)की स्त्री विकटा नामकीनें
सर्व जीवांके कल्याण तथा सुखके वास्ते कीर्त्ति-
मान वर्द्धमानकी प्रतिमा करवाइ है, यह प्रतिमा
कोटिक गण (गच्छ) का वाणिज कुलका और व-
इरी शाखाका आचार्य नागनंदिकी निर्वतन है,
(प्रतिष्टितहै), अब जो हम कल्पसूत्र तर्फ नजर
करीये तो तिस मूल मतके पत्रे। ८१—८५। इस.
बी. इ. वाल्युम (पुस्तक) २२ पत्रे २९२ हमको
मालम होनाहैकि सुठिय वा सुस्थित नामे आ-

चार्य श्री माहावीरके आठमें पट्टके अधीकारीने कौटिक नाम गण (गछ) स्थापन कराआ, तिसके विभाग रूप चार शाखा तथा चार कुल हूए, जिसकी तीसरी शाखा वइरीथी और तीसरी वाणिज नाम कुलथा यह प्रगट हैकि गण कुल तथा शाखाके नाम मथुरांके लेखोंमें जो लिखेहै वे कल्पसूत्रके साथ मिलते आतेहै. कोटियकुछक कोमीयका पुराना रूपहै, परंतु इस बातकी नकल लेनी रसिकहैकि वइरी शाखा सीरीकाभत्ती (स्त्री काभक्ति) जो नंवर ६ के लेखमें लिखी हूइहै तिसके भागका कल्पसूत्रके जाननेमें नही था, अर्थात् जब कल्पसूत्र हुआथा तिस समयमें सो भाग नही था. यह खाली स्थान ऐसाहैकि जो मुहकी दंत कथा (परंपरायसें चला आया कथन) सें लिखी हुइ यादगीरीसें मालुम होता है. इति

तुये जट्टिमितस कुटुंबिनिये विकटाये श्री वर्द्धमानस्य प्रतिमा कारिता सर्व्व सत्वानं हित सुखाये, यह लेख श्री महावीरको प्रतिमा ऊपरहै ॥ इस का तरजुमा नीचे लिखते हैं ॥ फतेह महाराजा कनिश्कके राज्यमें ए नवमें वर्षमेंका १ पहिले महीनेमें मिति ५ पांचमीमें ब्रह्माकी बेटी और जट्टिमित (जट्टिमित्र)की स्त्री विकटा नामकीनें सर्व जीवोंके कल्याण तथा सुखके वास्ते कीर्त्तिमान वर्द्धमानकी प्रतिमा करवाइ है, यह प्रतिमा कोटिक गण (गच्छ) का वाणिज कुलका और वइरी शाखाका आचार्य नागनंदिकी निर्वतन है, (प्रतिष्टितहै), अब जो हम कल्पसूत्र तर्फ नजर करीये तो तिस मूल प्रतके पत्रे । ८१–८४। इस. बी. इ. वाल्युम (पुस्तक) २२ पत्रे २८२ हमको मालुम होताहकि सुठिय वा सुस्थित नामसे आ-

चार्य श्री माहावीरके आठमें पट्टके अधीकारीने कौटिक नाम गण (गछ) स्थापन कराथा, तिसके विभाग रूप चार शाखा तथा चार कुल हूए, जिसकी तीसरी शाखा वइरीथी और तीसरी वाणिज नाम कुलथा यह प्रगट हैकि गण कुल तथा शाखाके नाम मथुरांके लेखोंमें जो लिखेहै वे कल्पसूत्रके साथ मिलते आतेहै. कोटियकुळक कोटीयका पुराना रूपहै, परंतु इस बातकी नकल लेनी रसिकहैकि वइरी शाखा सीरीकाभत्ती (स्त्री काभक्ति)जो नंबर ६ के लेखमें लिखी हूइहै तिसके भागका कल्पसूत्रके जाननेमें नही था, अर्थात् जब कल्पसूत्र हुआथा तिस समयमें सो भाग नही था. यह खाली स्थान ऐसाहैकि जो मुहकी दंत कथा (परंपरायसें चला आया कथन) सें लिखी हुइ यादगीरीसें मालुम होता है. इति

म्हाक्तर बूलर ॥

अथ चौथा लेख ॥ संवत्सरे ९० व......
स्य कुटुंबानि. वदानस्य वोधुय...क...गणता
...वहुकतो, कालातो, मझमातो, शाखातो...
सनिकाय न्नतिगालाए थवानि...सि.६=स ५ हे
१ दि १० + २ अस्य पूर्वा येकोटो...इस लेखकी
लीनी हुइ नकल मेरे वसमे नहीहै, इस वास्ते
इसका पूर्ण रूप सैं स्थापन नही कर शकताहूं,
परंतु पंक्तिके एक टुकडेके देखनेसें ऐसा अनुमान
हो सक्ताहैके यह अर्पण करनेका काम एक स्त्रीसें
हूआथा, ते स्त्री एक पुरुषकी वहु (कुटुंबनी) तरी-
के और दूसरेके बेटेकी वहु (वधु) तरीके, लिखने
में आइथी ॥ दूसरी पंक्तिका प्रथम सुधारे माफ
लेख नीचे लिखे मुजब होताहै ॥ कोटीयतो गण
तो (प्रश्न) वाहनकतो कुलतो मझमातो सास्त-

तो ...सनीकायेके समाजमें कोटीय गछके प्रश्न-वाहनकी मध्यम शाखामेंके कोटीय और प्रश्नवा हनकये दो नाम होवेगें, एसें मुझकों निसंदेह मालुम होताहै, क्योंकी इस लेखकी खाली जगा तिस पुर्वोक्त शब्द लिखनेसें बराबर पूरी होजाती है, और दूसरा कारण यहहैकि कल्पसूत्र एस. वी, इ. पत्र-२९३ मेमें मध्यम शाखा विषयक हकीकतभी पूर्वोक्तही सूचन करतीहै, यह कल्प सूत्र अपनेकों एसे जनाताहैकि सुस्थित और सु-प्रतिबुधका दूसरा शिष्य प्रीयग्रंथ स्थविरें मध्यमा शाखा स्थापन करीथी, हमकों इन लेखोपरसे मा लुम होताहैके प्रोफेसर जेकूका करा हुआ गण, कुल तथा शाखायोंकी संज्ञाका खुलासा खराहै, और प्रथम संज्ञा शाला बतातीहै, दूसरी आचार्यो की पंक्ति और तीजी पंक्तिमेंसें अलग हो गइ,

शाखा बतावेहै, तिससें ऐसा सिद्ध होता है, कल्प सूत्रमें गण (गच्छ) तथा कुल जणाया विना जो शाखायोंका नाम लिखताहै, सो शाखा इस क्रपरत्वे पिछले गणके तावेकी होनी चाहिये, और तिसकी उत्पत्ति तिस गच्छके एक कुलमेंसें हुइ होइ चाहिये, इस वास्ते मध्यम शाखा निसंदेह कौटिक गच्छमें समाइ हुइथी, और तिसके एक कुलमेंसे फूटी हुइ बांकी शाखाओंके जिसके बीचका चौथा कुल प्रश्नवाहनक अर्थात् पण्हवाहणय कहलाताहै, इस अनुमानकी सत्यता करनेवाला राजशेखर अपने रचे प्रबंध कोशमें जो कोश तिनोंमें विक्रम संवत् १४०५ में रचा है, तिसकी समाप्तिमें अपनी धर्म संबंधी उत्पाद त्रिपयिक लिखी हुइ हकीकतमें मालुम होताहै, सो अपनेको जनाता है कि मैं कोटिक गण प्रश्नवा

हन कुल मध्यम शाखा हर्षपुरीय गछ और मल धारी संतान, जो मलधारी नाम अभयदेवसूरि कों विरद मिला था, तिसमेंसे हु ॥ १, २, केपिछ ले शब्दोंको सुधारे करनेमें मै समर्थ नहीहुं, परं तु इतना तों कह सक्ताहुंके यह बत्तीस स्तंभोकी लिखी हुइ मालुम होती है, ५ कोटिय गण अंत नंबर २ में लिखा हुआ मालुम होताहै, जहां १, १, की २ दूसरी तर्फकी यथार्थ नकल नीचे प्र- माणे वंचातीहै, सि.६ स=५ हे१ दी १० +२ अस्य पुरवाये कोटो...सर ए. कनिंगहामकी लीनीहुइ नकलसें में पिछले शब्द सुधार सक्ताहुं, सो ऐसें अस्यापुरवाये कोट (कीय) मालुम होता है, परंतु टकारके ऊपरका स्वर स्पष्ट मालुम नही होता है, और यकारके वामे तर्फका स्थान थोडासाही मा- लुम होता है ॥ ६ एक आगेके गणका तथा ति-

सके एक कुलके नामोंका अपभ्रंसरूप नंबर १०
वाला चित्र चौदवेमें १४ मालुम होता है, जहां
यथार्थ नकल नीचे लिखे प्रमाणे वांचनेमें आती
है ॥ पंक्ति पहिली ॥ स॰४० ७ग्र २ दी २० ए-
तासय पुरवायेवरणेगतीपेतीवमीकाकुलवचकस्य
रेहेनदीस्यसासस्यसेनस्यनीवतनंसावकद ॥ पंक्ति
दूसरी ॥ पशानवघयगीह...ग..न..प्रपा...ना...
मात...॥ मैं निसंदेह कहताहुंके गती भूलसें
वांचनेमें आया है, और सो खरेखरा गणे है, जे-
कर इसतरें होवेतो वरणेभी इस सरीषाहीशब्द
चारणेके वदले भूलसें वांचनेमें आया होना चा-
हिये, क्योंकि यह गण जो कल्पसूत्र एस,बी. इ.
वाल्युम पत्रे २९१ प्रमाणे आर्य सुहस्तिका पांच
मा शिष्य श्री गुप्तसें स्थापन हूआथा, तिसका
दुसरा कुल प्रीतिधार्मिक है, (पत्रे. २९२) यह स

इजसें मालुम होता हैकि, यह नाम पेतिवमिक कुलके आचार्यका संयुक्त नाम पेतिवमिक कुल वाचकरुपमें गुप्त रहा हूआ है. जोके पेतिवमिक संभवित शब्द है, और संस्कृत प्रइति वर्मिकके दर्शक दाखल प्रीतिवर्मनका साधिक शब्द तद्धित गिणतीमें करीएतोभी में ऐसे मानताहूंके यह यथार्थ नकलकी खामी ऊपर तथा ध और व की बीचमें निजीकके मिलते हुए ऊपर विचार करतां सो बदलाके पेतिधमिक होना चाहिये, बांचणेमें दूसरी भूल यह आचार्यके नामसे जहा ह के ऊपर ए—मात है सो असली पिछले व अक्षरके पेटेंकी है, इस नामका पहिला भाग अचरुप रेहे नही था, परंतु रोह था के जो रोह गुप्त रोहसेन और अन्य शब्दोमें मालुम पडता है. दू

सरी पंक्तिमें श्रोमासाही सुधारनेका है, जो प्रपा यह अक्षर शुद्ध होवें और तिनका शब्द बनता होवे, तवतो अर्पणकरा हुआ पदार्थ एक पाणी पीनेका गाम होना चाहिये, अब में नीचे लिखे मुजब श्रोमासा बीचमें प्रक्षेप करना सूचन करताहुं ॥ स ४७ ग्र २ दि २० एतस्ये पुरवाये चार ऐगणे पेतीधमिक कुलवाचकस्य, रोहनदीस्य, सिसरय, सेनस्य, निवतनं सावक. हर.........
...प्रपा (दी) ना...इसका तरजुमा नीचे लिखते है ॥

संवत् ४७ उष्ण कालका महीना २ डुसरा मिति २० उपर लिखी मितिमें यह संसारी शिष्य ह...का.....।.....यह एक पाणी पीनेका गाम देनेमें आयाथा, यह रोहनदी (रोहनंदि)का शिष्य और चारण गणके पेतिधमिक (प्रइतिधार्मिक)कु-

लका आचार्य सेनका निवतन (है) ॥८ पिछला लेख जो ऐसीही रीतीसें कल्पसूत्रमें जनाया हुआ एक गण कुल तथा शाखाका कुछक अपभ्रंस और करे हुए नामाकों बतलाता है, सो नंबर २० चित्र १५का लेख है, तिसकी असली नकल नीचे लिखे मूजब वंचाती है, ॥ पंक्ति पहेली ॥सिद्ध ॥ नमो अरहतो महावीरस्ये देवनासस्य राज्ञा वासुदेवस्य संवतसरे। ए. + ८। वर्ष मासे . दिवसे १०+१ ए तास्या ॥ पंक्ति दूसरी॥ पूर्ववया अर्यरेहे नियातो गण पुरीधका कुल व पेत पुत्रीका ते शाखातो गणास्य अर्य-देवदत्त. वन. ॥ पंक्ति तीसरी ॥ रयय-क्शेमस्य ॥ पंक्ति ४ ॥ प्रकगीरीणे ॥पंक्ति ५ मी ॥ किहदिये प्रज. ॥ पंक्ति ६ छ्ठी ॥तस्य प्र वरकस्यधीतु वर्णस्य गत्व कस्यम. युय मित्र [१] स......दत्तगा ॥ पंक्ति ७ मी ॥ ये...वतोमह

सरी पंक्तिमें थोमासाही सुधारनेका है, जो प्रपा यह अक्षर शुद्ध होवें और तिनका शब्द बनता होवे, तबतो अर्पणकरा हुआ पदार्थ एक पाणी पीनेका गाम होना चाहिये, अब में नीचे लिखे मुजब थोमासा बीचमें प्रक्षेप करना सूचन करताहुं ॥ स ४७ ग्र २ दि १० एतस्ये पुरवाये चार णगणे पेतीधमिक कुलवाचकस्य, रोहनदीस्य, सिसरय, सेनस्य, निवतनं सावक. दर.........
...प्रपा (दी) ना...इसका तरजुमा नीचे लिखते है ॥

संवत् ४७ उष्ण कालका महीना २ दुसरा मिति १० उपर लिखी मितिमें यह संसारी शिष्य द...का.....।.....यह एक पाणी पीनेका गाम देनेमें आयाथा, यह रोहनदी (रोहनंदि)का शिष्य और चारण गणके पेतिधमिक (प्रइतिधार्मिक)कु-

लका आचार्य सेनका निवतन (है) ॥८ पिछला लेख जो ऐसीही रीतीसें कल्पसूत्रमें जनाया हुआ एक गण कुल तथा शाखाका कुछक अपभ्रंस और करे हुए नामाकों बतलाता है, सो नंबर २० चित्र १५का लेख है, तिसकी असली नकल नीचे लिखे मूजब वंचाती है, ॥ पंक्ति पहेली ॥सिद्ध ॐ नमो अरहतो महावीरस्ये देवनासस्य राज्ञा वासुदेवस्य संवतसरे। ९. + ८। वर्षे मासे . दिवसे १०+१ ए तास्या ॥ पंक्ति दूसरी॥ पूर्ववया अर्यरेहे नियातो गण पुरीधका कुल व पेत पुत्रीका ते शाखातो गणास्य अर्य—देवदत्त. वन. ॥ पंक्ति तीसरी ॥ रयय—क्शेमस्य ॥ पंक्ति ४ ॥ प्रकगीरीणे ॥पंक्ति ५ मी ॥ किहदिये प्रज. ॥ पंक्ति ६ छ्ठी ॥तस्य प्र वरकस्यधीतु वर्णस्य गत्व कस्यस. युय मित्र [१] स......दत्तगा ॥ पंक्ति ७ मी ॥ ये...वतोमह

तीसरी पंक्तिसें लेके सातमी पंक्तितांइतो सुधारा हो सके तैसा है नही, और मैं तिनके सुधारनेकी मेहनतभी नही करता हुं, क्योंके मेरे पास मुझकों मदत करे तैसी तिसकी लीनी हुइ नकल नही है, इतनीही टीका करनी वस है के छट्ठी पंक्तिमें वेटीका शब्द धितु और तिस पीछेका मयुयसो वहुलतासें (माताका) मातुयेके वदले भूलसें वांचनेमें आया है, सो लेख यह वतलाता है के यह अर्पणभी एक स्त्रीने करा था ॥ पंक्ति १। २ ॥ दूसरी तीसरीमें लिखे हुए नामवाले आचार्योंके नामों यह वक्षीस साथका संबंध अंधेरेमें रहता है पिछले वार विडुयेकी जगे दूसरा नमस्कार नमो भगवतो महावीरस्यकी प्राये रही हूइ है, प्रथम पंक्तिमें सिद्धश्रो के वदले निश्चित शब्द प्राये करके सिद्धं है, सर ए. कॉनिंगहामने आ वांचा

हुआ अक्षर मेरी समझ मूजब विराम के साथें म है, दूसरा महावीराह्स्येकी जगें महावीरस्य धरना चाहिये, इसरी पंक्तिमें पूर्व वयाके बदलें पूर्ववाये गणके बदले गणातो, काकुलवके बदले० काकुलतो०टे के बदले पेतपुत्रिकातो, और गण-स्यके वदले गणिस्य वांचनेकी जरूरीआत हरेक कोइकों प्रगट मालुम पडेगी, नामोके सबंधमें अर्य-रोहनीय अशक्य रूप है, परंतु जेकर अपने ऐसे मानीयेके हकी ऊपर इका असल खरेखरा पिछले चिन्हके पेटेका है, तद पीछे सो अर्य-रोहनीय (आर्य रोहनके तावेका) अथवा आर्य रोहनने स्थाप्या हुआ, अर्थात् संस्कृतमें आर्य रोहण होता है, इस नामका आचार्य जैन दंत कथामें अछितरे प्रसिद्ध है, कल्पसूत्र एस. बी. इ.

पत्र २०१ में लिखे मूजब सो आर्य सुहस्तिका पहिला शिष्य था, और तिसने उदेह गण स्थापन करा था. इस गणकी चार शाखा और ६ कुल हुएथे, तिसकी चौथी शाखाका नाम पूर्ण पत्रिका मुख्य करके तिसके विस्तारकी बाबतमें इस लेखके नाम पेतपुत्रिकाके साथ प्रायें मिलता आताहै, और यह पिछला नाम सुधारके तिसकों पोनपत्रिका लिखनेमें मैं शंकाभी नही करताहूं. सोइ नाम संस्कृतमें पौर्णपत्रिकाकी बराबर होवेगी, और सो व्याकरण प्रमाणे पूर्ण पत्रिका करते हूए अधिक शुद्धनाम है, इन छहों कुलोमेंसें परिहासक नामभी एक कुलहै, जो इस लेखमें छूट गए हूए नाम पुरिध-क के साथ कुछक मिलतापणा बतलाताहै, दूसरे मिलते रूपों ऊपर विचार करता हूआ मैं यह संभावित मानताहूं के,

यह पिछला रूपपरिहा. क के बदले मूलसें वांच-
नेमें आयाहै; दुसरी पंक्तिके अंतमे पुरुषका नाम
प्रायें छट्ठी विभक्तिमें होवे और देवदत्त व सुधा-
रकें देवदत्तस्य कर सक्तेहै ॥ ऐसें पुर्वोक्त सुधारे-
सें प्रथम दो पंक्तियां नीचे मुजब होतीहै ॥ १
सिद्ध (म्) नमो अरहतो महावीर(अ) स्य् (अ)
देवनासस्या- २, पुर्व्व्, (ओ) य् (ए) अयूय—र्
(ओ) ह् (अ) नियतोगण (तो) प् (अ) रि (हास
क् (अ) कुल (तो) प् (ओन्) अप् (अ) त्रिकात्
(ओ) साखातोगण (इ) स्य अर्यूय—देवदत्त (स्य)
न......इसका तरजुमा नीचे लिखे मुजब होवेगा.

"फतेह" देवतायोंका नाश करता अरहत
महावीरकों प्रणाम (यह गुणवाचक नामके ख-
रेपणेमें मेरेकों बहुत शकहै, परंतु तिसका सुधा-
रा करनेकों में असमर्थहूं) राजा वासूदेवके संव-

त्के ९८ से वर्षमें वर्षाऋतुके चौथे महीनेमें मिति ११ मीमें इस मितिमें ....परिहासक (कुल) में कापोन पत्रिका (पौर्णपत्रिका) शाखा का अरयूय–रोहने (आर्यरोहने) स्थापन करी शाला (गण) में का अरयय देवदत्त (देवदत्त) ए शालाका मुख्य गणि ॥ येह लेख एकठे देखनेसें यह सिद्ध करतेहैके मथुराके जैन साधुयोंने संवत् ५ सें ९८ अठानवें तक वा इसवीसन ८१। वा ८४ सें लेके सन इसवी १६६ वा १६७ के बीचमें जैनधर्माधिकारी हुदेवालोंने परस्पर एक संप करा था, और तिनमेंसें कितनेक गछोंमें मतानुचारीयोंमें विभाग पडाथा, और सो भाग हरेक शाखा (गण) का कितनेक तिसके अंदर भाग हूए थे. ऊपर लिखे हूए नामों वाले पुरुषोंको वाचक अथवा आचार्यका इलकाब मिलताहै, जो वृद्धि

भाणकके साथ मिलताहै और सो इलकाब (पद
वीका नाम) बहुत प्रसिद्ध रीतीसें जैनके जो यति
लोक साधु धर्म संबंधी पुस्तकों श्रावक साधुयों
कों समझने लायक गिणनेमे आतेथे तिनकों दे-
नेमें आतेथे, परंतु जो साधु गणि (आचार्य) एक
गच्छका मुखीया कहनेमें आताथा, तिसका यह
भारी इलकाब था, और हालमेंभी पिछली रीती
प्रमाणे बडे साधु मुख्य आचार्यकों देनेमें आता
है. शाखा [गणो] मेसें कोटिक गणके बहुत फांटे
है, और तिसके पेटे भाग होके दो कुल, दो शा-
खायों और एक भत्ति हुआहै, इस वास्ते तिसका
बडा लंबा इतिहास होना चाहिये, और यह क
हना अधिक नही होवेगा, क्योंकि लेखोंके पुरावे
ऊपरसें तिसकी स्थापना अपणे ईसवी सनकी
शूरुआतसें पहिले थोडेमें थोडा काल एक सैंक-

मा [सो वर्ष] में हूइथी, वाचक और गणि सरी पे इलकाबोंकी तथा ईसवी सन पहिले सैकेके अंतमें असलकी शालाकी हयाती बतलावेहैके तिस वखतमें जैन पंथकी वहुत मुदत हुआं चलती आत्मज्ञानीकी हयाती हो चुकीथी [कितनेही कालमें कंगाग्र ज्ञानवान् मुनियोकि परंपरायसें संतति चली आतीथी] तिस संततिमें साधु लोक तिस वखतमें अपने पंथकी वृद्धिकी वहुत हुस्यारीसें प्रवृत्ति राखतेथे, और तिस कालसें पहिलेभी राखी होनी चाहिये, जेकर तिनोमें वाचक थे तो यहभी संभवितहैके कितनेक पुस्तक वंचाने सीखाने वास्ते वरावर रीतीसें मुकरर करा हूआ संप्रदाय तथा धर्म संबंधी शास्त्रभी था. कल्पसूत्रके साथ मिलनेसें येह लेखों श्वेतांवरमतकी दंत कथाका एक वडा भागकों [श्वेतांबरके

शास्त्रके बमे न्नागकों] बनावटके शक [कलंक] सें मुक्त करते है, [श्वेतांबर शास्त्रके बहुत हिस्से बनावटके नही है किंतु असली सच्चे है] और स्थिविरावलिकें जिस न्नाग ऊपर हालमे हम अख्तियार चला शक्ते है, सो न्नाग निःकेवल जैनके श्वेतांबर शाखाकी वृद्धिका न्नरोंसा राखने लायक हवाल तिसमें हयाती साबीत कर देता है, और तिस न्नागमेंन्नी ऐसीयां अकस्मात् न्नूले तथा खामीयों मालुम होती है, के जैसे कोइ कंगाग्रकी दंत कथाकों हालमें लिखता हुआबीचमें-रही जाए ऐसें हम धार सक्तेहै, यह परिणाम (आशय) प्रोफेसर जकोबी और मेरी माफक जे सखस तकरार करता होवे के जैन दंत कथा (जैन श्वेतांबरके लिखे हुए शास्त्रोंकी बात) टीकाके असाधारण कायदे हेठ नही रखनी चाहि

ये, अर्थात् तिसमेके इतिहास संबंधी कथनो अ-
थवा दूसरे पंथोकी दंतकथामेंसें मिली हुइ दूसरी
स्वतंत्र खबरोंसें पुष्टी मिलती होवे तो, सो मा
ननी चाहिये; और जो एसी पुष्टी न होवे तो
जैनमतकी कहनी (स्यादवा) तिसकों लगानी
चाहिये, तैसें सखसोंकों उत्तेजन देनेवाला है. क-
ल्पसूत्रकी साथ मथुरांके शिला लेखोंका जो मि
लतापणा है, सो उसरी यह वातभी तव लाता
है कि इस मथुरां शहरके जैनलोक श्वेतांवरी थे॥
इति माक्तर वूलर ॥ अव हम (इस ग्रंथके कर्त्ता)
भी इन लेखोंकों वांचके जो कुछ समझे है सोउ
लिख दिखलाते है ॥ जैनमतके वाचक १ दिवा-
कर २ क्षमाश्रमण३ यह तीनो पदके नाम जो
आचार्य इग्यारे अंग, और पूर्वोके पढे हुएथे ति
नकों देनेमें आतेथे, जैसें उमास्वातिवाचक १

सिद्धसेन दिवाकर २ देवर्द्धिगणिक्षमाश्रमण ३;
इस वास्ते मथुरांके शिला लेखोंमें जो वाचकके
नामसें आचार्य लिखे है, वे सर्व इग्यारे अंग और
पूर्वोंके कंठाग्र ज्ञानवाले थे, और सुस्थित नामे
आचार्यका नाम बुलरसाहिबने लिखाहै सो सू-
स्थित नामे आचार्य विरात् तीसरे सैकेमेंहुआ है,
तिससें कोटिक गणकी स्थापना हुइ है, और
जो वइरी शाखा लिखी है सो विरात् ५८५ वर्षे
स्वर्ग गये, वज्रस्वामीसें स्थापन हुइथी वइरी शा
खाके विना जो कुल और शाखाके आचार्य स्था-
पनेवालें सुस्थित आचार्यके लगभग कालमें हुए
संभव होतेहै, इन लेखोंकों देखके हम अपने भाइ
दिगंबरोंसें यह विनती करते है कि जरा मतका
पक्षपात छोडके इन लेखोंकी तर्फ जरा ख्याल
करोके इन लेखोंमें लीखे हुए गण, कुल शाखाके

नाम श्वेतांबरोंके कल्पसूत्रके साथ मिलते है, वा तुमोरभी किसी पुस्तकके साथ मिलते है, मेरी समझमें तो तुमारे किसी पुस्तकमें ऐसे गण, कुल, शाखाके नाम नही है, जे मथुरांके शिला लेखोंके साथ मिलते आवे. इससे यह निसंदेह सिद्ध होता है, कि मथुरांके शिला लेखोंमें सर्व गण, कुल शाखा, आचार्योंके नाम श्वेतांबरोंके है, तो फेर तुमारे देवसेनाचार्यने जो दर्शन सार ग्रंथमें यह गाथा लिखीहैकि छत्तीस वाससए, विक्कम निवस्स, मरण पत्तस्स, सोरठे वल्लहीए, सेवड संघस मुपन्नो ॥ १ ॥

अर्थ. विक्रमादित्य राजाके मरा एकसौ छत्तीस १३६ वर्ष पीछे सोरठ देशकी वल्लभी नगरीमें श्वेतपट (श्वेतांबर संघ उत्पन्न हुआ) यह कहनां क्योंकर सत्य होवेगा, इस वास्ते इन शिला

लेखोंसें तुमारा मत पीछेसें निकला सिद्ध होता है, इस वास्ते श्री विरात् ६०७ वर्ष पिछे दिगंबर मतोत्पत्ति, इस वाक्यसें श्वेतांबरोका कथन सत्य मालुम होता है, और अधुनक मतवाले लुंपक, ढुंढक, तेरापंथी वगेरे मतोंवालोसेंभी हम मित्र-तासें विनती करते हैके तुमभी जरा इन लेखोंको वांचके विचार करोके श्री महावीरजीकी प्रतिमा के ऊपर जो राजा वासुदेवका संवत् ए० अठा-नवेका लिखा हुआहै, और एक श्री महावीरजी की प्रतिमाको पलांठी ऊपर राजा विक्रमसें प-हिले हो गए किसी राजेका संवत् विसका लिखा हुआहै, और इन प्रतिमाके वनवनेवाले श्रावक श्राविकांके नाम लिखे हुएहै और दश पूर्वधारी आचार्योंके समयके आचार्योंके नाम लखे हुएहै ॥ जिनोंने इन प्रतिमाकी प्रतिष्टा करी है; तो फेर

नाम श्वेतांवरोंके कल्पसूत्रके साथ मिलते है, वा तुमारेभी किसी पुस्तकके साथ मिलते है, मेरी समझमें तो तुमारे किसी पुस्तकमें ऐसे गण, कुल, शाखाके नाम नही है, जे मथुरांके शिला लेखोंके साथ मिलते आवे. इससे यह निसंदेह सिद्ध होता है, कि मथुरांके शिला लेखोंमें सर्व गण, कुल शाखा, आचार्योंके नाम श्वेतांवरोंके है, तो फेर तुमारे देवनसेनाचार्यने जो दर्शन सार ग्रंथमें यह गाथा लिखीहैकि छत्तीस वाससए, विक्कम निवस्स, मरण पत्तस्स, सोरठे वल्लहीए, सेवम संघस्स मुपन्नो ॥ १ ॥

अर्थ. विक्रमादित्य राजाके मरा एकसो छ त्तीस १३६ वर्ष पीछे सोरठ देशकी वल्लभी नग- रीमें श्वेतपट (श्वेतांवर संघ उत्पन्न हुआ) यह कहनां क्योंकर सत्य होवेगा, इस वास्ते इन शिला

लेखोंसें तुमारा मत पीछेसें निकला सिद्ध होता है, इस वास्ते श्री विरात् ६०९ वर्ष पिछे दिगंवर मतोत्पत्ति, इस वाक्यसें श्वेतांवरोका कथन सत्य मालुम होता है, और अधुनक मतवाले लुंपक, ढुंढक, तेरापंथी वगेरे मतोंवालोंसेंभी हम मित्रतासें विनती करते हैके तुमभी जरा इन लेखोंको बांचके विचार करोके श्री महावीरजीकी प्रतिमा के ऊपर जो राजा वासुदेवका संवत् ९८ अगानवेका लिखा हुआहै, और एक श्री महावीरजी की प्रतिमाको पलांठी ऊपर राजा विक्रमसें पहिले हो गए किसी राजेका संवत् विसका लिखा हुआहै, और इन प्रतिमाके वनवनेवाले श्रावक श्राविकांके नाम लिखे हुएहै और दश पूर्वधारी आचार्योंके समयके आचार्योंके नाम लखे हुएहै ॥ जिनोंने इन प्रतिमाकी प्रतिष्टा करी है; तो फेर

तुम लोक शास्त्रांके अर्थ तो जिनप्रतिमाके अधिकारमें स्वकल्पनासें जूठे करके जिन प्रतिमाकी उत्थापना करतेहो, परंतु यह शिला लेख तो तुमारेसें कदापि जूठे नही कहे जाएंगे, क्योंके इन शिला लेखोंकों सर्व यूरोपीयन अंग्रेज सर्व विद्वानोने सत्य करके मानेहै, इस वास्ते मानुष्य जन्म फेर पाना दुर्लभहै, और थोमे दिनकी जिंदगीहै, इस वास्ते पक्षपात गेमके तुम सच्चा धर्म तप गच्छादि गच्छोंका मानो, और स्वकपोल कल्पित बाविस २२ टोलेका पंथ और तेरापंथीयोंका मत गेम देवो, यह हित शिक्षा मैं आपकों अपने प्रिय बंधव मानके लिखी है. ॥

प्र. १५८—हमारे सुननेमें ऐसा आया है कि जैनमतमें जो प्रमाण अंगुल (भरत चक्रीका अंगुल) सो उत्सेधांगुल (महावीरस्वामीका आधा-

अंगुल)सें चारसो गुणा अधिक है, इस वास्ते उत्सेधांगुलके योजनसें प्रमाणांगुलका योजन चारसौ गुणा अधिक है, ऐसे प्रमाण योजनसें ऋषभदेवकी विनीता नगरी लांबी बारां योजन और चौमी नव योजन प्रमाणथी जब इन योजनाके उत्सेधांगुलके प्रमाणसें कोस करीये, तब १४४०० चौद हजार चारसौ कोस विनीता चौमी और १९२०० कोस लंबी सिद्ध होती है, जब एक नगरी विनिता इतनी बमी सिद्ध हूइ, तबतो अमेरिका, अफरीका, रूस, चीन, हिंदुस्तान प्रमुख सर्व देशोंमें एकही नगरी हूइ, और कितनेक तो चारसौ गुणेसेंनी संतोष नही पातेहै, तो एक हजार गुणा उत्सेध योजनसें प्रमाण योजन मानते है, तब तो विनाता ३६००० हजार कोस चौमी और ४८००० हजार कोस लांबी सिद्ध होती है, इस

कालके लोकतो इस कथनको एक मोटी गप्प स
मान समझेंगे,इस वास्ते आपसें यह प्रश्न पूछते
है कि जैनमतके शास्त्र मुजब आप कितना बडा
प्रमाण अंगुलका योजन मानतेहो ?

उ. जैनमतके शास्त्र प्रमाणे तो विनीता
नगरी और द्वारकाका मापा और सर्व द्वीप, स-
मुद्र, नरक, विमान. पर्वत प्रमुखका मापा जिस
प्रमाण योजनसें कहाहै सो प्रमाण योजन उ-
त्सेधांगुलके योजनसें दश गुणा और श्रीमहावी
रस्वामीके हाथ प्रमाणसें दो हजार धनुषके एक
कोस समान (श्री महावीरस्वामीके मापेसें सवा
योजन) पांच कोस जो क्षेत्र होवे सो प्रमाण यो
जन एक होता है, ऐसे प्रमाण योजनसें पूर्वोक्त
विनीता जंबू द्वीपादिका मापा है, इस हिसाबसें
विनीता द्वारकादि नगरीयां श्री महावीरके प्रमा

एके कोस चौमीयां ४५ पैतालीस कोस और लंबीया साठकोस प्रमाण सिद्ध होतीयां है इतनी बमी नगरीको कोइन्नी बुद्धिमान् गप्प नही कह सकताहै, क्योंकि पीछले कालमें कनोज नगरीमें ३०००० तीस हजार डुकानो तो पान वेचनेवालों की थी, ऐसे इतिहास लिखनेवाले लिखतेहै तो, सो नगर बहुत बमा होनां चाहिए, अन्यन्नी इस कालमें पैकिन लंदन प्रमुख बमेबमे नगर सुने जातेहै सो चौथे तीसरे आरेके नगर इनसें अधिक बमे होवे तो क्या आश्चर्य है, और जो चारसौ गुणा तथा एक हजार गुणा नत्सेधांगुलके योजनसें प्रमाणांगुलका योजन मानतेहै, वे शास्त्रके मतसें नहीहै, जो श्री अनुयोगद्वार सूत्रके मूल पाठमें ऐसा पाठ है, नत्सेधांगुलसें सहस्स गुणं परमाणंगुलं नवति इस पाठका यह अनि-

प्रायहै, कि एक प्रमाणांगुल उत्सेधांगुलसें चारसौ गुणीतो लांवी है, और अढाइ उत्सेधांगुल प्रमाण चौडी है, और एक उत्सेधांगुल प्रमाण जाडी [मोटी] है, इस प्रमाण अंगुलके जब उत्सेधां गुल प्रमाण सूची करीये तब प्रमाणांगुलके तीन टुकडे करीये, तब एक टुकडा एक उत्सेधांगुल प्रमाण चौडा और एक उत्सेधांगुल प्रमाण जाडा (मोटा) और चारसौ उत्सेधांगुलका लंबा होता है, ऐसाही दूसरा टुकडा होता है, और तीसरा टुकडा एक उत्सेधांगुल प्रमाण चौडा और इत-नाही जाडा (मोटा) और दोसो उत्सेधांगुल प्र-माण लंबा होता है, अब इन तीनों टुकडोंको क्रमसें जोडीये तब एक उत्सेधांगुल प्रमाण चौडी और एक उत्सेधांगुल प्रमाण जाडी (मोटी) और एक हजार उत्सेधांगुल प्रमाण लांबी सूची होती

है, अनुयोगद्वारमें जो मूल पाठ हजार गुणी कहता है, सो इस पुर्वोक्त सूचीकी अपेक्षासें कहता है, परंतु प्रमाणांगुलका स्वरूप नही है, प्रमाणां जैसी ऊपर चारसौ गुणी लिख आएहै तैसी है, इस चारसौ गुणी प्रमाणांगुलसें ऋषभदेव भरतकी अवगाहनादिका मापा है, परंतु विनीता, द्वारकां, पृथ्वी, पर्वत, विमान, द्वीप, सागरोंका मापा हजार गुणी वा चारसौ गुणी अंगुलमें नही है, इन नगरी द्वीपादिकका मापा तो प्रमाणांगुल अढाइ उत्सेधांगुल प्रमाण चौडी है तिससें मापा करा है, यह जैनमतके सिद्धांतकारोंका मत है, परंतु चारसौ तथा एक हजार गुण उत्सेधांगुल सें विनीता, द्वारकां, द्वीप, सागर, विमान, पर्वतोंका मापा करनां यह जैन सिद्धांतका मत नही है, यह कथन जिनदास गणि क्षमाश्रमणजी श्री

अनुयोगद्वारकी चूर्णिमें लिखते है, तथा च चूर्णिका पाठः जेअपमाणंगुलाउपुढवायपमाणाआणिज्जंति तेअपमाणंगुलविरकंभेणआणेयव्वानपुण सूइ अंगुलेणंतिएयंचविचनगुणएणाकेइएअस्सजंपुणमिणंतिअन्नेउसूइअंगुलमाणेणानखुत्तमणियंतं ॥ इस पाठकी भाषा ॥ जिस प्रमाणांगुलसें पृथ्वी, पर्वत द्वीपादिका प्रमाण करीये है सो प्रमाणांगुलका जो विरकंभ (चौमापणा) अढाइ उत्सेध आंगुल प्रमाणसें करनां, परंतु सूचो आंगुलसें पृथ्वी आदिकका प्रमाण न करनां, और कितनेक ऐसें कहते हे कि एक प्रमाणांगुलमें एक हजार उत्सेधांगुल मावे, ऐसें प्रमाणांगुलसें मापनां, और अन्य आचार्य ऐसें कहता है कि उत्सेधांगुलसें चारसौ गुणी ऐसें प्रमाणांगुलसें पृथ्वी आदिकका मापा करनां, अब चूर्णिकार कहता है कि ये दोनो मत

हजार गुणी अंगुल और चारसौ गुणी अंगुलके मापेसें पृथ्वी आदिकके मापनेके मत, सूत्र प्रमाणित नही (सिद्धांत सम्मत नही)है, और अंगुल सत्तरी प्रकरणके कर्त्ता श्री मुनिचंद्र सूरिजी(जो के विक्रम संवत् ११६१ मे विद्यमान थे)इन पूर्वोक्त दोनो मतोंको दूषण देतेहै तथाच तत्पाठः ॥ किंचमेयसुदोसुविमगहंगकलिंगमाइआ सव्वेपायेणारियदेसाएगंमियजोयणेहुंति ॥ १६ ॥ गाथा इसकी व्याख्या ॥ जेकर ऐसें मानीयेंके एक प्रमाण अंगुलमें एक सहस्र उत्सेधांगुल अथवा चारसौ उत्सेधांगुल मावे, ऐसे योजनोंसें पृथ्वी आदिक मापीए, तबतो प्रायें मगधदेश, अंगदेश, कलिंगदेशादि सर्व आर्य देश,एकही योजनमें मा जावेंगे, इस वास्ते दशगुणे उत्सेधांगुलके विस्कंभपणेसें मापना सत्य है, इस चर्चासें अधिक

पांचसौ धनुषकी अवगाहना वाले लोक इस छो टेसें प्रमाणवाली नगरीमें क्योंकर मावेंगे, और द्वारकांके करोडों घर कैसें मावेंगे, और चक्रवर्त्ती के छानवे ए६ करोड गाम इस छोटेसे भरतखंडमें क्योंकर वसेंगे, इनके उत्तर अंगुलसत्तरीमें वहूत अछीतरेंसें दीने है, सो अंगुलसत्तरी वांचके देखनां; चिंता पूर्वोक्त नही करनी, यह मेरा इस प्रश्नोत्तरका लेख बुद्धिमानोंकों तो संतोषकारक होवेगा, और असत् रूढीके माननेवालोंकों अचंभा जनक होवेगा, इसी तरे अन्यभी जैनमतकी कितनीक वाते असतरूढीसें शास्त्रसें जो विरुद्ध है, सो मान रक्खी है, तिनकां स्वरूप इहां नही लिखते है.

प्र. १५ए—गुरु कितने प्रकारके किस किस कीउपमा समान और रूप १ उपदेश २ क्रिया

३ कैसी और कैसेके पासों धर्मोपदेश नही सुननां, और किस पासों सुननां चाहिये.

उ.—इस प्रश्नका उत्तर संपूर्ण नीचे मुजब समझ लेनां.

एक गुरु चास (नीलचास) पक्षी समान है १

जैसें चाष पक्षीमें रूप है, पांच वर्ण सुंदर होनेसें और शकुनमेंभी देखने लायक है ? परंतु उपदेश (वचन) सुंदर नही है, २ कीडे आदिके खानेसें क्रिया (चाल) अछी नही है ३ तैसेही कितनेक गुरु नामधारीयोमें रूप (वेष) तो सुविहित साधुका है १ परं अशुद्ध (उत्सूत्र) प्ररूपनेसें उपदेश शुद्ध नही २ और क्रिया मूलोत्तर गुण रूप नही

है, प्रमादसें निरवद्याहारादि नही गवेषण करतेहै ३ यडुक्तं॥ दगपाणपुप्फफलंअणेसणिज्जं गिहत्थकिच्चाइंअजयापडिसेवतिजइवेसविडंबगानरं॥ १ ॥ इत्यादि॥ अस्यार्थः ॥ सचित पाणी, फूल, फल, अनेषणीय आहार ग्रहस्थके कर्त्तव्य जिवहिंसा १ असत्य २ चोरी ३ मैथुन ४ परिग्रह ५ रात्रिभोजन स्नानादि असंयमी प्रति सेवतेहै, वेभी गृहस्थ तुल्यही है, परंतु यतिके वेषकी विटंवना करनेसें इस वातसें अधिक है, एसे तो संप्रति कालमें दुःखम आरेके प्रभावसें बहूत है, परंतु तिनके नाम नही लिखते है, अतीत कालमेंतो ऐसे कुलवालादिकोंके दृष्टांत जान लेने, कुलवालकमें सुविहित यतिका वेषतो था, १ परं मागधिक गणिकाके साथ मैथुन करनेमें आशक्त था, इसवास्ते अच्छी क्रिया नहीथी २ और विशाखाभंगादि म-

हा आरंभा दिकाप्रवर्त्तक होनेसें उपदेशभिशुद्धनही था, सामान्य साधु होनेसें वा उपदेशका तिसकों अधिकार नही था, ३ ऐसेही महाव्रतादि रहित १ उत्सूत्र प्ररूपक (गुरु कुलवास त्यागी) सो कदापि शुद्ध मार्ग नही प्ररूप शक्ताहै २ निकेवल यति वेषधारक है, ३ इति प्रथमो गुरु भेद स्वरुप कथनं ॥ १ ॥

दूसरा गुरु क्रौंच पक्षी समान है २

क्रौंचपक्षीमें सुंदर रूप नही है देखने योग्य वर्णादिक अभावसें १ क्रियाभी अछी नही, कीडे आदिकोके भक्षण करनेसें २ केवल उपदेश (मधुर ध्वनि रूप) है ३ ऐसेही कितनेक गुरुयोंमें रूप नही. चारित्रिये साधु समान वेषके अभाव सें १ सत क्रियाभी नही, महाव्रत रहित और

प्रमादके सेवनसें २ परंतु उपदेश शुद्ध मार्ग प्ररू पण [illegible] है ३ प्रमादसें परे और परिव्राजकके वेषधारी ऋषभ तीर्थंकरके पोते मरीच्यादिवत् अथवा पासत्थे आदिवत् क्योंकि पासत्थेमें साधु समान क्रिया तो नही है १ और प्रायें सुविहित साधु समान वेषभी नही, यदुक्तं॥ वत्थंडुपमिले हियसपाणसकजिअंडुकूलाई इत्यादि॥ अर्थः—वस्त्र डुप्रति लेखित प्रमाण रहित सदशाक पछेवडी र. खनेसें सुविहितका वेष नही २ परं शुद्ध प्ररूपक है, एक यथाछंदेको वर्जके पासत्था १ अवसन्ना २ कुशील ३ संसक्त ४ ये चारों शुद्ध प्ररुपक होस- कतेहै, परंतु दिन प्रतिदश जणोंका प्रतिबोधक नं- दिषेणसरीषे इस भांगेमें न जानने, क्योंके नं- दिषेणके श्रावकका लिंग था ॥ इति ऊसरा गुरु स्वरूप भेद ॥ २ ॥

तीसरा गुरु भ्रमर समान है. ३

भ्रमरमें सुंदर रुप नही, कृष्ण वर्ण होनेसें १ उपदेश (तिसका उदात्त मधुर स्वर) नही है २ केवल क्रियाहै उत्तम फूलोंमेंसें फूलोंकों विना डुख देनेसे तिनका परिमल पीनेसें ३ तैसेही कितनेक गुरू यतिके वेषवालेभी नहीहै १ और उपदेशक भी नही है २ परंतु क्रिया है, जैसें प्रत्येकबुद्धा दिकोंमें प्रत्येकबुद्ध, स्वयंबुद्ध तीर्थंकरादि यद्यपि साधुतो है, परंतु तीर्थगत साधुयोंके साथ प्रवचन १ लिंगसें साधार्मिक नहीहै, इस वास्ते यति वेषभी नही १ उपदेशकभी नही २ " देशनाऽनासेवकः प्रत्येकबुद्धादि रित्यागमात्" क्रियातो है, क्योंकि तिस भवसेंही मोक्ष फल होताहै ॥ इति तृतियो गुरु स्वरूप भेद ॥ ३ ॥

प्रमादके सेवनेसें २ परंतु उपदेश शुद्ध मार्ग प्ररू पण करते है ३ प्रमादसें पर्म और परिव्राजकके वेषधारी ऋषभ तीर्थंकरके पोते मरीच्यादिवत् अथवा पासत्थे आदिवत् क्योंकि पासत्थेमें साधु समान क्रिया तो नही है १ और प्रायें सुविहित साधु समान वेषभी नही, यदुक्तं॥ वत्थंडुपम्मि ले हियप्पमाणसकल्लिअंडकूलाई इत्यादि॥ अर्थः—वस्त्र डुअति लेखित प्रमाण रहित सादशक पत्थवभी र॰ खनेसें सुविहितका वेष नही २ परं शुद्ध प्ररूपक है, एक यथाछंदेकों वर्जके पासत्था १ अवसन्ना २ कुशील ३ संसक्त ४ ये चारों शुद्ध प्ररुपक होस- कतेहै, परंतु दिन प्रतिदश जणोंका प्रतिबोधक नं- दिषेणऋषिभी इस मार्गमें न जानने, क्योंके नं- दिषेणके श्रावकका लिंग था ॥ इति दुसरा गुरु स्वरूप भेद ॥ २ ॥

तीसरा गुरु भ्रमर समान है. ३

भ्रमरमें सुंदर रुप नही, कृष्ण वर्ण होनेसें १ उपदेश (तिसका उदात्त मधुर स्वर) नही है २ केवल क्रियाहै उत्तम फूलोंमेंसें फूलोंको विना दुख देनेसे तिनका परिमल पीनेसें ३ तैसेही कितनेक गुरू यतिके वेषवालेभी नहीहै १ और उपदेशक भी नही है २ परंतु क्रिया है, जैसें प्रत्येक बुद्धा दिकोंमें प्रत्येकबुद्ध, स्वयंबुद्ध तीर्थंकरादि यद्यपि साधुतो है, परंतु तीर्थगत साधुयोंके साथ प्रवचन १ लिंगसें साधर्मिक नहीहै, इस वास्ते यति वेषभी नही १ उपदेशकभी नही २ "देशनाऽना सेवकः प्रत्येकबुद्धादि रित्यागमात्" क्रियातो है, क्योंकि तिस भवसेंही मोक्ष फल होताहै ॥ इति तृतियो गुरु स्वरूप भेद ॥ ३ ॥

चोथा गुरु मोर समान है. ४

जैसें मोरमें रुपतो पंच वर्ण मनोहर १ और शब्द मधुर केकारुप है २ परं क्रिया नही है, सर्प्पादिकोंकोंभी भक्षण कर जाता है, निर्दय होनेसें ३ तैसें गुरुयों कितनेकमें वेष १ उपदेश-तो है २ परंतु सतक्रिया नही है, ३ मंग्वाचार्य-वत् ॥ इति चौथा गुरु स्वरुप भेद ॥ ४ ॥

पांचमा गुरु कोकीला समान है. ५

कोकिलामें सुंदर उपदेश (शब्द) तो है, पंचम स्वर गानेसें १ और क्रिया आंबकी मांजरादि शुचि आहारके खाने रुपहै. तथा चाहुः॥ आहारे शुचिता, स्वरे मधुरता, नीडे निरारंभता ॥ वंधौ निर्ममता, वने रसिकता, वाचालता माधवे॥ त्यक्त्वा तद्विज कोकिलं, मुनिवरं दृष्ट्वा पुनर्दाम्भिकं

वंदंते वत खंजनं, कमि नुजं चित्रा गतिः कर्म शां ॥१॥ परंतु रुप नही काकादिसेंनी हीनरुप होनेसें ३ तैसेंही कितनेक गुरुयोंमें सम्यक् क्रिया १ नपदेश २ तोहै, परंतु (साधुका वेष) किसी हेतुसें नही है, सरस्वतीके बुमाने वास्ते यति वेष त्याग कालिकाचार्य वत् ॥ इति पांचमा गुरु स्वरुप नेद ॥ ५ ॥

छठा गुरु हंस समान है. ६

हंसमे रुप प्रसिद्ध है १ क्रिया कमल नाला दि आहार करनेसें अछीहै २ परंतु हंसमें नपदेश (मधुर स्वर) पिक शुकादिवत् नही है ३ तैसेंही कितने एक गुरुयोंमें साधुकावेष १ सम्यक् क्रि-यातो है २ परंतु नपदेश नही, गुरुने नपदेशक-रनेकी आज्ञा नही दीनी है, अनधिकारी होनेसें

धन्यशालिन्नाद्दि महा ऋषियोंवत् ॥ इति छठा गुरु स्वरुप भेद ॥ ६ ॥

सातमा गुरु पोपट (तोते) समान है. ७

तोता इहां बहुविध शास्त्र सूक्त कथादि परिज्ञान प्रागल्भ्यवान् ग्रहण करनां. तोता रूप करके रमणीय है १ क्रिया आंब कदली दाडिम फलादि शुचि आहार करता है. इस वास्ते अछी है. २ उपदेश वचन मधुरादि तोतेका प्रसिद्ध है ३ तैसे कितनेक गुरु वेष १ उपदेश २ सम्यक् क्रिया. ३ तीनों करके संयुक्त है, श्रीजंबु श्रीवज्रस्वाम्यादिवत् इति सातमा गुरु स्वरुप भेद ॥ ७ ॥

आठमा गुरु काक समान है. ८

जैसे काकमें रूप सुंदर नही है १ उपदेशभी नही, कटुक शब्द बोलनेसें २ क्रियाभी अछी

नही है, रोगी, बूढे वलदादिकोंके आंखकाढलेनी चूंच रगमनी और जानवरोंका रुधिर मांस, मलादि अशुचि आहारीहोनेसें ३३ ऐसेंही कितनेक गुरुयोंमें रूप १ उपदेश २ क्रिया ३ तिनोंही नही है, अशुद्ध प्ररूपक संयम रहित पासह्ये आदी जानने, सर्व परतीर्थीकभी इसी भंगमे जानने ॥ इति आठमा गुरु स्वरूप भेद ॥ ८ ॥

इनमेसें उपदेश सुनने योग्यायोग्य कौन है.

इन आठोंही भांगामें जो भंग क्रिया रहित (संयमरहित) है वे सर्व त्यागने योग्य है, और जो भंग सम्यक् क्रिया सहित है वे आदरने योग्य है, परंतु तिनमें भी जो उपदेश विकल भंगहै वे स्वतारकभी है, तोभी परकों नही तारसक्के है,

और जे जंग अशुद्धोपदेशक है, वेता अपनेकों और श्रोताकों संसार समुद्रमें मबोनेही वाले है, इस वास्ते सर्वथा त्यागने योग्य है, और शुद्धोप देशक, क्रियावान् पक्ष कोकिलाके दृष्टांत सूचित अंगीकार करने योग्य है त्रीक योगवाला पक्ष तोतेके दृष्टांत सूचित सर्वसें उत्तमहै । और शुद्ध प्ररूपक पासत्थादि चारोंके पास उपदेश सुनना जी शुद्ध गुरुके अन्नावसें अपवादमें सम्मत है.

प्र. १६०–इस जगतमें धर्म कितने प्रकारके और कैसी उपमासें जानने चाहिये.

उ. इस प्रश्नोत्तरका स्वरुप नीचेके लिखे यंत्रसें जानना धर्म पांच प्रकारका है.

एक धर्म कं | इस वन समान नास्तिक मतियों
थेरी वन स | का माना हुआ धर्म है सर्वथा श्रो-
मानहै, जैसं | कालाजी शुज फल नही देता है

कंथेरीवननिष्फल है. सर्व प्रकारसें केवल कांटो करके व्याप्तहोनेरें लोकांको विदारणादि अनर्थ जनक होता है, और तिस वनमे प्रवेशनिगमनभी दुष्कर है ॥१॥

और परभवमें नरकादि गतियोंमें दुख अनर्थको देता है, और इस लोकमें लोक निंदा ! धिक्कार नृप दंडादिके भयसें इस कुकर्मी नास्तिक मतमें प्रवेश करना मुशकल है. और जो इस मतमें प्रवेश कर गये है, तिनकों स्व इछानुसार मद्य मांसादि भक्षण मात, बहिन, बेटीकी अपेक्षा रहित स्त्रीयोंसें भोगादि विषयके सुस्वादके सुखकी लंपटतासें तिस नास्तिक मतमेंसें निकलनाभी मुशकल है, इस वास्ते यह धर्म सर्वथा सुज्ञ जनोको त्यागने योग्यहै, इस मतमें धर्मके लक्षणतो नहीहै, परंतु तिसके माननेवाले लोकोने धर्म मान रक्खा

है, इस वास्ते इसका नामभी धर्मही
लिखाहै॥ इति प्रथम धर्म भेद ॥१॥

एकधर्मशमी
खेजडी बंबू
ल कीकर ख
दिर बेरीकरी
रादि करके
मिश्रित वन
समानहै यह
वन विशिष्ट
शुभ फल न
ही देता है
किंतु सांगरी
बब्बूल फला
दि सामान्य

इस वन समान बौद्धांका धर्म है.
क्योंकि ब्रह्मचर्यादि कितनीक सत्
क्रिया और ध्यान योगाभ्यासादिकके
करनेसें मरां पीछे व्यंतर देवताकी ग
तिमें उत्पन्न होनेसें कुछक शुभ सुख
रूप फल भोगमें देताहै, तथा चोक्तं
बौद्ध शास्त्रे ॥मृद्वीशय्या प्रातरुत्थाय
पेया॥ भक्तं मध्ये पानकंचा पराह्ने॥
द्राक्षा पाणं शर्करामा र्द्धरात्रौ॥ मोक्ष
श्चांते शाक्य पुत्रेण दृष्टः॥१॥ मणुन्न
भोयणं, भुच्चा, मणुन्न सयणासणं
मणुन्नं, सिअगारंसि मणुन्नं, झायए
मुणी ॥२॥ इत्यादि॥ बौद्ध मतके शा

नीरसफल दे
तेहै, सांगरी
पक्षी शुष्क
हुइ होइ किं
चित् प्रथम
खाते हूए मी
ठी लगती है
परंतु कंटका
कीर्ण होनेसें
विदारणादि
अनर्थका हेतु
होवेहै ॥२॥

स्वानुसारे अपने शरीरकों पुष्टकरनां,
मनके अनुकूल आहार शय्यादिकके
भोगसें और बौद्धभिक्षुके पात्रमें कोइ
मांस दे देवे तो तिसकोभी खा लेनां
स्नानादिकके करनेसें पांचोइंद्रियोंके
पोषनरूप और तप न करनेसें आ-
दिमें तो मीठा (अच्छा) लगता है, प-
रंतु भवांतरमें दुर्गति आदिक अनर्थ
फल उत्पन्न करताहै, इस वास्तै यह
धर्मभी त्यागने योग्य है॥ इति दूस-
रा धर्म भेद ॥ २ ॥

एक धर्म पर्व
तके वनतथा
जंगली वन

इस वन समान तापस १ नैयायिक
वैशेषिक, जैमनीय, सांख्य, वैश्नवआ
दि आश्रित सर्व लौकिक धर्म और

समानहै,इस
वनमें थोहर,
कंथेरी कुमा
र प्रमुखके फ
ल देनेवालेवृ
क्षहै औरकं-
टकादिसें वि
दारण करणे
सें अनर्थके-
भी जनकहै
१ औरकित-
नेक धव स
ल्लकीके सुप-
लाश पनस
र्ज तमादि वृ

चरक परिव्राजक इनके विचित्र पणे-
सें विचित्र प्रकारका फलहै सोइ दि-
खातेहै, कितनेक वेदोक्त महा यज्ञ,
पशुवधरूप स्नान होमादि करके धर्म
मानतेहै, वे कंथेरी वनवत् है. परभ-
वमें अनर्थरूप जिनका प्राये फल हो-
वेगा. और कितनेक तो तुरमणीश
दत्तराजाकी तरे निकेवल नरकादि
फलवाले होते है। तथा चोक्तं आर-
ण्यके ॥ येवैइहयथा २ यज्ञेपुपशुनिश
संतितितथा २ इत्यादि ॥ तथाशुकसं-
वादे ॥यूपं छित्त्वा, पशून् हत्वा, कृत्वा
रुधिर कर्दमं, यद्येवं गम्यते स्वर्गे नर
के केन गम्यते ॥ १ ॥ स्कंधपुराणे ॥
वृक्षां छित्त्वा, पशून् हत्वा, कृत्वा रु-

कहै, इनकेफ
लतो निःसा
रहै परंतु वि
शिष्ट अनर्थ
जनकनहीहै
२ और कित
नेक वेरी खे
जभी खपरा
दि निःसार·
अशुभफलदेते
हैकंटकोसेंवि
दारणादि अ
निष्टके जन·
कभीहोते है
३औरकितने

धिर कर्दमं, दग्ध्वा वन्हौ तिलाज्यादि
चित्रं,स्वर्गोऽभिलष्यते ॥ १ ॥कितनेक
अपात्रकों अशुद्ध दान गायत्र्यादिके
जापादि धव पलाशादिवत् प्राय फल
देनेवालेभी सामग्री विशेष मिले किं·
चित् फलजनकहै, परं अनर्थ जनक
नही, विवक्षितहैं इस,स्थलमेंप्रतिदिन
लक्ष दान देनेवाला मरके हाथी हूए
सेठवत्, तथा दानशालादि करानेवाले
नंदमणिकारवत् और सेचनक हाथीके
जीव लक्ष भोजी ब्राह्मणवत् दृष्टांत
जानने ॥२॥ कितनेक तो सावद्य (स
पाप) अनुष्ठान, तप, नियम दानादि
अन्यायसें द्रव्योपार्जन करी कुपात्रदा
नादि वेरी खेजडीवत् किंचित् राज्या

क किंपाका-
दि वृक्ष है.
मुख मीठेप-
रिणाममें वि
रस फलके दे
नेवालेहैथकि
तनेकऊंवर
(गूलर) वि-
ल्वादि फल
निःसारशुच्छ
फलवाले कं-
टकादिके अ
भावसें अन
र्थजनकनही
है५कितनेक

दि असार शुभ्र फल दुर्लभ बोधिप-
णा हीन जातित्व परिणाम विरसादि
अनर्थभी देवेहै, कौणिक पिछले भ-
वमें तपस्वीवत् और जैनमति नाम
मिथ्यादृष्टी सुलढादि देव गतिमें गए
बहुल संसारी हूए. वे भी मिथ्या-
तप करनेमें तत्परहूए होए, इसी भंगसें
जानने ॥ ३ ॥ कितनेक किंपाकादिकी
तरं असत् आग्रह देव गुरुके प्रत्यनी-
कादि भाव वाले तथाविध तपोनुष्टा-
नादि करके एकवार स्वर्गादि फल देके
बहुल संसार तिर्यंच नरकादिके दुख
देनेवाले होतेहै, गोशालक, जमालि
आदिवत् ॥४॥ तथा कितनेक भद्रभा
व विशेष पात्र गुणादि परिज्ञान रहि

नारिंग,जंबी
र, करणादि
मध्यम फल
के वृक्षहै,परं
तु अनर्थ ज
नक नहीहै द
कितनेक रा-
यण (खिर-
णी) आंब,
प्रियंगु प्रमु-
ख सरस शु
भ पुष्प फल
वाले है, ये
सर्व मालकी
रहित जानने

त दान पूजादि मिथ्यात्वके रागसें
करतेहै, वे उडुंबरादिवत् किंचित्राज्य
मनुष्यके भोग समग्र्यादि असार शुभ
फलही देतेहै, दूसरेके उपरोधसें दान
देनेवाले सुंदर वाणीयेकीतरें जैनधर्मा
श्रित भी निदान सहीत अविधिसें
तप अनुष्टान दानादि करनेवालेभी
इसी भंगमें जान लेने, चंद्र, सूर्य बहु
पुत्रिकादिके दृष्टांत जान लेने ॥ ५ ॥
कितनेक तापसादिधर्मी बहुत पाप र-
हित तपोनुष्टान कंदमूल फलादि स-
चित्त भोजन करनेवाले अल्प तपवाले
नारंग, जंबीर, करणादि तरुवत् ज्यो
तिषि भवनपत्यादि त्रि मध्यम देवर्द्धि
फलदायीहै. श्री वीर पिछले भवोंमें

७ एसें तार तम्यतासें अ धम, मध्यम उत्तम वृक्षों की विचित्र तासें पर्वतके वनोंकी भी विचित्रताजा ननी ॥ ३ ॥	परिव्राजक पूर्ण तापसवत् तथा जैन नति सरोस गोरव प्रमाद संयमीआ दि रुकी वध करनेवाले क्षपक मुनि मंगु आचार्यादिवत् ॥ ६ ॥ कितनेक तामलि ऋषिकी तरें उग्र तप करने वाले चरक परिव्राजकादि धर्मवाले आंबादि वृक्षोंवत् ब्रह्मदेवलोकावधि सुख फल देतेहै ॥७॥ ये सर्व पर्वतके वन समान कथन करे, परंतु सम्यग् दृष्टीकों ये सर्व त्यागने योग्यहै ॥ इति तीसरा धर्म भेद ॥ ३ ॥
एक धर्म नृ पवन समान श्रावक धर्महै राजके वनमें	इस वन समानश्राद्ध(श्रावक)धर्म सम्यक्त्व पूर्वक बारांव्रताकी अपेक्षा तरासौकरोड़ अधिक भेद होनेसें त्रि चित्र प्रकारका सम्यग् गुरु समीपे अं-

अंब, जंबू रा-
जादनादि ज
घन्य वृक्ष है
कला, नाली
केर, सोपारी
आदि मध्यम
माधवी लता
तमाल एला,
लवंग चंदना
गुरुतगरा दय
उत्तम चंपक
राज चंपक
जाति पाढ-
लादि फूल त
रु विचित्र है,

गीकार करनेसें परिगृहीतहै, अज्ञान
मए लोकिक धर्मसें अधिकहै, और अ
तिचार विषय कषायादि चौर श्वाप-
दादिकोंसें सुरक्षितहै, और गुरु उप-
देश आगमाभ्यासादि करके सदा सु-
सिंच्य मानेहै, सो धर्म देवलोकके
सुख जघन्य फल है, सुलभबोधि
होनेसें और निश्चित जलदी सिद्धि सु-
खांके देनेवाले होनेसें और मिथ्या-
त्वीके सुखास बहुत सुलग आनंदा
दि श्रावकोंकी तरें देतेहै, और उत्क-
र्षसें तो जीर्ण सेठादिकी तरें बारमे
अच्युत देवलोकके सुख देतेहै ॥ इस
वास्ते बारांव्रत रूप श्राद्ध (श्रावक)
धर्म यत्नसें अंगीकार गृहस्थ लोकोंने

ये सर्व गिरि वनके वृक्षोंसें सींचे, पाले हुए होनेसें अधिक फल, पत्र पुष्पवाले है, सदा सरस बहु मोले फलादि देते है ॥ ४ ॥

करनां, और अधिक अधिक शुद्धता-
वोंसें पालनां आराधनां चाहिये ॥
इति चौथा धर्म भेद ॥ ४ ॥

एक धर्म देवताके वन समान साधु धर्म है, देवताके वनमें देव

इस वन समान चारित्र धर्मकी पु-
लाक बकुश कुशील निर्ग्रंथ स्नातका-
दि विचित्र भेदमय है, विराधक आ-
धक साधुयोंका धर्म तीसरे मिथ्यात्व
धर्ममें ग्रह करनेसें इस धर्ममें अवि-

ता।ओं।की तार
ताम्यतासें ऋ
द्धि मानोंके
क्रीडा करनेके
नंदन वनादि
मनी राजा-
वनवत् ज
घन्य मध्यम
उत्तमवृक्ष हो
तेहै,सर्व ऋतु
के फलवान्
वृक्षोंके होने
सें और देव
ता।के प्रभाव
सें सर्व रोग

राधक यति धर्मवाले जाननें, तिनकों जघन्य सौधर्म देवलोकके सुखरूप फलहै. आराधिक श्रावक धर्मवालेसें अधिक और बारा कल्प देवलोक, नव ग्रैवेयकादि मध्यम सुख और उत्कृष्टतो अनुत्तर विमानके सुख संसारिक और संसारातीत मोक्ष फल देतेहैं, इस वास्ते यह धर्म सर्व शक्तिसें उत्तरोत्तर अधिक अधिक आराधना चाहिये, यह सर्व धर्मोंसें उत्तम धर्म है, यह कथन उपदेश रत्नाकरमें किंचित् लिखाहै ॥

विपादि दूर
करें. मनचिं-
तित रूप क-
रण जरा प-
लित नाशक
इत्यादि वहु
प्रभाव वाली
उपचीयांपत्र
फलादिकरके
संयुक्त है पि-
छले सर्व व-
नोसें यह प्र-
धान वन है॥ इति पांचमा धर्म भेद ॥ ५ ॥

प्र. १६१–जो जैनमतमें राजे जैनधर्मी होते होवेंगे, वे जैनधर्म क्योंकर पाल शक्ते होवेंगे, क्योंकि जैनधर्म राज्यधर्मका विरोधी हमकों मालुम होताहै.

उ–गृहस्थावस्थाका जैनधर्म राज्यधर्म (राज्यनीति) का विरोधी नही है. क्योंकि राज्यधर्म चौर यार खूनी असत्यभाषी प्रमुखाकों कायदे मूजब दंड देनाहै. इस राज्यनीतिका जैनराजाके प्रथम स्थूल जीवहिंसा रूप वृतका विरोध नही है, क्योंकि प्रथम व्रतमें निरपराधिकों नही मारना ऐसा त्याग है, और चौर यार खूनी असत्य भाषी आदिक अन्याय करनेवालेतो राजाके अपराधि है, इस वास्ते तिनके यथार्थ दंड देनेसें जैन धर्मी राजाका प्रथम व्रत भंग नही होताहै, इसी तरें अपने अपराधि राजाके साथ लडाइ करनेसें

भी व्रत भंग नही होताहै. चेटक महाराजसंप्र॰
ति कुमारपालादिवत्, और जैनधर्मी राजे वारां॰
व्रतरूप गृहस्थका धर्म बहुत अच्छी तरेसें पालते थे,
जैसें राजा कुमारपालने पाले.

प्र. १६१–कुमारपाल राजाने वारांव्रत किस
तरेंके करे और पाले थे.

उ.–श्री कुमारपाल राजाके श्री सम्यक्त
मूल वारांव्रत पालनके थे ॥ त्रिकाल जिन पूजा
१ अष्टमी चतुर्दशीमें पोषधोपवासके पारणेमें जो
देखनेमें कोइ पुरुष आया तिसकों यथार्थ वृत्ति
दान देकर संतोष करनां २ और जो कुमारपा-
लके साथ पोषध करते थे तिनको अपने आवासमें
पारणा करानां ३ टूटे हुए साधर्मिकका उद्धार क
रनां, एक हजार दीनार देना ४ एक वर्षमें साध
र्मियोंकों एककरोम दीनार देने, ऐसें चौदह वर्ष

में चौदह करोम दीनार दीने ५ अठानवे लाख ए८ रूपक उचित दानमें दीने, बहत्तर ७२ लक्ष रूपक इव्यके पत्र निसंतान होनेवालीके फाम्हे ७ इक्कीस २१ कोश (ज्ञानज्रंमार) लिखवाए ८ नित्य प्रतें श्री त्रिज्रुवनपाल विहार (जो कुमारपालने ठान वे ए६ करोम रूपकके खरचसें जिन मंदिर बनवाया था) तिसमें स्नात्रोत्सव करनां ए श्री हेमचंद्रसूरिके चरणोंमे द्वादशावर्त्त वंदन करनां १० पीछे क्रमसें सर्व साधुयोकों वंदन करनां ११ जिस श्रावकने पहिलां पोषधादि व्रत करे होवे तिसको वंदन, मान, दानादि करनां १२ अठारह देशोमे अमारीपटह कराया १३ न्याय घंटा बजानां १४ और अठारह देशोके सिवाय अन्य चौदह देशोमें धनबलसें मैत्रीबलसें जीव रक्षाका कराना १५ चौदहसौ चौमालीस १४४४ नवीन जिन मंदिर

वनवाए १६ सोलसौ १६०० जीर्ण जिन मंदिरो-का उद्धार कराया १७ सातवार तीर्थ यात्रा करी १८ ऐसे अम्यक्तकी आराधना करी ॥ पहिले वृ-तमे सपराधी विना मारो ऐसे शब्दके कहनेसे एक उपवास करनां १ दूसरे व्रतमें भूलसें जुठ बोला जावे तो आचाम्लादि तप करना २ तीसरे व्रतमें निसंतान मरेका धन नही लेनां ३ चौथे व्रतमें जैनी हुआ पीछे विवाह करणेका त्याग और चौमासेके चार मास त्रिधा शील पालनां, मनसें भंगे एक उपवास करनां वचनसे भंगे एकाचा-म्ल, कायसें भंगे एकाशन. एक परनारी सहोदर विरुद धरनां भोपलदेवी आदि आठों राणीयोंके मरे पीछे प्रधानादिकोंके आग्रहसेंभी विवाह क-रनां नही, ऐसा नियम भंग नही करा. आरात्रि कार्थ सोनमयि भोपलदेवीकी मूर्त्ति करवाइ; श्री

हेमचंद्रसूरिजीए वासक्षेप पूर्वक राजर्षि बिरुद दीना ४ पांचमे वृतमें ७ करोडका सोना, आठ करोमका रूपा, हजार तुला प्रमाण महर्घ्य मणिरत्न, बत्तीस हजार मण घृत, बत्तीस हजार मण तेल, लक्षा शालि चने, जुवार, मूंग प्रमुख धान्योके मूंढक रक्खे पांच लाख ५००००० अश्व, पांचहजार ५०००, हाथी, पांचसौ ५०० ऊंट,घर, हाट, सन्नायान पात्र गाम्फे वाहिनीये सर्व अलग अलग पांचसौ पांचसौ रक्खे. इग्यारेसो हाथी११००, पंचास हजार ५०००० संग्रामी रथ, इग्यारे लाख ११००००० घोम्फे; अगारह लाख १८००००० सुन्नट. ऐसें सर्व सैनका मेल रक्खा. ५ उठे वृतमें वर्षाकालमें पट्टनके परिसरसें अधिक नही जाना ६ सातमें भोगोपन्नोग वृतमें मद्य, मांस, मधु, म्रक्षण, बहुबीज पंचोडुं बरफल; अन्नक, अनंतका

स, घृत पूरादि नियम देवताके विनां दीना वस्त्र, फल आहारादि नही लेनां. सचित्त वस्तुमें एक पानकी जाति तिसके बीडे आठ; रात्रिमें चारों आहारका त्याग. वर्षाकालमें एक घृत विकृती लेनी, हरित शाक सर्वका त्याग. सदा एकाशनक करनां, पर्वके दिन अब्रह्मचर्य सर्व सचित विगय- का त्याग ७ आठमें वृतमें सातों कुव्यसन अपने देशसें काढ देने, ८ नवमें वृतमें उजय काल सा- मायिक करनां, तिसके करे हुइ श्रीहेमचंद्रसूरिके विना अन्य जनसें बोलनां नही. दिनप्रते १२ प्र- काश योग शास्त्रके २० वीस वीतराग स्तोत्रके प- ढने ए. दशमें वृतमें चतुर्मासेमें शत्रू ऊपर चढाइ नही करनी १० पोषधोपवासमें रात्रिमें कायोत्स र्ग करनां, पोषधके पारणे सर्व पोषध करनेवालों कों नोजन करानां ११ अतिथी संविज्ञाग वृतमें

दुखिये साधर्मि श्रावक लोकांका, ७२ लक्ष द्रव्य का कर छोमनां, श्री हेमचंद्रसूरिके उत्तरनेकी धर्मशालामें जो मुखवस्त्रिकाका प्रतिलेखक साधार्मिकों ५०० पांचसौ घोमे और बारां गामका स्वामी करा, सर्व मुख वस्त्रिकाके प्रतिलेखकांकों. ५०० पांचसौ गाम दीने १४ इत्यादि अनेक प्रकारकी शुभकरणी विवेक शिरोमणि कुमारपाल राजाने करीथी. यह गुरु १ धर्म २ और कुमारपालके वृत्तांके स्वरूप उपदेश रत्नाकरसें लिखे है.

प्र. १६२—इस हिंदुस्थानमें जितने पंथ चल रहेहै, वे प्रथम पीछे किस क्रमसें हूएहै, जैसें आपके जाननेमें होवे तैसें लिख दीजिये ?

उ.—प्रथम ऋषभदेवसें जैनधर्म चला१ पीछे सांख्यमत २ पीछे वैदिक कर्म कांमका ३ पीछे वे

दांत मत ४ पीछे पातंजलि मत ५ पीछे नैयायिक मत ६ पीछे बौद्धमत ७ पीछे वैशेषिक मत ८ पीछे शैव मत ९ पीछे वामीयोंका मत १० पीछे रामानुज मत ११ पीछे मध्व १२ पीछे निंबार्क १३ पीछे कबीर मत १४ पीछे नानक मत १५ पीछे वल्लभ मत १६ पीछे दादुमत १७ पीछे रामानंदीयोंका मत १८ पीछे स्वामिनारायणका मत १९ पीछे ब्रह्म समाज मत २० पीछे आर्या समाज मत दयानंद सरस्वतीने स्थापन करा. २१ इस कथनमें जैनमतके शास्त्र १ वेदव्याप्य २ दंत कथा ३ इतिहासके पुस्तकादिकोंका प्रमाण है ॥

इत्यलम् ॥ अहमदावादका वासी और पालणपुरमें न्यायाधीश राज्याधिकारी श्रावक गिरधरलाल हीराभाइ कृत कितनेक प्रश्न तिनके उत्तर पालिताणेमें चार प्रकार महा संघके समुदायने श्रा-

चार्य पद दत्त नाम विजयानंद सूरि अपर प्रसिद्ध नाम आत्माराम मुनि कृत समाप्त हुएहै ॥ इन सर्व प्रश्नोत्तरोंमें जो वचन जिनागम विरुद्ध भूल सें लिखा होवे तिसका मिथ्या दुःकृत देता हुं॥ सर्व सुज्ञ जन आगमानुसार सुधारके लिख दीजो, और मेरे कहे उत्सूत्रका अपराध माफ करजो॥ इति प्रश्नोत्तरावलि नाम ग्रंथ समाप्तम्.

(अथ गुरु प्रशस्तिः)

(अनुष्टुप् वृत्तम्–)

श्रीमद्वीर जिनेशस्य शिष्य रत्नेषु ह्युत्तमः
सुधर्म इति नाम्नाऽभूत् पंचमः गणभृत् सुधीः १
अयमेव तपागच्छ महाशेर्मूलमुच्चकैः

ज्ञेयः पौरस्त्यपट्टस्य भूषणं वाग्विभूषणं १
परंपरायां तस्यासीत् शासनोत्तेजकः प्रधीः
श्रीमद्विजयसिंहाव्हः कर्मठः धर्म कर्मणि— २
तस्य पट्टांबरे चंद्रः विजयः सत्यपूर्वकः
अभूत् श्रेष्ठ गुणग्रामैः संसेव्यः निखिलै जैनैः ४
पट्टे तदीयके श्रीमत् कर्पूरविजयाभिधः
आसीत् सुयशाः ज्ञान क्रिया पात्रं सदोद्यमः ५
तत्पट्ट वंश मुक्तासु मणिरिवेप्सितप्रदः
सिद्धांत हेमनिकषः क्षमा विजय इत्यभूत् ६
जिनोत्तम पद्म रूप कीर्त्ति कस्तूर पूर्वकाः
विजयांता क्रमेणैते बभूवुर्बुद्धिसागराः ७
तस्य पट्टाकरे चिंता मणिरिवेप्सितप्रदः
मणिविजय नामाऽभूत् घोरेण तपसाकृशः ८
ततोऽभूत् बुद्धि विजयः बुध्यष्टगुणगुम्फितः
प्रस्तुतस्या स्मदीयस्य गच्छवर्यस्य नायकः ९

चक्रे शिष्येण तस्येयं जैन प्रश्नोत्तरावली
सद्युक्त्या श्रीमदानंद विजयेन सविस्तरा १०

संवत् बाण[५] युगां[४]ऽकें[९] दुः[१] पोष मास्यऽसितछदे
त्रयोदश्यां तिथौ रम्ये वासरे मंगलात्मनि ११

पल्लवि पार्श्वनाथाऽधिष्ठिते प्रल्हादनेपुरे
स्थित्वाऽयं पूर्णतांनीतः ग्रंथः प्रश्नोत्तरात्मकः १२